जुलाई, 2021
I.S.S.N. : 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

प्रधान संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय

संपादक

श्री कमला कान्त
श्री अविनाश शुक्ला
श्री असलम खान

सहायक संपादक

श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक

श्री महीपाल सिंह
श्री जसवन्त सिंह

ISSN-2457-0478

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 125/-

वार्षिक : ₹ 1,300/-

© 2021 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा.................................. द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

जुलाई, 2021 अंक - 7

प्रधान संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय

संपादक

असलम खान

सत्यमेव जयते

विधि साहित्य प्रकाशन

(2021) 2 सि. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन

विधायी विभाग

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on

Website → https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001.

दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

विधि क्षेत्र में कार्य करने वाले लोगों अर्थात् छात्रों, अध्यापकों, कानूनी सलाहकारों तथा मुकदमेबाजों का संबंध "वकील" शब्द से अत्यधिक होता है । "वकील" मूलतः अरबी भाषा का शब्द है जिसका प्रयोग फारसी, तुर्की, और हिन्दी-उर्दू मिश्रित भाषा में भी किया जाता है । "वकील" का शाब्दिक अर्थ अभिकर्ता, विश्वसनीय प्रतिनिधि, परामर्शी या सलाहकार होता है । वकील से ही "वकालत" (विधि व्यवसाय) और "वकालतनामा" (वह पत्र जिसके अधीन एक मुवक्किल अपने अधिवक्ता को मुक़दमा लड़ने के लिए प्राधिकृत करता है) बना है । "वकालतनामा" उर्दू भाषा का ऐसा शब्द है जिसका प्रयोग छोटे से छोटे न्यायालय से लेकर सर्वोच्च न्यायालय तक आज भी किया जाता है । हमारी राजभाषा हिन्दी का यही विशेष गुण है कि अन्य भाषाओं को भी अपने अन्दर बखूबी समा लेती है । हमें "वकील" शब्द से जुड़े कई और शब्द भी सुनने और पढ़ने को मिलते हैं जिनका सही अर्थ जानना हमारे पाठकों के लिए लाभकारी होगा । सुविधा के लिए यहां अंग्रेजी के कुछ शब्दों का लिप्यंतरण करके उन्हें ज्यों का त्यों लिखा जा रहा है । विधि स्नातक (एलएल.बी.) की डिग्री पास कर लेने वाले व्यक्ति को हम "विधिज्ञ/विधिवक्ता" या "लॉयर" कहते हैं । विधि स्नातक की डिग्री यदि इंग्लैंड से प्राप्त की जाती है तब वह डिग्रीधारी "बैरिस्टर" कहलाता है । "विधिज्ञ" जब बार काउंसिल ऑफ इंडिया की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद किसी भी राज्य की बार काउंसिल में अपना पंजीकरण करा लेता है तब वह "एडवोकेट" कहलाता है जैसे हम अधिवक्ता अधिनियम, 1961 के अधीन "अधिवक्ता" कहते हैं जो भारत के किसी भी न्यायालय में अपने मुवक्किल (क्लाइंट) की ओर से मुकदमा लड़ सकता है । ऐसा "लॉयर" अर्थात् "विधिवक्ता" जिसने किसी भी स्टेट बार काउंसिल में अपना पंजीकरण नहीं कराया है उसे एडवोकेट (अधिवक्ता) नहीं कहा जा सकता और वह न्यायालय में अपने मुवक्किल की ओर से मुकदमा भी नहीं लड़ सकता । अधिवक्ताओं में एक वर्ग "सीनियर एडवोकेट" यानी "ज्येष्ठ अधिवक्ता" का होता है । यह एक ऐसी उपाधि है जो उच्च न्यायालय या

उच्चतम न्यायालय द्‌वारा ऐसे अधिवक्ताओं को दी जाती है जिनका विधि व्यवसाय में अनुभव 10 वर्ष और आयु 45 वर्ष से कम न हो । इसके बाद "एडवोकेट ऑन रिकॉर्ड" अर्थात् "अभिलेख अधिवक्ता" का नाम आता है । ऐसे अधिवक्ता का अनुभव कम से कम 5 वर्ष होता है जिसमें 1 वर्ष का अनुभव अभिलेख अधिवक्ता के अधीन किए गए कार्य का होना चाहिए । केंद्रीय सरकार की ओर से उच्चतम न्यायालय में पूरे देश का प्रतिनिधित्व करने वाला अधिवक्ता "महान्यायवादी" और "महान्यायवादी" की सहायता करने वाला अधिवक्ता "महासालिसिटर" कहलाता है । राज्य सरकार की ओर से पेश होने वाला अधिवक्ता "महाधिवक्ता" कहलाता है । "पब्लिक प्रॉसिक्यूटर" अर्थात् "लोक अभियोजक" दांडिक/आपराधिक मामलों में आहत की ओर से सरकार का प्रतिनिधित्व करता है जबकि "गवर्नमेंट प्लीडर" सिविल मामलों में सरकार की ओर से पेश होता है ।

इस अंक में केन्द्रीय अधिनियम पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 के अतिरिक्त अन्य ज्ञानवर्धक सामग्री भी है जिसका आप परिशीलन करें और अपने अमूल्य सुझावों से अवगत कराएं । यह अंक विधि-विद्‌यार्थियों, वकीलों, न्यायाधीशों, विधि-अध्यापकों तथा विधि के ज्ञान में रुचि रखने वाले पाठकों के लिए पर्याप्त रूप से लाभकारी है ।

असलम खान
संपादक

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

जुलाई, 2021

निर्णय-सूची

पृष्ठ संख्या

अनिल कुमार तिवारी और एक अन्य **बनाम** झारखंड राज्य और एक अन्य 98

अमी रंजन **बनाम** हरियाणा राज्य 107

गौतम महन्ती **बनाम** जयश्री महन्ती 49

चमन लाल **बनाम** द्रोपदी और अन्य 135

प्राची **बनाम** शैलेन्द्र कुमार 1

भीष्म लाल बनछोड़ **बनाम** छत्तीसगढ़ राज्य और अन्य 39

रूबी बोराह **बनाम** भारतीय जीवन बीमा निगम और अन्य 29

संसद् के अधिनियम

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ 1 – 18

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

बीमा अधिनियम, 1938 (1938 का 4)

– धारा 39 [सपठित संविधान, 1950 का अनुच्छेद 14] – पॉलिसीधारी द्‌वारा नामनिर्देशन – पॉलिसी में याची का नाम न पाया जाना – पुत्री के जन्म प्रमाणपत्र से याची के नाम की पुष्टि होना – याची का वैध रूप से विवाहित पत्नी होना – याची मृतक की वैध रूप से विवाहित पत्नी है और उसका नाम उसकी पुत्री के जन्म प्रमाणपत्र से भी साबित होता है तथा उसके नामनिर्देशिती होने पर कोई विवाद भी नहीं है, इसलिए बीमे की राशि याची को ही दी जाएगी और यदि इस धनराशि को पाने के लिए किसी व्यक्ति द्‌वारा कोई कार्यवाही संस्थित की जाती है तो राशि का विभाजन समुचित न्यायालय द्‌वारा ही किया जाएगा ।

रूबी बोराह बनाम **भारतीय जीवन बीमा निगम और अन्य** 29

माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण तथा कल्याण अधिनियम, 2007 (2007 का 56)

– धारा 22(2) – वरिष्ठ नागरिकों के प्राण और संपत्ति की संरक्षा – पुत्र और पुत्रवधू अर्थात् याचियों की बेदखली का आवेदन फाइल किया जाना – याचियों द्‌वारा प्रत्यर्थी/वरिष्ठ नागरिक के साथ दुर्व्यवहार किया जाना – पुत्र/याची की आर्थिक स्थिति का दुर्बल पाया जाना – प्रश्नगत क्वार्टर प्रत्यर्थी की स्व-अर्जित संपत्ति है जिसमें रहने के लिए पुत्र अपनी निर्धनता का अवलंब नहीं ले सकता, साथ ही पुत्रवधू के साथ दुर्व्यवहार किए जाने का भी कोई साक्ष्य नहीं है, अतः पुत्र और पुत्रवधू

पृष्ठ संख्या

को संपत्ति से बेदखल किए जाने के निचले न्यायलय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

अनिल कुमार तिवारी और एक अन्य बनाम **झारखंड राज्य और एक अन्य** 98

– धारा 23 [सपठित छत्तीसगढ़ किराया नियंत्रण अधिनियम, 2011, उपखंड (ज)] – अपीलार्थी/वरिष्ठ नागरिक द्वारा किराएदार के विरुद्ध बेदखली कार्यवाही अधिनियम, 2007 के अधीन किया जाना – जिला मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान न लिया जाना – अपीलार्थी द्वारा एकल न्यायाधीश के समक्ष रिट फाइल किया जाना – रिट का खारिज होना – रिट के आदेश के विरुद्ध खंड न्यायपीठ के समक्ष अपील किया जाना – अपील का खारिज होना – हस्तांतरण की कोटि में न आने वाले लेनदेन को अधिनियम, 2007 की धारा 23 नहीं अपितु अधिनियम, 2011 की अनुसूची 2 के खंड 11 का उपखंड (ज) लागू होगा जिसके अधीन वरिष्ठ नागरिक किराएदार को एक महीने का नोटिस देकर बेदखल कर सकता है, अधिनियम, 2007 ऐसी स्थिति को लागू नहीं होगा जहां किराएदार के कब्जे में वरिष्ठ नागरिक की संपत्ति है क्योंकि किराएदारी का अर्थ संपत्ति का अंतरण नहीं है और किराएदार अंतरिती नहीं है और इसीलिए भरणपोषण प्राप्त करने का अधिकार वरिष्ठ नागरिक के बेदखल करने या किराए की बकाया राशि प्राप्त करने के बराबर नहीं हो सकता, अत: जिला मजिस्ट्रेट और एकल न्यायाधीश के आदेश में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

भीष्म लाल बनछोड़ बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य और अन्य** 39

पृष्ठ संख्या

विशेष विवाह अधिनियम, 1954 (1954 का 43)

– धारा 15, 16 और 47 – विवाह का रजिस्ट्रीकरण – विडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से विवाह अधिकारी के कार्यालय में पत्नी की उपस्थिति दर्ज कराए जाने का अभिवाक् – विवाह का गुरुग्राम हरियाणा में संपन्न होना – विवाहोपरांत पत्नी का अमेरिका में कार्यरत होना – पति ने पत्नी की उपस्थिति में पूर्ण छूट दिए जाने की ईप्सा नहीं की है अपितु विडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से उसकी उपस्थित स्वीकार किए जाने की प्रार्थना की है जिसे इस शर्त पर अनुज्ञात किया जा सकता है कि पति अपने साथ तीन साक्षी लेकर विवाह अधिकारी के कार्यालय में उपस्थित होगा और तथ्यों के सत्यापन के पश्चात् पति-पत्नी को विवाह प्रमाणपत्र जारी किया जा सकता है ; अतः, एकल न्यायाधीश का निर्णय न्यायोचित नहीं है ।

अमी रंजन बनाम **हरियाणा राज्य** 107

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– आदेश 39, नियम 1 और 2 – अस्थायी व्यादेश/आज्ञापक व्यादेश – प्रतिवादी को वाद भूमि पर निर्माण कार्य करने से रोकना – वादी और प्रतिवादी का संयुक्त स्वामी/सह-स्वामी होना – वादी द्वारा संपूर्ण तथ्य प्रकट न किया जाना – अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री नहीं है जिससे यह प्रकट होता हो कि संयुक्त भूमि पर निर्माण कार्य से संबंधित प्रतिवादी के कृत्य से वादी को सारभूत हानि या क्षति पहुंची है, अत: मात्र इस आधार पर कि पक्षकार संयुक्त स्वामी या सह-स्वामी हैं, व्यादेश मंजूर या खारिज नहीं किया जा सकता ।

चमन लाल बनाम **द्रोपदी और अन्य** 135

पृष्ठ संख्या

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25)

– धारा 12 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 का आदेश 6, नियम 4] – विवाह की अकृतता – पत्नी के विरुद्ध कपट कारित किए जाने का पति द्वारा अभिवाक् किया जाना – विवाह के पूर्व या विवाह के समय पत्नी या उसके परिजनों द्वारा पत्नी की बीमारी से वादी-पति को अवगत न कराना – वादी-पति द्वारा वादपत्र में यह उल्लेख नहीं किया गया कि अपीलार्थी-पत्नी द्वारा किस प्रकार कपट कारित किया गया है, अतः पति द्वारा फाइल की गई विवाह-विच्छेद की अर्जी अपास्त किए जाने योग्य नहीं है और इस संबंध में कुटुंब न्यायालय द्वारा विवाह अकृत किए जाने का निर्णय भी न्यायोचित नहीं है ।

प्राची बनाम **शैलेन्द्र कुमार** 1

– धारा 13(1)(i-क) – क्रूरता और अभित्यजन – पत्नी द्वारा पति के विरुद्ध दहेज की मांग के आधार पर क्रूरता का मामला दर्ज किया जाना – आपराधिक मामले में पति और उसके परिजनों की दोषमुक्ति – तत्पश्चात् पति द्वारा पत्नी के विरुद्ध क्रूरता और अभित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद का वाद फाइल किया जाना – पति-पत्नी का एक दूसरे से 22 वर्ष से अधिक समय से अलग-अलग रहना – पत्नी द्वारा पति के विरुद्ध फाइल किए गए आपराधिक मामले में अपीलार्थी-पति और उसके परिजनों की दोषमुक्ति की गई है और प्रत्यर्थी-पत्नी के समक्ष ऐसा कोई युक्तियुक्त कारण नहीं पाया गया है जिसके आधार पर उसका वैवाहिक गृह छोड़कर जाना उचित कहा जा सके ; अतः, पत्नी के विरुद्ध क्रूरता और अभित्यजन के आरोप सिद्ध होते हैं जिनके आधार

पृष्ठ संख्या

पर विवाह विघटन किए जाने योग्य है और निचले न्यायालय का निर्णय न्यायोचित नहीं है ।

गौतम महन्ती बनाम **जयश्री महन्ती** 49

– धारा 24 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125] – अंतरिम भरणपोषण – दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन पहले से भरणपोषण अधिनिर्णीत किया जाना – भरणपोषण की जो राशि अपीलार्थी को पहले से दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन अधिनिर्णीत की गई है वह राशि अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन भरण-पोषण की राशि में समायोजित की जाएगी ।

प्राची बनाम **शैलेन्द्र कुमार** 1

प्राची

बनाम

शैलेन्द्र कुमार

(2011 की प्रथम अपील सं. 40, 2016 की प्रथम अपील सं. 107 और 157)

तारीख 13 सितम्बर, 2019

न्यायमूर्ति सुधीर अग्रवाल और न्यायमूर्ति राजीव मिश्रा

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 12 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 का आदेश 6, नियम 4] – विवाह की अकृतता – पत्नी के विरुद्ध कपट कारित किए जाने का पति द्वारा अभिवाक् किया जाना – विवाह के पूर्व या विवाह के समय पत्नी या उसके परिजनों द्वारा पत्नी की बीमारी से वादी-पति को अवगत न कराना – वादी-पति द्वारा वादपत्र में यह उल्लेख नहीं किया गया कि अपीलार्थी-पत्नी द्वारा किस प्रकार कपट कारित किया गया है, अत: पति द्वारा फाइल की गई विवाह-विच्छेद की अर्जी अपास्त किए जाने योग्य नहीं है और इस संबंध में कुटुंब न्यायालय द्वारा विवाह अकृत किए जाने का निर्णय भी न्यायोचित नहीं है ।

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 – धारा 24 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125] – अंतरिम भरणपोषण – दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन पहले से भरणपोषण अधिनिर्णीत किया जाना – भरण-पोषण की जो राशि अपीलार्थी को पहले से दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन अधिनिर्णीत की गई है वह राशि अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन भरणपोषण की राशि में समायोजित की जाएगी ।

2011 की प्रथम अपील सं. 40 (प्राची बनाम शैलेंद्र कुमार) अपीलार्थी प्राची द्वारा फाइल की गई है जिसमें हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम 1955" कहा गया है) की

धारा 12(1) के अधीन वैवाहिक मामला सं. 37/2002 (शैलेन्द्र कुमार बनाम प्राची) में प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, इलाहाबाद द्वारा पारित तारीख 4 दिसंबर, 2010 के उस निर्णय और तारीख 22 दिसंबर, 2010 की उस डिक्री को चुनौती दी गई है जिसके द्वारा पक्षकारों के मध्य विवाह को अकृत घोषित किया गया है । 2016 की प्रथम अपील सं. 107 (शैलेन्द्र कुमार बनाम प्राची) वादी शैलेन्द्र कुमार द्वारा फाइल कि गई है जिसमें 2002 के वैवाहिक वाद सं. 37 (शैलेन्द्र कुमार बनाम प्राची) में तारीख 4 दिसंबर, 2010 के निर्णय में विवाद्यक सं. 1, 2 और 3 से **संबंधित** प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, इलाहाबाद द्वारा अभिलिखित किए गए निष्कर्षों को चुनौती दी है । 2016 की प्रथम अपील सं. 157 (डा. प्राची शर्मा बनाम शैलेन्द्र कुमार) अपीलार्थी डा. प्राची शर्मा द्वारा फाइल की गई है, जिसके द्वारा 2002 की विवाह अर्जी सं. 37 (शैलेन्द्र कुमार बनाम प्राची) में प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, इलाहाबाद द्वारा तारीख 24 नवम्बर, 2008 को पारित उस आदेश को चुनौती दी गई है जिसके अनुसार 1955 के अधिनियम की धारा 24 (दस्तावेज सं. 47क) के अधीन अपीलार्थी द्वारा फाइल किया गया आवेदन मंजूर किया गया है और वादी को 10,000/- रुपए की समेकित राशि अपीलार्थी को मुकदमा खर्चों के लिए संदाय करने का निर्देश दिया गया है । अपीलार्थी ने भी प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, इलाहाबाद द्वारा तारीख 6 फरवरी, 2009 को पारित उस आदेश को चुनौती दी थी जिसके द्वारा अपीलार्थी की ओर से वह पुनर्विलोकन आवेदन (दस्तावेज सं. 69क) खारिज कर दिया गया था जिसमें तारीख 24 नवंबर, 2008 के आदेश का पुनर्विलोकन करने की ईप्सा की गई थी । कुटुंब न्यायालय के आदेश से व्यथित होकर पत्नी ने अपील सं. 40/2011 और 157/2016 फाइल की और पति ने अपील सं. 107/2016 फाइल की । अपीलों का निपटारा करते हुए,

अभिनिर्धारित – अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने हमारा ध्यान शैलेन्द्र (अभि. सा. 1) के परिसाक्ष्य और तत्पश्चात् डा. प्राची (प्रति. सा. 1) तथा अपीलार्थी के पिता रमेश काला (प्रति. सा. 2), के अभिसाक्ष्य की ओर दिलाया है । प्रति. सा. 2 की मुख्य परीक्षा के परिशीलन से, हम यह पाते हैं कि वादी की ओर से विवाह की कार्यवाही का आरंभ करने और

उसे अंतिम रूप देने का निर्णय उसके पिता द्वारा लिया गया था। तथापि, इसका कारण वादी को मालूम होगा कि उसने अपने पिता को यह स्पष्ट करने के लिए न्यायालय में प्रस्तुत क्यों नहीं किया कि पक्षकारों के मध्य विवाह अंतिम रूप से कैसे तय हुआ था क्योंकि उसी ने पक्षकारों के मध्य विवाह को अंतिम रूप दिया गया था। द्वितीय, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, विवाह अर्जी का वादपत्र वादी द्वारा फाइल किया गया है जिसमे कतई यह उल्लेख नहीं है कि वादी के साथ कैसे कपट कारित किया गया। सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 6, नियम 4 के अधीन स्पष्ट रूप से उस रीति का यह उपबंध किया गया है कि जहां अभिकथित कपट किया गया हो वहां अभिवाक् किस प्रकार किया जाता है। दुर्भाग्य से, हम यह पाते है कि निचले न्यायालय ने विवाह-विच्छेद अर्जी का विनिश्चय करते हुए, पूर्वोक्त तथ्यों को पूर्णतया अनदेखा किया है। यद्दपि वादपत्र इस संबंधित रीति पर पूर्णतया शांत है कि कपट कैसे कारित किया गया था, निचले न्यायालय ने इस विवाद्यक पर विचार किया है। निचले न्यायालय ने इस तथ्य की पूर्ण रूप से अनदेखी की है कि जब तक तथ्य का अभिवाक् नहीं किया जाता है तब तक किसी भी साक्ष्य की जांच नहीं की जा सकती है। एक बार जब विवाह के निपटारे में कपट के तथ्य के बारे में वादी द्वारा अवलम्ब लेने की ईप्सा की गई है, तो स्पष्ट रूप से उसका यह कर्तव्य था कि वह श्रेणीबद्ध अभिवाक् करें कि पक्षकारों के मध्य विवाह को अंतिम रूप कैसे दिया गया और किसके द्वारा दिया गया तथा सटीक तारीख और विशिष्ट विवरण भी दे। इस संबंध में वादी द्वारा वादपत्र में सारवान् तथ्यों की अनुपस्थिति स्पष्ट रूप से यह साबित करती है कि वादी ने ईमानदारी से निचले न्यायालय में समावेदन नहीं किया था। अधिनियम, 1955 की धारा 12 को ध्यान में रखते हुए, हमने बार-बार वादी के विद्वान् काउंसेल से पूछा कि वादी द्वारा विवाह को रद्द करने के लिए जो आधार दिया गया था उसे अधिनियम, 1955 की धारा 12 के अधीन कैसे आच्छादित किया जा सकता है। वादी के विद्वान् काउंसेल ने हमारा ध्यान निचले न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय और किए गए अवलोकनों की ओर दिलाया है, जिसके द्वारा निचले न्यायालय ने यह साबित करने के लिए कि कपट नहीं किया गया था अपीलार्थी पर भार

डालकर गलत किया है । यह सुस्थापित है कि हमेशा यह सकारात्मक तथ्य होता है जिसे साबित किया जाना अपेक्षित है । इसलिए पक्षकारों के बीच अनुष्ठापित हुए विवाह में कपट के तत्व को साबित करने का भार वादी पर ही था । इसलिए वादी को अपना पक्षकथन स्वयं साबित करना होगा और वह प्रतिवादी द्वारा ली गई प्रतिरक्षा में आई कमी का लाभ नहीं ले सकता । जब पूर्वोक्त दृष्टिकोण पर विचार किया जाता है, तो हम यह पाते है कि निचले न्यायालय ने अपीलार्थी पर कपट सिद्ध करने का भार डालकर गलत किया है । इसके अलावा अधिनियम, 1955 की धारा 12 का परिशीलन करने पर हम यह पाते हैं कि पक्षकारों के मध्य अनुष्ठापित विवाह को अकृत करने की डिक्री मंजूर करने के लिए, अपीलार्थी द्वारा अभिवाक् किए गए आधार पर धारा 12 की परिधि के अंर्तगत नहीं आते हैं । जब ऊपर उल्लिखित तथ्यों पर विचार करने के पश्चात् यह पता चलता है कि वादी के विद्वान् काउंसेल ने कोई नई दलील नहीं दी है बल्कि उसमें निहित निष्कर्षों और अवलोकनों के आधार पर ही आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया है । (पैरा 29, 30, 31, 32, 33 और 34)

अधिनियम, 1955 की धारा 24 में ऐसा कोई प्रतिषेध अंतर्विष्ट नहीं है जिसके अधीन दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के अधीन पहले से पारित भरणपोषण के आदेश होने के कारण भरणपोषण से इनकार किया जा सके । इसके प्रतिकूल यह उपबंध किया गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन अधिनिर्णीत भरणपोषण को अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन अधिनिर्णीत भरणपोषण की राशि में समायोजित किया जाएगा । निचले न्यायालय ने पक्षकारों के मामले पर विचार किया । तारीख 24 नवम्बर, 2008 के आदेश द्वारा, केवल मुकदमे पर आई लागत की अनुमति दी है । तारीख 24 नवम्बर, 2008 के आदेश का परिशीलन करने पर, हमारा यह निष्कर्ष है कि निचले न्यायालय ने अपीलार्थी को अंतरिम भरणपोषण मंजूर करने से इनकार करके विधि की दृष्टि से गलत किया है । हमारा यह भी निष्कर्ष है कि निचले न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा फाइल किए गए पुनर्विलोकन आवेदन को इस आधार पर खारिज कर दिया है कि तारीख 24 नवम्बर, 2008 के आदेश में न तो विधिक त्रुटि और न ही इसमें ऐसी कोई कमी

है जिसे देखते ही यह पता चले कि इसका पुनर्विलोकन किया जाए । हमारे मत में निचले न्यायालय इसका मूल्यांकन करने में असफल रहा है कि अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन अधिकारिता दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 की परिधि में नहीं आती है । जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन भरणपोषण की जो भी धनराशि अधिनिर्णीत की गई है वह अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन अधिनिर्णीत भरणपोषण की राशि में समायोजित होगी । परिणामस्वरूप, एतद्द्वारा 2016 की प्रथम अपील संख्या 157 (डा. प्राची शर्मा बनाम डा. शैलेन्द्र कुमार) को आंशिक रूप से मंजूर किया जाता है । इलाहाबाद के कुटुंब न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश द्वारा तारीख 24 नवम्बर, 2008 के पारित आदेश को संशोधित किया जाता है । अपीलार्थी 12,000/- रुपए की दर से मासिक भरणपोषण पाने की हकदार होगी । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन अधिनिर्णीत भरणपोषण की राशि अर्थात् 2,000/- रुपए पूर्वोक्त राशि में समायोजित की जाएगी । वादी को आवेदन की तारीख से 31 अगस्त, 2019 तक अपीलार्थी को पूर्वोक्त राशि संदाय करने का निदेश दिया जाता है । चूंकि हम पहले ही तारीख 24 नवम्बर, 2008 के आदेश को संशोधित कर चुके हैं, इसलिए तारीख 6 फरवरी, 2009 के इस आदेश की वैधता को विनिश्चय करने की आवश्यकता नहीं है, जिसके द्वारा अपीलार्थी की ओर से तारीख 24 नवम्बर, 2008 के पूर्ववर्ती आदेश के पुनर्विलोकन के आवेदन को खारिज कर दिया गया है । (पैरा 39 और 42)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2001] (2001) 4 एस. सी. सी. 125 :
हीराचन्द श्रीनिवास मनगांवकर बनाम **सुनंदा** । 27

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2011 की प्रथम अपील सं. 40, 2016 की प्रथम अपील सं. 107 और 157.

प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, इलाहाबाद के तारीख 4 दिसंबर, 2010 के निर्णय और तारीख 22 दिसंबर, 2010 की डिक्री तथा तारीख 24 नवम्बर, 2008 के आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से	सर्वश्री राकेश पाण्डेय, विष्णु प्रताप पाण्डेय, तेज प्रकाश मिश्रा और तेज प्रकाश
प्रत्यर्थी की ओर से	श्री घनश्याम द्विवेदी और श्री एम. एस. पीपरसानिया

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति राजीव मिश्रा ने दिया ।

न्या. मिश्रा – 2011 की प्रथम अपील सं. 40 (प्राची बनाम शैलेंद्र कुमार) अपीलार्थी प्राची द्वारा फाइल की गई है जिसमें हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम 1955" कहा गया है) की धारा 12(1) के अधीन वैवाहिक मामला सं. 37/2002 (शैलेन्द्र कुमार बनाम प्राची) में प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, इलाहाबाद द्वारा पारित तारीख 4 दिंसबर, 2010 के उस निर्णय और तारीख 22 दिसंबर, 2010 की उस डिक्री को चुनौती दी गई है जिसके द्वारा पक्षकारों के मध्य विवाह को अकृत घोषित किया गया है ।

2. 2016 की प्रथम अपील सं. 107 (शैलेन्द्र कुमार बनाम प्राची) वादी शैलेन्द्र कुमार द्वारा फाइल कि गई है जिसमें 2002 के वैवाहिक वाद सं. 37 (शैलेन्द्र कुमार बनाम प्राची) में तारीख 4 दिसंबर, 2010 के निर्णय में विवाद्यक सं. 1, 2 और 3 से संबंधित प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, इलाहाबाद द्वारा अभिलिखित किए गए निष्कर्षों को चुनौती दी है ।

3. 2016 की प्रथम अपील सं. 157 (डा. प्राची शर्मा बनाम शैलेन्द्र कुमार) अपीलार्थी डा. प्राची शर्मा द्वारा फाइल की गई है, जिसके द्वारा 2002 की विवाह अर्जी सं. 37 (शैलेन्द्र कुमार बनाम प्राची) में प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, इलाहाबाद द्वारा तारीख 24 नवम्बर, 2008 को पारित उस आदेश को चुनौती दी गई है जिसके अनुसार 1955 के अधिनियम की धारा 24 (दस्तावेज सं. 47क) के अधीन अपीलार्थी द्वारा फाइल किया गया आवेदन मंजूर किया गया है और वादी को 10,000/- रुपए की समेकित राशि अपीलार्थी को मुकदमा खर्चों के लिए संदाय करने का निर्देश दिया गया है । अपीलार्थी ने भी प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, इलाहाबाद द्वारा तारीख 6 फरवरी, 2009

को पारित उस आदेश को चुनौती दी थी जिसके द्वारा अपीलार्थी की ओर से वह पुनर्विलोकन आवेदन (दस्तावेज सं. 69क) खारिज कर दिया गया था जिसमें तारीख 24 नवंबर, 2008 के आदेश का पुनर्विलोकन करने की ईप्सा की गई थी ।

4. हमने 2016 की प्रथम अपील सं. 157 (डा. प्राची शर्मा बनाम डा. शैलेन्द्र कुमार) में प्रतिवादी/अपीलार्थी प्राची के विद्वान् काउंसेल श्री तेज प्रकाश मिश्रा और वादी शैलेन्द्र कुमार के विद्वान् काउंसेल श्री घनश्याम द्विवेदी, और 2016 की प्रथम अपील सं. 107 (शैलेन्द्र कुमार बनाम प्राची) में प्रतिवादी-प्रत्यर्थी प्राची के विद्वान् काउंसेल श्री राकेश पांडेय और वादी अपीलार्थी शैलेन्द्र कुमार के विद्वान् काउंसेल श्री घनश्याम द्विवेदी, वादी-अपीलार्थी डा. प्राची मिश्रा के विद्वान् काउंसेल श्री विष्णु प्रताप पाण्डेय का संक्षिप्त अवधारण में करने वाले श्री राजेश कुमार त्रिपाठी अधिवक्ता तथा और श्री घनश्याम द्विवेदी जिन्होंने 2011 की प्रथम अपील सं. 40 (प्राची-शैलेन्द्र कुमार) में प्रतिवादी-प्रत्यर्थी का प्रतिनिधित्व किया है, को सुना है । हम इसमें इसके पश्चात् डा. प्राची शर्मा को अपीलार्थी के रूप में और शैलेन्द्र कुमार को वादी के रूप में निर्दिष्ट करेगें ।

5. वादपत्र के अभिकथनों के अनुसार, अपीलार्थी प्राची का विवाह हिन्दू रीति-रिवाजों के अनुसार इलाहाबाद में तारीख 27 नवम्बर, 2002 को वादी शैलेन्द्र कुमार के साथ अनुष्ठापित हुआ था । वादी के अनुसार, विवाह के बाद पक्षकारों के मध्य कभी शारीरिक संबंध नहीं बने और इस प्रकार पूर्वोक्त विवाह के बाद कोई बच्चा पैदा नहीं हुआ । एक वर्ष और कुछ दिनों की अवधि बीत जाने के पश्चात्, वादी डा. शैलेन्द्र कुमार ने पक्षकारों के विवाह को अकृत घोषित करने की डिक्री के लिए 1955 के अधिनियम की धारा 12 के अधीन 2002 की विवाह याचिका सं. 37 (डा. शैलेन्द्र बनाम डा. प्राची शर्मा) फाइल की थी । वादी ने विवाह को अकृत घोषित किए जाने के लिए सात आधार लिए थे । वादी के अनुसार, अपीलार्थी की चक्षु-दृष्टि बहुत कमजोर है और वह चश्मा पहने बिना अपना घरेलू कार्य नहीं कर सकती । पूर्वोक्त तथ्य को विवाह के समय पर अपीलार्थी के माता-पिता ने छिपाया था । अपीलार्थी दांतों की लाइलाज बीमारी से भी पीड़ित है । अभिकथित रूप से उसे पायरिया और

आंतों की झिल्ली का रोग हो गया था । उक्त तथ्य को विवाह से पूर्व और विवाह के समय भी छिपाया गया था । अपीलार्थी विवाह से पूर्व और विवाह के समय भी पीलिया और पेट के दर्द से पीड़ित थी । पक्षकारों का विवाह पूर्वोक्त तथ्य को छिपाते हुए अनुष्ठापित हुआ था । यह भी अभिकथन किया गया है कि अपीलार्थी के माता-पिता ने उसकी आयु को भी छिपाया था क्योंकि विवाह के समय उसकी आयु लगभग 38 वर्ष थी जबकि विवाह के समय पर 30 वर्ष बताया गया था । यह भी अभिवाक् किया है कि विवाह के पश्चात् जब अपीलार्थी, वादी के घर आई तो उसका व्यवहार असाधारण और अप्राकृतिक था जैसे किसी मानसिक रोग से पीड़ित थी । अपीलार्थी विवाह के समय पर क्षयरोग (टी.बी.) से भी पीड़ित थी, जो तथ्य वादी और उसके कुटुंब से छिपाए गए हैं । अंत में, यह अभिवाक् किया गया है कि न तो विवाह से पूर्व और न ही विवाह के समय पर, अपीलार्थी के माता-पिता द्वारा इस बारे में बताया गया कि अपीलार्थी को कम सुनाई देता था और वह सुनने वाली मशीन का प्रयोग करती थी ।

6. 2002 की विवाह अर्जी सं. 37 (डा. शैलेन्द्र कुमार बनाम डा. प्राची शर्मा) में समन जारी किए जाने पर अपीलार्थी उपस्थित हुई थी और अतंरिम भरणपोषण और मुकदमा खर्चे (प्रदर्श सं. 47क) का संदाय करने के लिए अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन एक आवेदन फाइल किया था । पूर्वोक्त आवेदन को तारीख 24 नवम्बर, 2008 के आदेश द्वारा निचले न्यायालय ने आंशिक रूप से मंजूर किया था और अपीलार्थी को मात्र 10,000/- रुपए की राशि मुकदमे के खर्चे हेतु अधिनिर्णीत की थी । चूंकि अंतरिम भरणपोषण का अधिनिर्णय नहीं किया गया था इसलिए उसने तारीख 24 नवम्बर, 2008 के आदेश से व्यथित होकर पुनर्विलोकन आवेदन (प्रदर्श संख्या 69क) फाइल किया था । तथापि, उसे तारीख 6 फरवरी, 2009 के आदेश द्वारा निचले न्यायालय ने खारिज कर दिया । प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, इलाहाबाद द्वारा तारीख 24 नवम्बर, 2008 और तारीख 6 फरवरी, 2009 के आदेश पारित किए गए हैं । इन्हीं आदेशों को अपीलार्थी द्वारा 2016 की प्रथम अपील संख्या 157 (डा. प्राची शर्मा बनाम डा. शैलेन्द्र कुमार) में चुनौती दी गई है ।

7. वादी डा. शैलेन्द्र कुमार द्वारा फाइल किए गए वाद का अपीलार्थी ने विरोध किया । उसने तारीख 18 मई, 2009 को अपना लिखित अभिकथन (प्रदर्श सं. 82क) फाइल किया जिसके द्वारा उसने वादपत्र के आरोपों से इनकार ही नहीं किया बल्कि उसने अतिरिक्त अभिवाक् भी किए । अपीलार्थी के अनुसार स्नातकोत्तर (अर्थशास्त्र) पाठ्यक्रम पूर्ण करने के पश्चात् उसने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अनुसंधान छात्र के रूप में दाखिला लिया और अंततः अपनी थीसिस प्रस्तुत की । तथ्यों से पता चलता है कि अपीलार्थी अविवाहित थी और उसका विवाह तय होना था, वादी के पिता ने स्वयं अपीलार्थी के साथ अपने पुत्र वादी का विवाह प्रस्थापित किया । वादी के पिता ने उसका बायोडाटा भेजा और फोटो के साथ अपीलार्थी का बोयाडाटा भी मांगा । अपीलार्थी के पिता ने वादी के पिता को उसका बायोडाटा और फोटो भेजे । वादी के पिता ने बाद में अपीलार्थी की जन्मपत्री मांगी जिसे विधिवत् रूप से भेजा गया । वादी के पिता ने सूचित किया कि लड़के और लड़की की जन्मपत्री एक-दूसरे के अनुकूल हैं और इस प्रकार वह (वादी के पिता) अपीलार्थी के साथ अपने पुत्र के विवाह के लिए इच्छुक है । पूर्वोक्त के अतिरिक्त, वादी के पिता ने लड़की अर्थात् अपीलार्थी को देखने की इच्छा प्रकट की जो कि अपीलार्थी है । इस प्रकार पूर्वोक्त समारोह नई दिल्ली स्थित एल. 113, सरोजनी नगर में अपीलार्थी के बड़े भाई के किराए के मकान में आयोजित हुआ । उक्त समारोह में वादी के साथ उसके पिता और भाई भी सम्मिलित हुए । उन्होंने अपीलार्थी को देखा था और उसके साथ बातचीत भी की थी । वादी, अपीलार्थी से पृथक् रूप से भी मिला था और उसके साथ बातचीत की थी । अपीलार्थी ने अपनी शैक्षणिक अर्हता और शोध पत्र के बारे में बताया था । आगे चलकर वादी के पिता ने अपीलार्थी के साथ वादी के विवाह के लिए अपनी सहमति दी थी और तारीख 14 जनवरी, 2002 को "बगधान समारोह" आयोजित करने के लिए निर्धारित किया गया, जो पक्षकारों की जाति में विवाहपूर्व महत्वपूर्ण रीति-रिवाज है । तद्नुसार, तारीख 14 जनवरी, 2002 को उक्त समारोह साइंटिफिक अपार्टमेन्ट में संपन्न हुआ था । पूर्वोक्त समारोह में वादी के माता-पिता उसकी भाभी और छोटा भाई सम्मिलित हुए थे । अपनी क्षमता के अनुसार, अपीलार्थी के पिता ने नकद, समान और आभूषण

दिये थे । आदान-प्रदान में वादी के माता-पिता ने अपीलार्थी को एक अंगूठी, दो साड़ी और फल और मिठाईयां दी थीं । इस समारोह में वादी और अपीलार्थी दो घंटे तक एक साथ रहे और उन्होंने एक दूसरे को समझा । वादी के पिता ने अपीलार्थी की शैक्षिक योग्यता से संबधित प्रमाणपत्र और अंक-तालिका भेजने के लिए अपनी इच्छा व्यक्त की । बाद में वादी के पिता ने अपीलार्थी को चंडीगढ़ विश्वविद्यालय में आवेदन करने के लिए आवेदन-पत्र भेजा । चूंकि अपीलार्थी को उस समय तक पी.एच.डी की डिग्री नहीं मिली थी, इसलिए वह आवेदन नहीं कर सकी थी । अपीलार्थी ने किसी भी बीमारी से पीड़ित होने के तथ्य से स्पष्ट रूप से इनकार किया । विवाह से पूर्व वह पीलिया रोग से पीड़ित थी किन्तु उचित चिकित्सा उपचार लेने पर वह स्वस्थ हो गई थी । डाक्टर के परामर्श के अनुसार अपीलार्थी को केवल कमजोरी थी और इसलिए उसे परहेजी भोजन करने की सलाह दी गई थी । उपरोक्त तथ्यों को प्रकट किए जाने और अपीलार्थी के चिकित्सा उपचार से संबंधित दस्तावेज दिखाए जाने पर भी वादी के कुटुंब ने अपीलार्थी को वसायुक्त भोजन दिया जो उसके स्वास्थ्य के अनुकूल नहीं था । वह कभी क्षय रोग, पायरिया, हिपेटाइटिस रोग या पेट-दर्द से पीड़ित नहीं थी । अंत में यह भी अभिवाक् किया कि अपीलार्थी के पिता ने 1,00,000/- रुपए का चैक और अन्य सामान, आभूषण, महंगी साड़ियों के साथ दहेज के रूप में 5,75,000/- रुपए नकद दिए थे । वादी और उसके कुटुंब ने दहेज के रूप में 2,00,000/- रुपए की मांग की थी । अपनी चतुराई से वादी ने अपीलार्थी को डाक्टर के पास ले जाने के बहाने तारीख 1 दिसंबर, 2002 को नई दिल्ली में उसके भाई के घर पर छोड़ दिया । बाद में वादी के पिता ने अपीलार्थी के पिता को दिल्ली बुलाया और उसे कुरुक्षेत्र ले गए । कुरुक्षेत्र में कुछ कागजों का निष्पादन कराया, इसके संबंध में नई दिल्ली में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई । अपीलार्थी, वादी से उम्र में तीन वर्ष छोटी है । विवाह के सम्पूर्ण होने के बाद पूछताछ की गई, जब अपीलार्थी के माता-पिता वादी की अवैध मांग पूरी नहीं कर सके, तो विवाह को रद्द करने के लिए मिथ्या मुकदमा फाइल किया ।

8. वादी ने प्रत्युत्तर (प्रदर्श सं. 37ग) फाइल किया जिसके द्वारा

उसने लिखित अभिकथन की अंतर्वस्तु और वादपत्र में दोहराए गए अभिवाकों से इनकार किया है ।

9. इसमे यह उल्लेख किया गया है कि आरंभिक रूप से वैवाहिक अर्जी कुरुक्षेत्र के जिला न्यायाधीश के न्यायालय में फाइल की गई थी । तत्पश्चात्, अपीलार्थी ने उच्चतम न्यायालय के समक्ष 2013 की अंतरण आवेदन (सिविल) संख्या 772 फाइल की । उसे तारीख 8 अगस्त, 2005 के आदेश द्वारा मंजूर किया गया और वैवाहिक याचिका जिला न्यायाधीश, कुरुक्षेत्र में लंबित थी, जिला न्यायाधीश, इलाहाबाद के न्यायालय को अंतरित कर दिया गया । आगे चल कर जिला न्यायाधीश, इलाहाबाद ने वैवाहिक याचिका को कुटुंब न्यायालय, इलाहाबाद को अंतरित कर दिया । तद्नुसार, वह 2002 की वैवाहिक अर्जी सं. 37 (शैलेन्द्र कुमार बनाम प्राची) के रूप में रजिस्ट्रीकृत हुई ।

10. अभिवाकों के आदान-प्रदान के पश्चात्, पक्षकार विचारण के लिए गए । निचले न्यायालय ने पक्षकारों के अभिवाकों के आधार पर निर्धारण करने के लिए निम्नलिखित विवाद्क विरचित किए :-

(i) क्या अपीलार्थी के साथ वादी का विवाह कपटपूर्ण रीति में कराया गया है और क्या विवाह के समय अपीलार्थी की बीमारी के तथ्य जानबूझकर छिपाए गए । यदि हां, तो इसका क्या प्रभाव है ?

(ii) क्या अपीलार्थी के बायोडाटा में उसकी आयु को कम करके दिखाया गया है तथा उसकी वास्तविक आयु को जानबूझकर छिपाया गया है । यदि हां, तो इसका क्या प्रभाव है ।

(iii) क्या अपीलार्थी की शारीरिक और मानसिक बीमारी के कारण, पक्षकारों के बीच कोई वैवाहिक संबंध स्थापित नहीं हो सके । यदि हां, तो इसका क्या प्रभाव है ?

(iv) क्या अपीलार्थी और उसके पिता ने वादी और उसके कुटुंब के सदस्यों के साथ क्रूरता कारित की है ?

(v) क्या वादी ने दहेज की मांग के लिए अपीलार्थी के साथ क्रूरता कारित करते हुए छोड़कर चला गया था । यदि हां, तो इसका क्या प्रभाव है ?

(vi) अनुतोष ।

11. निचले न्यायालय ने पक्षकारों द्‌वारा प्रस्तुत किए गए मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य, पक्षकारों के अभिवाकों पर विचार करने के पश्चात् उसके द्‌वारा विरचित किए गए उपरोक्त उल्लिखित विवादकों का विनिश्चय करने के लिए कार्यवाही की । वादी ने अपने मामले को साबित करने के उद्देश्य से अभि. सा. 1 के रूप में स्वंय को प्रस्तुत किया । वादी द्‌वारा कोई अन्य साक्षी प्रस्तुत नहीं किया गया । उसने दस्तावेजी साक्ष्य भी फाइल किए, जो आक्षेपित आदेश में उल्लेखित है ।

12. अपीलार्थी ने अपनी प्रतिरक्षा को साबित करने के लिए प्रतिरक्षा साक्षी 1 के रूप में स्वयं को, प्रतिरक्षा साक्षी 2 के रूप में रमेश प्रसाद काला, प्रतिरक्षा साक्षी 3 के रूप में प्रो. डा. गिरीश चन्द्र त्रिपाठी, प्रतिरक्षा साक्षी 4 के रूप में बृजलाल नागपाल को प्रस्तुत किया । अपीलार्थी ने दस्तावेजी साक्ष्य भी फाइल किए जिनको आक्षेपित निर्णय में भी वर्णित किया गया है ।

13. इसमें यह उल्लेख किया गया है कि वादी ने अधिनियम, 1955 की धारा 12 के निबंधनों में अकृत विवाह की घोषणा के संबंध में अपने अभिवाक् के समर्थन में सात आधार लिए हैं । वादी द्‌वारा यह भी अभिवाक् किया गया है कि अपीलार्थी की दृष्टि कमजोर है । परिणाम-स्वरूप, वह चश्मे के बिना अपने घर का काम सही से नहीं कर सकती है । किंतु, उपरोक्त तथ्य को विवाह के समय अपीलार्थी के माता-पिता ने छिपाया था । वादी ने आगे यह अभिवाक् किया कि अपीलार्थी दांतों की बीमारी से भी पीड़ित है । वह पायरिया और पेरिटोनिटस से पीड़ित है किंतु यह विवाह से पूर्व या विवाह के समय पर नहीं बताया गया । पूर्वोक्त आधार के अतिरिक्त, यह भी अधिकथित किया गया है कि अपीलार्थी पीलिया और पेट के दर्द से पीड़ित है और ये तथ्य कभी नहीं बताए गए । अपीलार्थी की आयु विवाह के समय 30 वर्ष बताई गई थी जबकि, अपीलार्थी की वास्तविक आयु विवाह के समय पर लगभग 38 वर्ष थी । जब अपीलार्थी विवाह के पश्चात् अपने वैवाहिक गृह पर आई तो उसका व्यवहार असाधारण और अस्वाभाविक था, वह मानसिक रोग से ग्रसित थी । यह भी अधिकथित किया गया है कि अपीलार्थी क्षयरोग

(टी.बी.) से ग्रसित थी और पूर्वोक्त तथ्य को न तो विवाह से पूर्व और न ही विवाह के समय पर कभी बताया गया । अंत में यह तर्क दिया गया कि अपीलार्थी के माता-पिता ने न तो विवाह से पूर्व और न ही विवाह के समय पर यह बताया था कि अपीलार्थी को कम सुनाई देता है और यह कि वह सुनने वाली मशीन का प्रयोग करती है ।

14. अपीलार्थी द्‌वारा अभिवाक् किए गए पूर्वोक्त सात आधारों में से, निचले न्यायालय द्‌वारा केवल एक ही आधार स्वीकार किया गया है अर्थात् अपीलार्थी के माता-पिता ने न तो विवाह के पूर्व और न ही विवाह के समय कभी यह बताया था कि अपीलार्थी को कम सुनाई देता है और वह सुनने वाली मशीन का प्रयोग करती है । अपीलार्थी द्‌वारा लिए गए अन्य आधारों को साक्ष्य से सिद्ध नहीं किया जा सका । इस प्रकार इस पर निचले न्यायालय ने विश्वास नहीं किया गया ।

15. विवाद्‌यक संख्या I, II और III का एक साथ विनिश्चय किया गया । निचले न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि अपीलार्थी किसी बीमारी से पीड़ित नहीं थी जैसा कि वादी द्‌वारा अभिकथित किया गया है । आगे यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अपीलार्थी, वादी से उम्र में तीन वर्ष छोटी है । यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि पक्षकारों के बीच तारीख 27 नवंबर, 2002 को विवाह अनुष्ठापित हुआ था । अपीलार्थी तारीख 29 नवंबर, 2002 को अपनी ससुराल आई थी । तत्पश्चात् वह तारीख 1 दिसंबर, 2002 को अपने भाई के घर चली गई, इस प्रकार पक्षकारों के बीच वैवाहिक संबंध कभी भी स्थापित नहीं हुए । निचले न्यायालय ने आगे यह भी अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी के माता-पिता ने न तो विवाह के पूर्व और न ही विवाह के समय पर कभी भी वादी के कुटुंब को यह बताया कि अपीलार्थी को कम सुनाई देता था और वह सुनने वाली मशीन का प्रयोग करती थी । विवाद्‌यक संख्या IV का विनिश्चय निचले न्यायालय द्‌वारा उस आधार पर नहीं किया गया कि उसे अनावश्यक रूप से विरचित किया गया है, इस प्रकार इस विवाद्‌यक पर यह निष्कर्ष निकालना अपेक्षित नहीं है कि क्या अपीलार्थी और उसके पिता ने वादी और उसके कुटुंब के सदस्यों के साथ क्रूरता कारित की थी । विवाद्‌यक संख्या V को वादी के पक्ष में विनिश्चित किया

गया और यह अभिनिर्धारित किया गया कि न तो दहेज की मांग के लिए अपीलार्थी के साथ क्रूरता की गई है और न ही वादी द्वारा उसे वंचित किया गया है । अंततः, निचले न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि वादी विवाह को रद्द कराने की डिक्री पाने का हकदार है क्योंकि यह विवाह अपीलार्थी के माता-पिता ने कपट का सहारा लेकर कराया है ।

16. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने इस बिंदु पर निचले न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्षों को चुनौती दी है कि पक्षकारों का विवाह कपट द्वारा कराया गया है क्योंकि अपीलार्थी की निशक्तता अर्थात् कम सुनना और सुनने वाली मशीन का प्रयोग करना विवाह के पूर्व या विवाह के समय पर कभी नहीं बताया गया था । इस प्रकार पक्षकारों के बीच विवाह कपट करके अनुष्ठापित हुआ था, अतः अधिनियम, 1955 की धारा 12 के निबंधनों में विवाह अकृत किए जाने योग्य है । उसने यह दलील दी कि पक्षकारों का विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 12 के अधीन न्यायालय की डिक्री द्वारा अकृत घोषित किया गया है । जिस एक मात्र तथ्य के आधार पर निचले न्यायालय ने पूर्वोक्त डिक्री पारित की है अर्थात् यह कि अपीलार्थी को विवाह के समय पर सुनने में परेशानी होती थी और वह सुनने वाली मशीन का प्रयोग करती थी, वह तथ्य वादी से छिपाया गया था । अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल के अनुसार मात्र उपरोक्त आधार पक्षकारों के विवाह को अकृत घोषित करने के लिए पर्याप्त नहीं है क्योंकि वह आधार अधिनियम, 1955 की धारा 12 या धारा 5 की परिधि में नहीं आता है । अधिनियम, 1955 की धारा 12 के अधीन विवाह को अकृत करने की डिक्री पारित करने के लिए निचले न्यायालय के लिए यह आज्ञापक है कि वह अधिनियम, 1955 की धारा 12 उपधारा (1) के खंड क, ख, ग और घ में उल्लिखित आधारों पर वादी के कहने पर विवाह को शून्यकरणीय घोषित करे । उसने आगे यह दलील दी है कि वादी का विवाह वादी के पिता ने अपीलार्थी के साथ तय किया था । तथापि, वादी के पिता को कपट का तत्व साबित करने के लिए साक्षी के रूप में प्रस्तुत नहीं किया गया है जबकि वादी द्वारा यह अभिकथन किया गया है कि विवाह तय करने में अपीलार्थी के कुटुंब के सदस्यों ने कपट कारित किया है और न ही वादी के वादपत्र में ऐसा कोई अभिवाक् किया

गया है कि कैसे और किसके द्वारा कपट कारित किया गया है । अंत में, अपीलार्थी की ओर से यह दलील दी गई है कि विवाह से पूर्व के समारोह से वादी का पक्षकथन पूर्णतः मिथ्या हो जाता है क्योंकि वह और उसके कुटुंब के सद्स्यों ने अपीलार्थी के साथ सम्यक् रूप से बात की थी और उसको देखा भी था । निचले न्यायालय ने विवाहपूर्व समारोह को साबित करने का भार अपीलार्थी पर स्थांतरित करके गलत किया है । वादी द्वारा, विवाह की तारीख से एक वर्ष से अधिक अवधि के बाद, बिना किसी आधार पर विवाह अकृत घोषित किए जाने की डिक्री पारित कराने हेतु अर्जी फाइल किया जाना, वादी की दुर्भावना दर्शाता है ।

17. वादी की ओर से प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान् काउंसेल श्री घनश्याम द्विवेदी ने इसमें अभिलिखित निष्कर्षों के आधार पर आक्षेपित निर्णय और डिक्री का समर्थन किया है ।

18. निचले न्यायालय द्वारा अभिलिखित किए गए इस निष्कर्ष की सत्यता पर विचार करने की कार्यवाहियों से पूर्व पक्षकारों के मध्य विवाह कपट द्वारा कराया गया था क्योंकि अपीलार्थी के माता पिता द्वारा न तो विवाह से पूर्व और न ही विवाह के समय पर यह बताया गया था कि उसे कम सुनाई देता है और इसलिए वह सुनने वाली मशीन का प्रयोग करती है, यहां पर अधिनियम, 1955 की धारा 12 जो शून्यकरणीय विवाह से संबंधित है, को पुरःस्थापित करना होगा :-

> 12. शून्यकरणीय विवाह – (1) कोई भी विवाह, वह इस अधिनियम के प्रारम्भ के चाहे पूर्व अनुष्ठापित हुआ हो चाहे पश्चात् निम्निलिखित आधारों में से किसी पर भी अकृतकरणीय होगा और अकृतता की डिक्री द्वारा बातिल किया जा सकेगा –
>
> > (क) कि प्रत्यर्थी की नपुंसकता के कारण विवाहोत्तर संभोग नहीं हुआ है ; या
> >
> > (ख) कि विवाह धारा 5 के खण्ड (2) में विनिर्दिष्ट शर्तों का उल्लंघन करता है ; या
> >
> > (ग) कि अर्जीदार की सम्मति या, जहां कि धारा 5 जिस रूप में बाल विवाह अवरोध (संशोधन) अधिनियम, 1978

(1978 का 2) के प्रारम्भ के ठीक पूर्व विद्‌यमान थी उस रूप में उसके अधीन अर्जीदार के विवाहार्थ संरक्षक की सम्मति अपेक्षित हो वहां ऐसे संरक्षक की सम्मति, बल प्रयोग द्‌वारा या कर्मकाण्ड की प्रकृति के बारे में या प्रत्यर्थी से संबंधित किसी तात्विक तथ्य या परिस्थिति के बारे में कपट द्‌वारा अभिप्राप्त की गई थी ; या

(घ) कि प्रत्यर्थी विवाह के समय अर्जीदार से भिन्न किसी व्यक्ति द्‌वारा गर्भवती थी ।

2 उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, विवाह के बातिलीकरण की कोई अर्जी –

(क) उपधारा (1) के खण्ड (ग) में विनिर्दिष्ट आधार पर ग्रहण न की जाएगी, यदि –

(1) अर्जी, यथास्थिति, बल प्रयोग के प्रवर्तनहीन हो जाने या कपट का पता चल जाने के एकाधिक वर्ष के पश्चात् दी जाए ; या

(2) अर्जीदार, यथास्थिति, बल प्रयोग के प्रवर्तनहीन हो जाने के या कपट का पता चल जाने के पश्चात् विवाह के दूसरे पक्षकार के साथ अपनी पूर्ण सम्मति से पति या पत्नी के रूप में रहा या रही है ;

(ख) उपधारा (1) के खण्ड (घ) में विनिर्दिष्ट आधार पर तब तक ग्रहण न की जाएगी जब तक कि न्यायालय का यह सामाधान न हो जाए, कि –

(1) अर्जीदार विवाह के समय अभिकथित तथ्यों से अनभिज्ञ था ;

(2) कार्यवाही, इस अधिनियम के प्रारम्भ के पूर्व अनुष्ठापित विवाह की दशा में, ऐसे प्रारम्भ के एक वर्ष के भीतर और ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् अनुष्ठापित विवाहों की दशा में, विवाह की तारीख से एक वर्ष के भीतर संस्थित की गई है ; और

(3) उक्त आधार के अस्तित्व का अर्जीदार के पता चलने के समय से अर्जीदार की सम्मति से कोई वैवाहिक संभोग नहीं हुआ है ।

19. अधिनियम, 1955 की धारा 11 अकृत विवाहों से संबंधित है । अधिनियम, 1955 की धारा 11 के अनुसार, अधिनियम, 1955 के आरंभ होने के बाद संपन्न हुआ कोई विवाह अमान्य और अकृत होगा, यदि इसमें अधिनियम की धारा 5 के खंड (i) (ii) और (v) में विनिर्दिष्ट शर्तों का कोई उल्लंघन होता है । दूसरी ओर, जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है कि दूसरी ओर धारा 12 "शून्यकरणीय विवाहों" के साथ से संबंधित हैं । कोई भी विवाह जो अधिनियम, 1955 के आरंभ होने के पूर्व या पश्चात् अनुष्ठापित हुआ हो तो क्या वह शून्यकरणीय होगा या वह अधिनियम, 1955 की धारा 12 में ही उल्लिखित आधारों पर अकृतता की डिक्री द्वारा बातिल किया जा सकेगा ।

20. "शून्य" और "शून्यकरणीय" निबंधन अधिनियम, 1955 में परिभाषित नहीं किए गए हैं । पूर्वोक्त निबंधन संविदा अधिनियम, 1872 में परिभाषित हैं, जो इस प्रकार है :–

धारा 19. स्वतंत्र सम्मति के बिना किए गए करारों की अकृतकरणीयता – जब कि किसी करार के लिए सम्मति प्रपीड़न, कपट या दुर्व्यपदेशन से कारित हो तब वह करार ऐसी संविदा है जो उस पक्षकार के विकल्प पर अकृतकरणीय है जिसकी सम्मति ऐसे कारित हुई थी ।

संविदा का वह पक्षकार जिसकी सम्मति कपट या दुर्व्यपदेशन से कारित हुई थी, यदि वह ठीक समझे तो, आग्रह कर सकेगा कि संविदा का पालन किया जाए, और वह उस स्थिति में रखा जाए जिसमें वह होता यदि किए गए व्यपदेशन सत्य होते ।

अपवाद – यदि ऐसी सम्मति दुर्व्यपदेशन द्वारा या ऐसे मौन द्वारा, जो धारा 17 के अर्थ के अन्तर्गत कपटपूर्ण है, कारित हुई थी तो ऐसा होने पर भी संविदा अकृतकरणीय नहीं है यदि उस पक्षकार के पास, जिसकी सम्मति इस प्रकार कारित हुई थी, सत्य का पता मामूली तत्परता से चला लेने के साधन थे ।

स्पष्टीकरण – वह कपट या दुर्व्यपदेशन, जिसने संविदा के उस पक्षकार की सम्मति कारित नहीं की, जिससे ऐसे कपट या दुर्व्यपदेशन किया गया था, संविदा को अकृतकरणीय नहीं कर देता ।

धारा 20. जब कि दोनों पक्षकार तथ्य की बात सम्बन्धी भूल में हों तब करार अकृत है – जहां कि किसी करार के दोनों पक्षकार ऐसी तथ्य की बात के बारे में, जो करार के लिए मर्मभूत है, भूल में हों वहां करार अकृत है ।

स्पष्टीकरण – जो चीज करार की विषयवस्तु हो उसके मूल्य के बारे में गलत राय, तथ्य की बात के बारे में भूल नहीं समझी जाएगी ।

21. जब कोई करार विधि में प्रवर्तनीय होता है, तब वह एक संविदा बन जाती है । वैधता के आधार पर, संविदा कई प्रकार की होती है, अर्थात् वैध संविदा, अकृत संविदा, अवैध संविदा इत्यादि । अकृत संविदा और अकृतकरणीय संविदा को सामान्यता गलत समझा जाता है, परन्तु वे भिन्न हैं । अकृत संविदा एक संविदा में निहित है जिसमें विधि द्वारा प्रवर्तनीयता का अभाव है, जबकि अकृतकरणीय संविदा एक संविदा को दर्शाती है जिसमें एक पक्षकार को संविदा को लागू करने या रद्द करने का अधिकार है, अर्थात् पक्षकार को संविदा को समाप्त करने का अधिकार है ।

22. उत्तम मूल्यांकन के लिए नीचे एक तुलनात्मक तालिका दी गई है जिसमें अकृत और अकृतकरणीय संविदा के बीच अंतर दिया गया है :-

अकृत संविदा	**अकृतकरणीय संविदा**
संविदा के प्रकार जो प्रवर्तनीय नहीं हो सकते हैं, को अकृत संविदा के रूप में जाना जाता है ।	संविदा जिसमें दोनों पक्षकारों में से एक के पास इसे लागू करने या रद्द करने का विकल्प होता है, अकृतकरणीय संविदा के रूप में जाना जाता है ।
भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 2 (ञ) ।	भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 2 (झ) ।

संविदा विधिमान्य है किन्तु पश्चात्वर्ती कुछ कारणों से अवैध हो जाती है ।	संविदा तब तक वैध है जब तक पक्षकार जिसको सहमति स्वतंत्र नहीं है, वह उसे रद्द नहीं करता है ।
किसी अधिनियम की पश्चात्वर्ती या किसी कार्य की असंभाव्यता जिसका भविष्य में अनुपालन किया जाना है ।	यदि पक्षकारों की सहमति अनाश्रित नहीं है ।
संविदा के लिए संविदा में पक्षकारों के पक्ष में कोई अधिकार नहीं है जो संविदा अकृत है ।	हां, किंतु केवल व्यथित पक्षकार के लिए ।
अपालन के लिए किसी पक्षकार द्वारा अन्य पक्षकार को नहीं दिया जाना किन्तु किसी पक्षकार द्वारा प्राप्त कोई भी लाभ वापस मूल स्थिति में लाना चाहिए ।	नुकसान का व्यथित पक्षकार द्वारा दावा किया जा सकता है ।

23. इस प्रकार अकृत संविदा किसी संविदा के रूप में परिभाषित की जा सकती है जो विधि के न्यायालय में प्रवर्तनीय नहीं है । संविदा तैयार करने के समय पर, संविदा वैध है क्योंकि वह वैध संविदा का गठन करने के लिए आवश्यक सभी शर्तों को पूरा करती है, अर्थात् स्वतंत्र सहमति, सक्षमता, प्रतिफल, विधिपूर्ण उद्देश्य आदि । किन्तु किसी विधि में पश्चात्वर्ती परिवर्तन से या किसी कार्य की असंभाव्यता के परिणामस्वरूप जो संविदा के पक्षकारों की कल्पना और नियंत्रण से परे है, जिससे संविदा संपादित नहीं की जा सकती और इसलिए यह अकृत

बन जाती है । आगे कोई पक्षकार ऐसी संविदा के अपालन के लिए अन्य पक्षकार पर मुकदमा भी नहीं कर सकता है ।

24. दूसरी ओर अकृतकरणीय संविदा एक संविदा है जो संविदा के लिए दो पक्षकारों में से एक के विकल्प पर केवल प्रवर्तनीय हो सकती है । इस प्रकार की संविदा में एक पक्षकार अपने भाग का पालन करने या उसके अपालन करने का विनिश्चय करने के लिए विधिक रूप से प्राधिकृत है । व्यथित पक्षकार कार्रवाई चुनने के लिए स्वतंत्र है । यह अधिकार उद्भूत हो सकता है जब सम्बन्धित पक्षकार की सहमति बलपूर्वक, अनुचित प्रभाव, कपट या मिथ्या कथन इत्यादि से प्रभावित होती है । संविदा तब तक वैध है जब तक व्यथित पक्षकार इसे रद्द नहीं कर देता है ।

25. इसी प्रकार "कपट" अधिनियम, 1955 के अधीन परिभाषित नहीं किया गया है । इसे संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 17 के अधीन निम्न प्रकार परिभाषित किया गया है :–

> "धारा 17. **कपट की परिभाषा** – कपट से अभिप्रेत है और उसके अंतर्गत आता है निम्नलिखित कार्यों में से कोई भी ऐसा कार्य जो अम्विदा के एक पक्षकार द्वारा या उसकी मौनानुकूलता से या उसके अभिकर्ता द्वारा संविदा के किसी अन्य पक्षकार की या उसके अभिकर्ता की प्रवंचना करने के आशय से या उससे संविदा करने के लिए उत्प्रेरित करने के आशय से किया गया हो –
>
> > (1) जो बात सत्य नहीं है, उसका तथ्य के रूप में उस व्यक्ति द्वारा सुझाया जाना जो यह विश्वास नहीं करता की वह सत्य है ;
> >
> > (2) किसी तथ्य का ज्ञान या विश्वास रखने वाले व्यक्ति द्वारा उस तथ्य का सक्रिय छिपाया जाना ;
> >
> > (3) कोई वचन जो उसका पालन करने के आशय के बिना दिया गया हो ;
> >
> > (4) प्रवंचना करने योग्य कोई अन्य कार्य ;

(5) कोई ऐसा कार्य या लोप जिसका कपटपूर्ण होना विधि विशेषतः घोषित करे ।

स्पष्टीकरण – संविदा करने के लिए किसी व्यक्ति की रजामंदी पर जिन तथ्यों का प्रभाव पड़ना संभाव्य हो उनके बारे में केवल मौन रहना कपट नहीं है जब तक कि मामले की परिस्थितियां ऐसी न हों जिन्हें ध्यान में रखते हुए मौन रहने वाले व्यक्ति का यह कर्तव्य हो जाता है कि वह बोले या जब तक कि उसका मौन स्वतः ही बोलने तुल्य न हो ।

26. विचार किए जाने के लिए विवाद्यक इस प्रकार है कि क्या वादी ने सम्यक् रूप से यह अभिवाक् किया है कि पक्षकारों का विवाह कपट द्वारा अनुष्ठापित किया गया है और इसे साबित करने का भार वादी पर है या नहीं ? दूसरा विवाद्यक यह है कि क्या अपीलार्थी के माता-पिता द्वारा यह प्रकट न किया जाना कि अपीलार्थी-पत्नी को कम सुनाई देता था और वह विवाह के पूर्व अथवा विवाह के समय सुनने वाली मशीन का प्रयोग करती थी, ऐसा आधार है कि जिसके अनुसार अकृत विवाह की डिक्री पारित की जा सकती है ।

27. हिन्दू समुदाय ने विवाह एक पवित्र कर्तव्य जिसका अनुपालन समाज को बनाए रखने तथा स्त्री और पुरुष की शारीरिक इच्छाओं की पूर्ति के लिए किया जाता है । उच्चतम न्यायालय ने **हीराचन्द श्रीनिवास मनगांवकर** बनाम **सुनंदा**[1] वाले मामले में यह मत व्यक्त किया है कि अधिनियम, 1955 का उद्देश्य वैवाहिक संबंधों को बनाए रखना है न कि ऐसे बंधन को तोड़ना । इस निर्णय के पैरा 16 में निम्न मत व्यक्त किया गया है :–

"16. .... हमें दोहराना पड़ रहा है कि इस अधिनियम का उद्देश्य और प्रयोजन पति-पत्नी के बीच वैवाहिक संबंधों को बनाए रखना है न कि ऐसे संबंध को समाप्त कर देना ।"

28. वर्तमान मामले में वादी एक चिकित्सक है जबकि अपीलार्थी ने

[1] (2001) 4 एस. सी. सी. 125.

अर्थशास्त्र विषय में पी.एच.डी की उपाधि प्राप्त की है । वादपत्र का परिशीलन करने पर हमें यह पता चलता है कि संपूर्ण वादपत्र में ऐसा कोई प्रकथन नहीं किया गया है जिससे यह प्रकट होता हो कि पक्षकारों के विवाह को अंतिम रूप कैसे दिया गया । यह केवल साक्षियों के परिसाक्ष्य से ही पता चल पाया है कि पक्षकारों के विवाह को अंतिम रूप कैसे दिया गया था ।

29. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने हमारा ध्यान शैलेन्द्र (अभि. सा. 1) के परिसाक्ष्य और तत्पश्चात् डा. प्राची (प्रति. सा. 1) तथा अपीलार्थी के पिता रमेश काला (प्रति. सा. 2), के अभिसाक्ष्य की ओर दिलाया है । प्रति. सा. 2 की मुख्य परीक्षा के परिशीलन से, हम यह पाते हैं कि वादी की ओर से विवाह की कार्यवाही का आरंभ करने और उसे अंतिम रूप देने का निर्णय उसके पिता द्वारा लिया गया था । तथापि, इसका कारण वादी को मालूम होगा कि उसने अपने पिता को यह स्पष्ट करने के लिए न्यायालय में प्रस्तुत क्यों नहीं किया कि पक्षकारों के मध्य विवाह अंतिम रूप से कैसे तय हुआ था क्योंकि उसी ने पक्षकारों के मध्य विवाह को अंतिम रूप दिया गया था ।

30. द्वितीय, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, विवाह अर्जी का वादपत्र वादी द्वारा फाइल किया गया है जिसमें कतई यह उल्लेख नहीं है कि वादी के साथ कैसे कपट कारित किया गया । सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 6, नियम 4 के अधीन स्पष्ट रूप से उस रीति का यह उपबंध किया गया है कि जहां अभिकथित कपट किया गया हो वहां अभिवाक् किस प्रकार किया जाता है । सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 6, नियम 4 वर्तमान संदर्भ के लिए इसमें नीचे उद्धृत है :–

> "**जहां आवश्यक हो वहां विशिष्टियों का दिया जाना –** उन सभी मामलों में जिनमें अभिवचन करने वाला पक्षकार किसी दुर्व्यपदेशन, कपट, न्याय-भंग, जानबूझकर किए गए व्यतिक्रम या असम्यक् असर के अभिवाक् पर निर्भर करता है, और अन्य सभी मालमों में जिसमें उन विशिष्टियों के अलावा विशिष्टियां जो पूर्वोक्त प्ररूपों में उदाहरणस्वरूप दर्शित की गईं हैं, आवश्यक हों

अभिवचन में वे विशिष्टियां (यदि आवश्यक हो तो तारीखें और मदों के सहित) कथित की जाएंगी ।"

31. दुर्भाग्य से, हम यह पाते हैं कि निचले न्यायालय ने विवाह-विच्छेद अर्जी का विनिश्चय करते हुए, पूर्वोक्त तथ्यों को पूर्णतया अनदेखा किया है । यद्दपि वादपत्र इस संबंधित रीति पर पूर्णतया शांत है कि कपट कैसे कारित किया गया था, निचले न्यायालय ने इस विवाद्यक पर विचार किया है । निचले न्यायालय ने इस तथ्य की पूर्ण रूप से अनदेखी की है कि जब तक तथ्य का अभिवाक् नहीं किया जाता है तब तक किसी भी साक्ष्य की जांच नहीं की जा सकती है । एक बार जब विवाह के निपटारे में कपट के तथ्य के बारे में वादी द्वारा अवलम्ब लेने की ईप्सा की गई है, तो स्पष्ट रूप से यह उसका यह कर्तव्य था कि वह श्रेणीबद्ध अभिवाक् करें कि पक्षकारों के मध्य विवाह को अंतिम रूप कैसे दिया गया और किसके द्वारा दिया गया तथा सटीक तारीख और विशिष्ट विवरण भी दें । इस संबंध में वादी द्वारा वादपत्र में सारवान् तथ्यों की अनुपस्थिति स्पष्ट रूप से यह साबित करती है कि वादी ने ईमानदारी से निचले न्यायालय में समावेदन नहीं किया था ।

32. अधिनियम, 1955 की धारा 12 को ध्यान में रखते हुए, हमने बार-बार वादी के विद्वान् काउंसेल से पूछा कि वादी द्वारा विवाह को रद्द करने के लिए जो आधार दिया गया था उसे अधिनियम, 1955 की धारा 12 के अधीन कैसे आच्छादित किया जा सकता है । वादी के विद्वान् काउंसेल ने हमारा ध्यान निचले न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय और किए गए अवलोकनों की ओर दिलाया है, जिसके द्वारा निचले न्यायालय ने यह साबित करने के लिए कि कपट नहीं किया गया था आपीलार्थी पर भार डालकर गलत किया है । यह सुस्थापित है कि हमेशा यह सकारात्मक तथ्य होता है जिसे साबित किया जाना अपेक्षित है । इसलिए पक्षकारों के बीच अनुष्ठापित हुए विवाह में कपट के तत्व को साबित करने का भार वादी पर ही था । इसलिए वादी को अपना पक्षकथन स्वयं साबित करना होगा और वह प्रतिवादी द्वारा ली गई प्रतिरक्षा में आई कमी का लाभ नहीं ले सकता ।

33. जब पूर्वोक्त दृष्टिकोण पर विचार किया जाता है, तो हम यह पाते है कि निचले न्यायालय ने अपीलार्थी पर कपट सिद्ध करने का भार डालकर गलत किया है । इसके अलावा अधिनियम, 1955 की धारा 12 का परिशीलन करने पर हम यह पाते हैं कि पक्षकारों के मध्य अनुष्ठापित विवाह को अकृत करने की डिक्री मंजूर करने के लिए, अपीलार्थी द्‌वारा अभिवाक् किए गए आधार धारा 12 की परिधि के अंर्तगत नहीं आते हैं ।

34. जब ऊपर उल्लिखित तथ्यों पर विचार करने के पश्चात् यह पता चलता है कि वादी के विद्‌वान् काउंसेल ने कोई नई दलील नहीं दी है बल्कि उसमें निहित निष्कर्षों और अवलोकनों के आधार पर ही आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया है ।

35. 2016 की प्रथम अपील सं. 107 (शैलेन्द्र कुमार बनाम प्राची) जिसमें विवादक संख्या 1, 2, और 3 से संबंधित निकाले गए निष्कर्षों को चुनौती दी गई है, वादी शैलेन्द्र कुमार ने फाइल की है । वादी के विद्‌वान् काउंसेल ने इस अपील में कोई दलील नहीं दी है । परिणामस्वरूप यह खारिज किए जाने योग्य है ।

36. 2016 की प्रथम अपील संख्या 157 (डा. प्राची शर्मा बनाम डा. शैलेन्द्र कुमार) जो तारीख 24 नवम्बर, 2008 के आदेश को चुनौती देते हुए फाइल की गई है और जिसके द्‌वारा प्रतिवादी-अपीलार्थी की ओर से अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन फाइल किया गया आवेदन इस सीमा तक मंजूर किया गया कि मुकदमों के लिए 10,000/- रुपए दिए जाएं और तारीख 24 नवंबर, 2008 के आदेश का पुनर्विलोकन करने के लिए फाइल किए गए आवेदन को तारीख 6 फरवरी, 2009 के आदेश द्‌वारा खारिज कर दिया गया है । हम यह पाते हैं कि उपरोक्त अपील में अंतर्वलित संक्षिप्त प्रश्न यह है कि "क्या अपीलार्थी अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन किसी भरणपोषण के लिए हकदार है या नहीं" और "क्या निचले न्यायालय द्‌वारा इसका खंडन करना न्यायोचित है या नहीं ।"

37. तारीख 24 नवम्बर, 2008 के आक्षेपित आदेश का परिशीलन

करने से हमें यह पता चलता है कि निचले न्यायालय ने केवल एक ही आधार पर अपीलार्थी को अंतरिम भरणपोषण देने से इनकार कर दिया कि उसे पहले से ही भरणपोषण मामले में 2,000/- रुपए प्रतिमास की दर से भरणपोषण अधिनिर्णीत किया जा रहा है । परिणामस्वरूप, इसमें अपीलार्थी को आगे और भरणपोषण अधिनिर्णीत किए जाने की आवश्यकता नहीं है ।

38. अधिनियम, 1955 की धारा 24 वैवाहिक विवाद के लम्बन के दौरान अंतरिम भरणपोषण का संदाय करने का उपबंध करती है । अधिनियम, 1955 की धारा 24 वर्तमान संदर्भ के लिए निम्न प्रकार पुरःस्थापित की जाती है :-

> "**वाद लम्बित रहते भरणपोषण और कार्यवाहियों के व्यय –** जहां कि इस अधिनियम के अधीन होने वाली किसी कार्यवाही में न्यायालय को यह प्रतीत हो कि, यथास्थिति, पति या पत्नी की ऐसी कोई स्वतंत्र आय नहीं है जो उसके संभाल और कार्यवाही के आवश्यक व्ययों के लिए पर्याप्त हो वहां वह पति या पत्नी के आवेदन पर प्रत्यर्थी को यह आदेश दे सकेगा कि अर्जीदार को कार्यवाही में होने वाले व्यय तथा कार्यवाही के दौरान में प्रतिमास ऐसी राशि संदत्त करे जो अर्जीदार की अपनी आय तथा प्रत्यर्थी की आय को देखते हुए न्यायालय को युक्तियुक्त प्रतीत होती हो :
>
> परन्तु कार्यवाही के व्ययों और कार्यवाही के दौरान ऐसी मासिक राशि के संदाय के लिए आवेदन को यथासंभव, यथास्थिति, पत्नी या पति पर सूचना की तामील की तारीख से, साठ दिन के भीतर निपटाया जाएगा ।"

39. अधिनियम, 1955 की धारा 24 में ऐसा कोई प्रतिषेध अंतर्विष्ट नहीं है जिसके अधीन दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के अधीन पहले से पारित भरणपोषण के आदेश होने के कारण भरणपोषण से इनकार किया जा सके । इसके प्रतिकूल यह उपबंध किया गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन अधिनिर्णीत भरणपोषण को

अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन अधिनिर्णीत भरणपोषण की राशि में समायोजित किया जाएगा ।

40. अपीलार्थी के विद्‌वान्‌ काउंसेल ने यह दलील दी है कि पक्षकारों का विवाह तारीख 27 नवम्बर, 2002 को हिन्दू रीति रिवाज के अनुसार अनुष्ठापित हुआ था । विवाह के पश्चात्‌ अपीलार्थी तारीख 29 नवम्बर, 2002 को अपनी ससुराल आई थी । यह अभिकथन किया गया है कि वादी ने अपीलार्थी को तारीख 1 दिसंबर, 2002 को नई दिल्ली में उसके भाई के घर पर छोड़ा था । इस प्रकार, अपीलार्थी को वादी से अलग करते हुए अपने माता-पिता के साथ रहने के लिए विवश किया गया था । परिणामस्वरूप, अपीलार्थी अपनी स्वयं की इच्छा से पृथक्‌ रूप से नहीं रह रही है । अपीलार्थी, वादी की विधिक रूप से पत्नी है । इस प्रकार वादी, अपीलार्थी को विधिक रूप से और नैतिक रूप से भरणपोषण देने के लिए बाध्य है । उसके पास आय का कोई स्वतंत्र स्रोत नहीं है और इसलिए वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन पारित आदेश के बावजूद वह अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन भरणपोषण पाने की हकदार है ।

41. वादी ने अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन अपीलार्थी द्‌वारा फाइल किए गए आवेदन का विरोध किया है । तथापि, उसने यह स्वीकार किया है कि उसका वेतन 37,422/- रुपए है । उसने अपने वेतन से हो रही कटौती का भी ब्यौरा दिया । अपीलार्थी ने आगे यह भी अभिवाक्‌ किया है कि चूंकि अपीलार्थी को पहले ही दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन भरणपोषण का अधिनिर्णय किया जा चुका है, इसलिए अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन उसे भरणपोषण पाने का विधिक अधिकार नहीं है ।

42. निचले न्यायालय ने पक्षकारों के मामले पर विचार किया । तारीख 24 नवम्बर, 2008 के आदेश द्‌वारा, केवल मुकदमे पर आई लागत की अनुमति दी है । तारीख 24 नवम्बर, 2008 के आदेश का परिशीलन करने पर, हमारा यह निष्कर्ष है कि निचले न्यायालय ने अपीलार्थी को अंतरिम भरणपोषण मंजूर करने से इनकार करके विधि की

दृष्टि से गलत किया है । हमारा यह भी निष्कर्ष है कि निचले न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा फाइल किए गए पुनर्विलोकन आवेदन को इस आधार पर खारिज कर दिया है कि तारीख 24 नवम्बर, 2008 के आदेश में न तो विधिक त्रुटि और न ही इसमें ऐसी कोई कमी है जिसे देखते ही यह पता चले कि इसका पुनर्विलोकन किया जाए । हमारे मत में निचले न्यायालय इसका मूल्यांकन करने में असफल रहा है कि अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन अधिकारिता दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 की परिधि में नहीं आती है । जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन भरणपोषण की जो भी धनराशि अधिनिर्णीत की गई है वह अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन अधिनिर्णीत भरणपोषण की राशि में समायोजित होगी । परिणामस्वरूप, एतद्द्वारा 2016 की प्रथम अपील संख्या 157 (डा. प्राची शर्मा बनाम डा. शैलेन्द्र कुमार) को आंशिक रूप से मंजूर किया जाता है । इलाहाबाद के कुटुंब न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश द्वारा तारीख 24 नवम्बर, 2008 के पारित आदेश को संशोधित किया जाता है । अपीलार्थी 12,000/- रुपए की दर से मासिक भरणपोषण पाने की हकदार होगी । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन अधिनिर्णीत भरणपोषण की राशि अर्थात् 2,000/- रुपए पूर्वोक्त राशि में समायोजित की जाएगी । वादी को आवेदन की तारीख से 31 अगस्त, 2019 तक अपीलार्थी को पूर्वोक्त राशि संदाय करने का निदेश दिया जाता है । चूंकि हम पहले ही तारीख 24 नवम्बर, 2008 के आदेश को संशोधित कर चुके हैं, इसलिए तारीख 6 फरवरी, 2009 के इस आदेश की वैधता को विनिश्चय करने की आवश्यकता नहीं है, जिसके द्वारा अपीलार्थी की ओर से तारीख 24 नवम्बर, 2008 के पूर्ववर्ती आदेश के पुनर्विलोकन के आवेदन को खारिज कर दिया गया है ।

43. एतद्द्वारा 2011 की प्रथम अपील संख्या 40 (प्राची बनाम शैलेन्द्र कुमार) मंजूर की जाती है । 2002 के वैवाहिक मामला सं. 37 (शैलेन्द्र कुमार बनाम प्राची) में इलाहाबाद के कुटुंब न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश माननीय विजय कुमार खत्री द्वारा पारित तारीख 4 दिसंबर,

2010 के निर्णय और तारीख 22 दिसंबर, 2010 की डिक्री को एतद्‌द्वारा अपास्त किया जाता है और पूर्वोक्त विवाह अर्जी खारिज की जाती है ।

44. 2016 की अपील संख्या 107 (शैलेन्द्र कुमार बनाम प्राची) को भी खारिज किया जाता है ।

45. 2016 की प्रथम अपील संख्या 157 (डा. प्राची शर्मा बनाम डा. शैलेन्द्र कुमार) को आंशिक रूप से मंजूर किया जाता है और प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, इलाहाबाद द्‌वारा पारित तारीख 24 नवम्बर, 2008 के निर्णय और आदेश को संशोधित किया जाता है और तारीख 6 फरवरी, 2009 का आदेश जिसके द्‌वारा अपीलार्थी का पुनर्विलोकन आदेश ख़ारिज किया गया था, एतद्‌द्वारा अपास्त किया जाता है और यह उपबंध किया जाता है कि अपीलार्थी डा. प्राची शर्मा 12,000/- रुपए का मासिक भरणपोषण पाने की हकदार है । दंड प्रक्रिया की संहिता धारा 125 के अधीन अधिनिर्णीत भरणपोषण अर्थात् 2,000/- रुपए की धनराशि को अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन इस न्यायालय द्‌वारा मंजूर किए गए पूर्वोक्त मासिक भरणपोषण में समायोजित की जाएगी । पूर्वोक्त भरणपोषण, आवेदन की तारीख से 31 अगस्त, 2019 तक संदत्त करना होगा । जैसा कि निदेश दिया गया है सम्पूर्ण धनराशि पति डा. शैलेन्द्र शर्मा द्‌वारा सीधे अपीलार्थी को संदत्त करनी होगी या कुटुंब न्यायालय में जमा करनी होगी । यदि वादी शैलेन्द्र कुमार द्‌वारा धनराशि जमा की जाती है तो उसे निचले न्यायालय द्‌वारा बिना किसी विलंब के जारी करना होगा । उपरोक्त संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर, अपीलार्थी वसूली के लिए निष्पादन कार्यवाही करने के लिए स्वतंत्र होगी । यह उपबंधित किया जाता है कि सभी अपीलों में खर्चों के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपीलों का निपटारा किया गया ।

मही./अस.

रूबी बोराह

बनाम

भारतीय जीवन बीमा निगम और अन्य

(2020 की सिविल रिट याचिका सं. 2222)

तारीख 15 मार्च, 2021

न्यायमूर्ति संजय कुमार मेधी

बीमा अधिनियम, 1938 (1938 का 4) – धारा 39 [सपठित संविधान, 1950 का अनुच्छेद 14] – पॉलिसीधारी द्वारा नामनिर्देशन – पॉलिसी में याची का नाम न पाया जाना – पुत्री के जन्म प्रमाणपत्र से याची के नाम की पुष्टि होना – याची का वैध रूप से विवाहित पत्नी होना – याची मृतक की वैध रूप से विवाहित पत्नी है और उसका नाम उसकी पुत्री के जन्म प्रमाणपत्र से भी साबित होता है तथा उसके नामनिर्देशिती होने पर कोई विवाद भी नहीं है, इसलिए बीमे की राशि याची को ही दी जाएगी और यदि इस धनराशि को पाने के लिए किसी व्यक्ति द्वारा कोई कार्यवाही संस्थित की जाती है तो राशि का विभाजन समुचित न्यायालय द्वारा ही किया जाएगा ।

इस मामले में भारतीय जीवन बीमा निगम (जिसे इसमें इसके पश्चात् "निगम" कहा गया है) के अधीन की गई बीमा पॉलिसी के संबंध में मुद्दा उठाया गया है जो प्रफुल्ल कुमार बोराह (याची का मृतक पति) के नाम में की गई थी । चूंकि मृत्यु प्रमाणपत्र में एक अन्य महिला अर्थात् प्रणति दत्ता का नाम उसकी पत्नी की हैसियत से लिखा हुआ है इसलिए निगम ने प्रश्नगत राशि का भुगतान याची के पक्ष में नहीं किया है । याची श्रीमती रूबी बोराह ने प्रफुल्ल कुमार बोराह की पत्नी होने का दावा किया है । उसके पास एक पुत्री है जिसका नाम गोरिमा बोराह है और इस कन्या के जन्म प्रमाणपत्र में याची और उसके पति अर्थात् प्रफुल्ल कुमार बोराह का नाम स्पष्ट रूप से लिखा हुआ है । याची के

आधार कार्ड, भारतीय निर्वाचन आयोग द्वारा जारी पहचान पत्र और जिला प्राधिकरण द्वारा जारी सगे-संबंधी प्रमाणपत्र से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि याची प्रफुल्ल कुमार बोराह की पत्नी है । दुर्भाग्यवश तारीख 11 अप्रैल, 2019 को उक्त प्रफुल्ल कुमार बोराह की मृत्यु हो गई । याची के पति ने निगम के अधीन एक बीमा पॉलिसी सं. 486808278 करा रखी थी और इस पॉलिसी की विधिमान्यता के संबंध में कोई विवाद नहीं है । तद्नुसार, प्रफुल्ल कुमार बोराह की मृत्यु पर याची द्वारा दावा किया गया और औपचारिकता के रूप में मृत्यु प्रमाणपत्र दावा पत्र के साथ संलग्न किया गया । तथापि, निगम ने यह पाया कि पत्नी का नाम भिन्न अर्थात् प्रणति दत्ता है, अत: निगम द्वारा यह आक्षेप किया गया कि पॉलिसी की राशि का दुरुपयोग नहीं किया जाना चाहिए । याची द्वारा यह साबित करने के लिए कि वह मृतक की पत्नी है, अन्य दस्तावेज फाइल किए गए हैं जिनसे कोई परिणाम नहीं निकला है, इसलिए रिट अधिकारिता का अवलंब लेते हुए इस प्रार्थना के साथ वर्तमान याचिका फाइल की गई है कि निगम को यह निदेश दिया जाए कि वह याची को ब्याज के साथ बीमा पॉलिसी की राशि जारी करे । याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – परस्पर विरोधी दलीलों को सुनने और माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि का अनुसरण करने के पश्चात् इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं है कि याची मृतक प्रफुल्ल कुमार बोराह की विधिक रूप से विवाहित पत्नी है । मामले को किसी भी प्रकार दृष्टिगत करते हुए यह पता चलता है कि इस पर कोई विवाद नहीं है कि याची प्रश्नगत पॉलिसी में नामनिर्देशिती है, इसलिए प्रत्यर्थी-निगम के पास इसके सिवाय कोई विकल्प नहीं है कि वह याची को दावा की गई राशि का संदाय करे । तद्नुसार यह निदेश दिया जाता है कि प्रत्यर्थी-निगम प्रश्नगत राशि याची को तत्काल जारी करेगा । तथापि, यह स्पष्ट किया जाता है कि यदि किसी समुचित फोरम में कोई दावा लंबित है, तब प्रश्नगत राशि का विभाजन समुचित न्यायालय द्वारा जारी निदेशों के अनुसार किया जाएगा । (पैरा 14)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[2015]	(2015) 16 एस. सी. सी. 46 = ए. आई. आर. 2016 एस. सी. 139 : **श्रेया विद्‌यार्थी** बनाम **अशोक विद्‌यार्थी और अन्य** ;	7, 9
[2000]	(2000) 6 एस. सी. सी. 724 = ए. आई. आर. 2000 एस. सी. 2747 : **विशिन एन. खनचंदानी और एक अन्य** बनाम **विद्‌या लछमनदास खनचंदानी और एक अन्य** ;	7, 9, 10
[1984]	(1984) 1 एस. सी. सी. 424 = ए. आई. आर. 1984 एस. सी. 346 : **श्रीमती सरबती देवी और एक अन्य** बनाम **श्रीमती ऊषा देवी ।**	7, 9

सिविल (रिट) अधिकारिता : 2020 की सिविल रिट याचिका सं. 2222.

बीमा निगम के आदेश के विरुद्ध संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री एस. बानिक

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री एस. पी. चौधरी

आदेश

इस रिट याचिका में के विवाद की प्रकृति और इस तथ्य पर विचार करते हुए कि प्रत्यर्थी ने शपथपत्र फाइल किया है, वर्तमान रिट याचिका ग्रहण किए जाने के प्रक्रम पर निपटारे के लिए स्वीकार की गई है ।

2. यह मुद्दा भारतीय जीवन बीमा निगम (जिसे इसमें इसके पश्चात् "निगम" कहा गया है) के अधीन की गई बीमा पॉलिसी के संबंध में है जो प्रफुल्ल कुमार बोराह (याची का मृतक पति) के नाम से की गई थी । इस मुद्दे से संबंधित तथ्य इस प्रकार है कि चूंकि मृत्यु प्रमाणपत्र में एक

अन्य महिला अर्थात् प्रणति दत्ता का नाम उसकी पत्नी की हैसियत से लिखा हुआ है इसलिए निगम ने प्रश्नगत राशि का भुगतान याची के पक्ष में नहीं किया है ।

3. संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं कि याची श्रीमती रूबी बोराह ने प्रफुल्ल कुमार बोराह की पत्नी होने का दावा किया है । उसके पास एक पुत्री है जिसका नाम गोरिमा बोराह है और इस कन्या के जन्म प्रमाणपत्र में याची और उसके पति अर्थात् प्रफुल्ल कुमार बोराह का नाम स्पष्ट रूप से लिखा हुआ है । याची के आधार कार्ड, भारतीय निर्वाचन आयोग द्वारा जारी पहचान पत्र और जिला प्राधिकरण द्वारा जारी सगे-संबंधी प्रमाणपत्र से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि याची प्रफुल्ल कुमार बोराह की पत्नी है । दुर्भाग्यवश तारीख 11 अप्रैल, 2019 को उक्त प्रफुल्ल कुमार बोराह की मृत्यु हो गई ।

4. याची के पति ने निगम के अधीन एक बीमा पॉलिसी सं. 486808278 करा रखी थी और इस पॉलिसी की विधिमान्यता के संबंध में कोई विवाद नहीं है । तद्नुसार, प्रफुल्ल कुमार बोराह की मृत्यु पर याची द्वारा दावा किया गया और औपचारिकता के रूप में मृत्यु प्रमाणपत्र दावा पत्र के साथ संलग्न किया गया । तथापि, निगम ने यह पाया कि पत्नी का नाम भिन्न अर्थात् प्रणति दत्ता है, अत: निगम द्वारा यह आक्षेप किया गया कि पॉलिसी की राशि का दुरुपयोग नहीं किया जाना चाहिए । याची द्वारा यह साबित करने के लिए कि वह मृतक की पत्नी है, अन्य दस्तावेज फाइल किए गए हैं जिनसे कोई परिणाम नहीं निकला है, इसलिए रिट अधिकारिता का अवलंब लेते हुए इस प्रार्थना के साथ वर्तमान याचिका फाइल की गई है कि निगम को यह निदेश दिया जाए कि वह याची को ब्याज के साथ बीमा पॉलिसी की राशि जारी करे ।

5. मैंने याची के विद्वान् काउंसेल श्री एस. बानिक को सुना है । मैंने प्रत्यर्थी-निगम की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री एस. पी. चौधरी की भी सुनवाई की है ।

6. याची के विद्वान् काउंसेल श्री बानिक ने यह दलील दी है कि

याची की पहचान और मृतक के साथ उसकी वैवाहिक हैसियत को लेकर कोई विवाद नहीं है और जैसाकि ऊपर विचार किया गया है पुत्री गोरिमा बोराह के जन्म प्रमाणपत्र, आधार कार्ड, पहचान पत्र तथा सगे-संबंधी प्रमाणपत्र जैसे सभी दस्तावेजों से सुसंगत रूप से यह दर्शित होता है कि याची मृतक की पत्नी है । जहां तक इस बात का संबंध है कि मृत्यु प्रमाणपत्र में पत्नी के रूप में अन्य किसी महिला का नाम उल्लिखित है, बीमा राशि का भुगतान करने के लिए इस तथ्य का कोई लेना-देना नहीं है । विद्वान् काउंसेल ने वैकल्पिक रूप से यह दलील दी है कि नामनिर्देशिती की हैसियत न्यासी के समतुल्य होती है, इसलिए निगम को यह विवेकाधिकार नहीं है कि वह न्यासी को उक्त राशि का भुगतान करे और यदि स्वीय विधि के अधीन कोई अन्य दावा किया गया है, तब वह सक्षम न्यायालय द्वारा विनिश्चित किया जाएगा कि वह भुगतान किस प्रकार किया जाए और बीमा पॉलिसी की कुल राशि का कितना भाग जारी किया जाएगा । तद्नुसार श्री बानिक ने यह प्रार्थना की है कि बीमा राशि जारी करने में प्रत्यर्थी प्राधिकारी द्वारा की गई सक्रियता/निष्क्रियता पूर्णतया अयुक्तियुक्त है और इससे संविधान के अनुच्छेद 14 के अधीन गारंटीकृत अधिकारों का अतिक्रमण होता है ।

7. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि यह कोई अनिर्णीत विषय नहीं है कि निगम को विधि के अर्थान्तर्गत राज्य माना जाए ताकि इसे संविधान के अनुच्छेद 226 के अन्तर्गत लाया जा सके । इस रिट याचिका में किए गए अपने दावे के समर्थन में विद्वान् काउंसेल ने माननीय उच्चतम न्यायालय के निम्न विनिश्चयों का अवलंब लिया है –

(i) **श्रीमती सरबती देवी और एक अन्य** बनाम **श्रीमती ऊषा देवी**[1] ;

(ii) **विशिन एन. खनचंदानी और एक अन्य** बनाम **विद्या लछमनदास खनचंदानी और एक अन्य**[2] ;

---

[1] (1984) 1 एस. सी. सी. 424 = ए. आई. आर. 1984 एस. सी. 346.

[2] (2000) 6 एस. सी. सी. 724 = ए. आई. आर. 2000 एस. सी. 2747.

(iii) **श्रेया विद्‌यार्थी** बनाम **अशोक विद्‌यार्थी और अन्य**[1] ;

8. **श्रीमती सरबती देवी** (उपरोक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने दो प्रकार के विनिश्चयों के संबंध में भिन्न मत व्यक्त किया जिनमें से एक प्रकार का विनिश्चय दिल्ली उच्च न्यायालय द्‌वारा और दूसरे प्रकार के विनिश्चय अन्य उच्च न्यायालयों द्‌वारा दिए गए थे । चर्चा के बाद माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्न मत व्यक्त किया :–

> "12. इसके अतिरिक्त इस मामले में एक अन्य महत्वपूर्ण परिस्थिति ऐसी है जिसके कारण हम अन्य उच्च न्यायालयों द्‌वारा दिए गए विनिश्चयों के प्रतिकूल मत व्यक्त कर रहे हैं और दिल्ली उच्च न्यायालय द्‌वारा हाल ही में वर्ष 1978 और 1982 में दिए गए विनिश्चयों से सहमत हैं । यह अधिनियम वर्ष 1938 से प्रवृत्त है और भारत के सभी उच्च न्यायालयों ने यह मत व्‌यक्त किया है कि धारा 39 के अधीन किए गए नामनिर्देशन से वारिसों को उनके उस अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता जिसका संबंध जीवन बीमा पॉलिसी के अधीन संदेय राशि से है । फिर भी संसद्‌ ने इस अधिनियम में कोई भी संशोधन नहीं किया है । ऐसी परिस्थिति में जब तक यह अभिनिर्धारित करने के लिए ठोस कारण न हों कि वे सभी विनिश्चय पूर्णतया त्रुटिपूर्ण हैं तब तक न्यायालय को भिन्न मत व्यक्त करने के लिए जल्दबाजी से काम नहीं लेना चाहिए । दिल्ली उच्च न्यायालय द्‌वारा दिए गए कारण तर्कसम्मत नहीं हैं । अत: हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि **फौजा सिंह** ए. आई. आर. 1978 दिल्ली 276 और **श्रीमती उमा सहगल** ए. आई. आर. 1982 दिल्ली 36 वाले मामलों में दिए गए निर्णयों में विधि ठीक प्रकार अधिकथित नहीं की गई है । अत: उन्हें अपास्त किया जाता है । हम अधिनियम की धारा 39 के अर्थान्तर्गत अन्य उच्च न्यायालयों द्‌वारा व्यक्त किए गए मतों का अनुमोदन करते हुए यह अभिनिर्धारित करते हैं कि अधिनियम की धारा 39 के अधीन मात्र

[1] (2015) 16 एस. सी. सी. 46 = ए. आई. आर. 2016 एस. सी. 139.

नामनिर्देशन के आधार पर जीवन बीमा के अधीन मृत्यु होने पर सन्देय राशि पाने का अधिकार प्रदत्त नहीं किया गया है । नामनिर्देशन से मात्र प्राधिकृत व्यक्ति का नाम उपदर्शित होता है जिसे राशि का संदाय किये जाने के पश्चात् बीमाकर्ता बीमा पॉलिसी के अधीन अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है । तथापि, बीमाकृत व्यक्ति के वारिसों को लागू उत्तराधिकार की विधि के अनुसरण में उनके द्वारा बीमा राशि पाने का दावा किया जा सकता है ।"

9. माननीय उच्चतम न्यायालय का पूर्वोक्त विनिश्चय का अवलंब निरंतर **विशिन एन. खनचंदानी** (उपरोक्त) और **श्रेया विद्यार्थी** (उपरोक्त) सहित अन्य विनिश्चयों में भी किया गया है ।

10. **विशिन एन. खनचंदानी** (उपरोक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने बीमा अधिनियम, 1938 तथा सरकारी बचत प्रमाणपत्र अधिनियम, 1959 के सुसंगत उपबंधों पर विचार करते हुए निम्न प्रकार अभिनिर्धारित किया है :–

"13. उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि यद्यपि इस अधिनियम की धारा 6 की भाषा और शब्दावली बीमा अधिनियम की धारा 39 में प्रयोग की गई भाषा और शब्दावली से भिन्न है फिर भी दोनों उपबंधों का प्रभाव समान है । इस अधिनियम के अधीन राष्ट्रीय बचत प्रमाणपत्र की राशि का भुगतान धारक के नामनिर्देशिती को किए जाने के विलंब से बचने के संबंध में उपबंध किए गए हैं जो धारक तथा डाकघर दोनों के लिए लाभकारी हैं । विधिमान्य रूप से की गई कटौतियों के पश्चात् नामनिर्देशिती को संदत्त कोई भी राशि मृतक की संपदा बन जाती है । यह संपदा उन सभी व्यक्तियों पर आ जाती है जो विधि, रूढ़ि या मृतक-धारक की वसीयत के अधीन उत्तराधिकार के हकदार हैं । दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है, **सरबती देवी** (उपरोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि उस नामनिर्देशिती को समान रूप से लागू होगी जो राष्ट्रीय बचत प्रमाणपत्र की उस राशि के संदाय के लिए हकदार हैं जो अधिनियम की धारा 7 के

साथ पठित धारा 6 के अधीन प्राप्त की गई है जिसे वह उन व्यक्तियों को वापस करने के लिए जिम्मेदार होगा जो अधिनियम की धारा 8 की उपधारा (2) के उपबंधों के अध्यधीन लाभ पाने के हकदार हैं ।"

11. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **श्रेया विद्यार्थी** (उपरोक्त) वाले मामले में **श्रीमती सरबती देवी** (उपरोक्त) वाले मामले में किए गए विनिश्चिय का अनुमोदन करते हुए निम्न अभिनिर्धारित किया है :–

"19. 1968 की वाद सं. 147 में रमा विद्यार्थी के शपथपत्र से, जो सावित्री विद्यार्थी द्वारा फाइल किया गया है, यह प्रकट होता है कि वह प्रबंधक के रूप में परिवार की देखभाल कर रही थी और अपने सौतेले पुत्र (अर्थात् हरिशंकर विद्यार्थी की पहली पत्नी का पुत्र) जो प्रत्यर्थी सं. 1 है, की भी देखरेख कर रही थी । उक्त शपथपत्र में यह भी स्वीकार किया गया है कि उसने हरिशंकर विद्यार्थी की मृत्यु के पश्चात् बीमा राशि प्राप्त की थी जिसका प्रयोग वाद संपत्ति क्रय करने के लिए किया गया था और इस संपत्ति को खरीदने में रमा देवी ने स्वयं अर्जित किए गए धन का भी प्रयोग किया था । अपीलार्थी के हित-पूर्वाधिकारी द्वारा यह स्वीकार किया जाना कि उसने बीमा राशि का प्रयोग वाद संपत्ति अर्जित करने में किया था, महत्वपूर्ण है । यद्यपि वाद संपत्ति के परम स्वामित्व का दावा रमा विद्यार्थी द्वारा पूर्वोक्त शपथपत्र में किया गया है और उक्त दावे को बीमा राशि से संबंधित अन्य विधिक वारिसों के दावे से संबंधित विधिक स्थिति द्वारा अविश्वसनीय ठहराया गया है । इससे मृतक के सभी विधिक वारिसों का हक बनता है यद्यपि उसे रमा विद्यार्थी द्वारा अपने पति की नामनिर्देशिती के रूप में प्राप्त किया गया है । ऐसा प्रतीत होता है कि उपरोक्त मत श्रीमती सरबती देवी और एक अन्य **बनाम** श्रीमती ऊषा देवी [(1984) 1 एस. सी. सी. 424 = ए. आई. आर. 1984 एस. सी. 346] वाले मामले में व्यक्त किए गए विनिश्चय से लिया गया है जो निम्न प्रकार है –

12. इस मामले में एक अन्य महत्वपूर्ण परिस्थिति है जो हमें उच्च न्यायालयों द्वारा किए गए विनिश्चयों के प्रति प्रतिकूल निष्कर्ष निकालने और दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा वर्ष 1978 और 1982 में दिए गए विनिश्चयों के प्रति अनुकूल निष्कर्ष निकालने पर बल देती है । यह अधिनियम वर्ष 1938 से प्रवृत्त है और भारत के लगभग सभी उच्च न्यायालयों ने यह मत व्यक्त किया है कि धारा 39 के अधीन किए गए मात्र नामनिर्देशन से जीवन बीमा पॉलिसी के अधीन संदेय राशि पर वारिसों को उनके अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता । फिर भी संसद् ने अधिनियम में कोई भी संशोधन नहीं किया है । ऐसी परिस्थिति में जब तक यह अभिनिर्धारित करने के लिए ठोस और आबद्धकारी कारण न हो कि सभी विनिश्चय पूर्णतया त्रुटिपूर्ण हैं, तब तक न्यायालय को भिन्न मत व्यक्त करने में जल्दबाजी से काम नहीं लेना चाहिए । दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए कारण तर्कसम्मत नहीं हैं । अतः, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि **फौजा सिंह** और **उमा सहगल** (उपरोक्त) वाले मामलों में उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों के अधीन सही विधि अधिकथित नहीं की गई है । अत: उन्हें अपास्त किया जाता है । हम अधिनियम की धारा 39 के अर्थान्तर्गत अन्य उच्च न्यायालयों द्वारा व्यक्त किए गए मतों का अनुमोदन करते हैं और यह अभिनिर्धारित करते हैं कि अधिनियम की धारा 39 के अधीन मात्र नामनिर्देशन से जीवन बीमा पॉलिसी के अधीन संदेय राशि के लिए प्रदत्त किसी भी लाभ से नामनिर्देशिती को वंचित नहीं किया जा सकता । नामनिर्देशन से मात्र यह उपदर्शित होता है कि बीमा राशि प्राप्त करने हेतु कौन व्यक्ति है जिसे राशि का संदाय किए जाने के पश्चात् बीमाकर्ता पॉलिसी के अधीन अपने दायित्व से विधिमान्य रूप से मुक्त हो जाए । तथापि, मृतक के वारिसों द्वारा उत्तराधिकार विधि के अनुसरण में बीमा राशि पाने का दावा किया जा सकता है ।"

12. तद्नुसार, विद्वान् काउंसेल श्री बानिक ने यह दलील दी है कि उपरोक्त तथ्य और परिस्थितियों को दृष्टिगत करते हुए और माननीय

उच्चतम न्यायालय द्‌वारा अधिकथित विधि का अनुसरण करते हुए वर्तमान याचिका प्रश्नगत राशि प्रत्यर्थी-निगम द्‌वारा याची को जारी किए जाने के लिए मंजूर की जाती है ।

13. जीवन बीमा निगम की ओर से हाजिर होने वाले विद्‌वान् काउंसेल श्री एस. पी. चौधरी ने निष्पक्ष रूप से यह दलील दी है कि याची की ओर से की गई विधि की प्रतिपादना पर कोई भी विवाद नहीं है और केवल यह सुनिश्चित किया जाना आवश्यक है कि जनता के धन का दुरुपयोग न हो और इसीलिए याची को बीमा राशि जारी नहीं की गई है । तथापि, श्री चौधरी ने यह दलील दी है कि इस संबंध में कोई स्पष्टीकरण नहीं है कि प्रणति दत्ता का नाम प्रफुल्ल कुमार बोराह के मृत्यु प्रमाणपत्र में किस प्रकार आया जो कि स्वयं याची द्‌वारा दावा किए जाने के समय उपलब्ध कराया गया था ।

14. परस्पर विरोधी दलीलों को सुनने और माननीय उच्चतम न्यायालय द्‌वारा अधिकथित विधि का अनुसरण करने के पश्चात् इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं है कि याची मृतक प्रफुल्ल कुमार बोराह की विधिक रूप से विवाहित पत्नी है । मामले को किसी भी प्रकार दृष्टिगत करते हुए यह पता चलता है कि इस पर कोई विवाद नहीं है कि याची प्रश्नगत पॉलिसी में नामनिर्देशिती है, इसलिए प्रत्यर्थी-निगम के पास इसके सिवाय कोई विकल्प नहीं है कि वह याची को दावा की गई राशि का संदाय करे । तद्‌नुसार यह निदेश दिया जाता है कि प्रत्यर्थी-निगम प्रश्नगत राशि याची को तत्काल जारी करेगा । तथापि, यह स्पष्ट किया जाता है कि यदि किसी समुचित फोरम में कोई दावा लंबित है, तब प्रश्नगत राशि का विभाजन समुचित न्यायालय द्‌वारा जारी निदेशों के अनुसार किया जाएगा ।

15. तद्‌नुसार, रिट याचिका का निपटारा किया जाता है । खर्चों के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता ।

याचिका मंजूर की गई ।

अस.

भीष्म लाल बनछोड़

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य और अन्य

(2021 की सिविल रिट अपील सं. 145)

तारीख 17 जून, 2021

कार्यकारी मुख्य न्यायमूर्ति प्रशान्त कुमार मिश्रा और न्यायमूर्ति पार्थ प्रतीम साहू

माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का संरक्षण और कल्याण अधिनियम, 2007 (2007 का 56) – धारा 23 [सपठित छत्तीसगढ़ किराया नियंत्रण अधिनियम, 2011, उपखंड (ज)] – अपीलार्थी/वरिष्ठ नागरिक द्‌वारा किराएदार के विरुद्ध बेदखली कार्यवाही अधिनियम, 2007 के अधीन किया जाना – जिला मजिस्ट्रेट द्‌वारा संज्ञान न लिया जाना – अपीलार्थी द्‌वारा एकल न्यायाधीश के समक्ष रिट फाइल किया जाना – रिट का खारिज होना – रिट के आदेश के विरुद्ध खंड न्यायपीठ के समक्ष अपील किया जाना – अपील का खारिज होना – हस्तांतरण की कोटि में न आने वाले लेनदेन को अधिनियम, 2007 की धारा 23 नहीं अपितु अधिनियम, 2011 की अनुसूची 2 के खंड 11 का उपखंड (ज) लागू होगा जिसके अधीन वरिष्ठ नागरिक किराएदार को एक महीने का नोटिस देकर बेदखल कर सकता है, अधिनियम, 2007 ऐसी स्थिति को लागू नहीं होगा जहां किराएदार के कब्जे में वरिष्ठ नागरिक की संपत्ति है क्योंकि किराएदारी का अर्थ संपत्ति का अंतरण नहीं है और किराएदार अंतरिती नहीं है और इसीलिए भरणपोषण प्राप्त करने का अधिकार वरिष्ठ नागरिक के बेदखल करने या किराए की बकाया राशि प्राप्त करने के बराबर नहीं हो सकता, अत: जिला मजिस्ट्रेट और एकल न्यायाधीश के आदेश में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

संक्षेप में इस मुद्दे से संबंधित तथ्य इस प्रकार हैं कि तारीख 11

जनवरी, 2020 का उपाबंध-पी/2 द्वारा अपीलार्थी/अर्जीदार ने प्रत्यर्थी सं. 4 के साथ दो दुकानें 11 मास की अवधि के लिए 7,000/- रुपए मासिक किराए की दर पर देने के संबंध में एक करार निष्पादित किया । जब किराएदार ने करार में उल्लिखित 11 मास की अवधि बीत जाने के पश्चात् परिसर खाली नहीं किया तब अपीलार्थी ने तारीख 22 जनवरी, 2021 को जिला मजिस्ट्रेट, दुर्ग के समक्ष अधिनियम, 2007 की धारा 23 के अधीन किराएदार को बेदखल किए जाने और किराए की बकाया राशि की वसूली के लिए आवेदन किया । जब जिला मजिस्ट्रेट ने कोई कार्रवाई आरंभ नहीं की, तब तारीख 4 फरवरी, 2021 को एक अनुस्मारक फाइल किया गया और उसके तत्काल पश्चात् इस न्यायालय के समक्ष रिट याचिका फाइल की । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने वह याचिका यह कहते हुए खारिज कर दी कि जिला मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत आवेदन में मांगे गए अनुतोष की प्रकृति अधिनियम, 2007 के अधीन संज्ञेय नहीं है । उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश के आदेश से व्यथित होकर वरिष्ठ नागरिक ने उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ के समक्ष अपील फाइल की । रिट अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – धारा 23 के उपरोक्त उद्धृत उपबंध ऐसी स्थिति से संबंधित हैं जहां वरिष्ठ नागरिक संपत्ति को दान के माध्यम से या अन्यथा इस शर्त के साथ स्थानांतरित करता है कि अंतरिती हस्तांतरणकर्ता को बुनियादी सुविधाएं और बुनियादी भौतिक आवश्यकताएं प्रदान करेगा और यदि ऐसा अंतरिती इनकार करता है या ऐसी सुविधाओं तथा भौतिक आवश्यकताओं को प्रदान करने में विफल रहता है तो ऐसी स्थिति में, संपत्ति के उक्त हस्तांतरण को धोखाधड़ी या जबरदस्ती या अनुचित प्रभाव के अधीन किया गया माना जाएगा और हस्तांतरणकर्ता के विकल्प पर अधिकरण द्वारा शून्य घोषित किया जा सकता है । संपत्ति से भरणपोषण प्राप्त करने का अधिकार, जिसे एक वरिष्ठ नागरिक द्वारा हस्तांतरित किया जाता है, को हस्तांतरिती के खिलाफ लागू किया जा सकता है । यह उपबंध ऐसी स्थिति को लागू नहीं होगा जहां किराएदार के कब्जे में वह संपत्ति है जो किसी वरिष्ठ नागरिक की

है और इसका पहला कारण यह है कि किराएदारी का अर्थ संपत्ति का अंतरण नहीं है, अतः, किराएदार अंतरिती नहीं है और भरणपोषण प्राप्त करने का अधिकार गृहस्वामी/वरिष्ठ नागरिक के बेदखल करने या किराए की बकाया राशि प्राप्त करने के अधिकार के बराबर नहीं है । मकान मालिक का बेदखली का अधिकार छत्तीसगढ़ किराया नियंत्रण अधिनियम, 2011 (संक्षेप में "अधिनियम, 2011") के अधीन आता है । अधिनियम, 2011 की अनुसूची 2 में अधिनियम के अधीन उपलब्ध मकान मालिक के अधिकारों का उपबंध किया गया है । परंतुक दूसरी अनुसूची के खंड 11 के उपखंड (ज) के परंतुक अधीन वरिष्ठ नागरिक को किराएदार को एक महीने का नोटिस देकर बेदखली का अधिकार प्रदान करता है । नोटिस की यह अवधि अन्य श्रेणी के किराएदारों के लिए 6 महीने है । इस प्रकार, वरिष्ठ नागरिक के लिए लाभकारी उपबंध भी अधिनियम, 2011 के अधीन किए गए हैं और यह ऐसा मामला नहीं है जहां मकान मालिक के वरिष्ठ नागरिक होने पर बेदखली का अधिकार अनिश्चित काल तक दिया जाएगा । जब एक मकान मालिक को अधिनियम, 2011 के अधीन एक विशेष अनुतोष अनुज्ञात किया गया है, तो उसी अधिकार और अनुतोष को अधिनियम, 2007 के उपबंधों के साथ मात्र इस आधार पर नहीं पढ़ा जा सकता है कि इसलिए कि मकान मालिक एक वरिष्ठ नागरिक है । यदि अपीलार्थी के विद्वान् अधिवक्ता द्वारा किया गया निर्वाचन स्वीकार कर लिया जाता है तब वरिष्ठ नागरिक द्वारा निष्पादित प्रत्येक समझौते में, चाहे वह व्यावसायिक संव्यवहार हो या कोई अन्य संव्यवहार, एक आवेदन वरिष्ठ नागरिक द्वारा जिला मजिस्ट्रेट के समक्ष अधिनियम, 2007 के तहत किया जा सकता है । अधिनियम के अधीन उपबंधों का उद्देश्य और परिधि नहीं है । तीसरे पक्ष के विरुद्ध एक वरिष्ठ नागरिक के अधिकारों को अधिनियम, 2007 की धारा 23 के उपबंधों के अधीन सख्ती से नियंत्रित किया गया है और जब एक बार, ऐसा उपबंध ऐसे लेनदेन जो हस्तांतरण की कोटि में नहीं आता है, भू-स्वामी पर लागू नहीं होता है, तब एक वरिष्ठ नागरिक सामान्य कानून के अधीन बेदखली की ईप्सा करनी होगी । (पैरा 12, 13, 14, 15 और 16)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2020]	2020 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1023 = ए. आई. आर. 2021 एस. सी. 177 : **श्रीमती वनीता** बनाम **उपायुक्त, बंगलुरु नगर जिला और अन्य** ।	4

सिविल (रिट) अधिकारिता : 2021 की सिविल रिट अपील सं. 145.

उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के निर्णय के विरुद्ध रिट अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री प्रवीण धुरन्धर

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री चन्द्रेश श्रीवास्तव (उप महाधिवक्ता)

न्यायालय का निर्णय कार्यकारी मुख्य न्यायमूर्ति प्रशान्त कुमार मिश्रा ने दिया ।

का. मु. न्या. मिश्रा – सुनवाई की गई ।

2. इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान रिट अपील में मुख्य मुद्दा यह है कि क्या भू-स्वामी जो वरिष्ठ नागरिक है, माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का संरक्षण और कल्याण अधिनियम, 2007 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "अधिनियम, 2007" कहा गया है) में अन्तर्विष्ट उपबंधों का अवलंब लेते हुए अपने किराएदार की बेदखली की ईप्सा कर सकता है या नहीं ।

3. संक्षेप में इस मुद्दे से संबंधित तथ्य इस प्रकार हैं कि तारीख 11 जनवरी, 2020 का उपाबंध-पी/2 द्वारा अपीलार्थी/अर्जीदार ने प्रत्यर्थी सं. 4 के साथ दो दुकानें 11 मास की अवधि के लिए 7,000/- रुपए मासिक किराए की दर पर देने के संबंध में एक करार निष्पादित किया । जब किराएदार ने करार में उल्लिखित 11 मास की अवधि बीत जाने के पश्चात् परिसर खाली नहीं किया तब अपीलार्थी ने तारीख 22 जनवरी, 2021 को जिला मजिस्ट्रेट, दुर्ग के समक्ष अधिनियम, 2007 की धारा 23 के अधीन किराएदार को बेदखल किए जाने और किराए की बकाया राशि की वसूली के लिए आवेदन किया । जब जिला मजिस्ट्रेट ने कोई

कार्रवाई आरंभ नहीं की, तब तारीख 4 फरवरी, 2021 को एक अनुस्मारक फाइल किया गया और उसके तत्काल पश्चात् इस न्यायालय के समक्ष रिट याचिका फाइल की । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने वह याचिका यह कहते हुए खारिज कर दी कि जिला मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत आवेदन में मांगे गए अनुतोष की प्रकृति अधिनियम, 2007 के अधीन संज्ञेय नहीं है ।

4. **श्रीमती वनीता** बनाम **उपायुक्त, बंगलुरु नगर जिला और अन्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि निर्दिष्ट करते हुए अपीलार्थी/अर्जीदार की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री प्रवीण धुरन्धर ने यह दलील दी है कि अधिनियम, 2007 के अधीन कार्यवाही तृतीय पक्षकार के विरुद्ध भी चलने योग्य है । जब किसी वरिष्ठ नागरिक को उसके परिवार के सदस्यों के अलावा किसी व्यक्ति द्वारा तंग किया जाता है, तब भी अधिनियम, 2007 के उपबंध लागू होंगे और जिला मजिस्ट्रेट को प्रत्यर्थी सं. 4 के विरुद्ध भी कार्यवाही आरंभ करनी चाहिए थी तथा बेदखली का आदेश भी पारित करना चाहिए था । अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने जिला मजिस्ट्रेट से यह ईप्सा की है कि वे इस आवेदन पर विचार करें और इस संबंध में आवश्यक आदेश पारित करें ।

5. किसी विशेष प्राधिकारी को यह निदेश दिए जाने के लिए भी, कि अधिनियम के अधीन कार्यवाही विनिश्चित करे, उच्च न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह प्रथमदृष्ट्या मामले की जांच करते हुए यह विनिश्चित करे कि ऐसी कार्यवाही चलने योग्य है या नहीं ।

6. अधिनियम, 2007 परिवार के वृद्ध सदस्यों की सहायता के लिए अधिनियमित किया गया है । संसद् के समक्ष अधिनियम, 2007 की प्रस्तावना निम्न प्रस्तुत की गई है :-

> "संयुक्त परिवारों की संख्या में कमी होने के कारण वृद्धावस्था एक बड़ी चुनौती बन गई है । वृद्धों विशेषकर विधवा महिलाओं की देखरेख उनके परिवार द्वारा नहीं की जा रही है । उन्हें अपने अंतिम वर्ष अकेले बिताने के लिए मजबूर किया जाता है और

---

[1] 2020 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1023 = ए. आई. आर. 2021 एस. सी. 177.

भावनात्मक रूप से उनकी उपेक्षा की जाती है और उन्हें वित्तीय सहायता प्रदान नहीं की जा रही है । इस सामाजिक चुनौती से निपटने के लिए वृद्ध व्यक्तियों की देखभाल और सुरक्षा पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है । हालांकि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में एक उपबंध है जिसके अधीन माता-पिता बच्चों से अपने रखरखाव के लिए दावा कर सकते हैं लेकिन यह प्रक्रिया समय लेने वाली और महंगी है, यह वांछनीय है कि पीड़ित माता-पिता द्वारा रखरखाव का दावा करने के लिए सरल, सस्ते और त्वरित उपबंध किए जा सकते हैं । अपने वृद्ध नातेदारों की संपत्ति विरासत में प्राप्त करने वाले व्यक्तियों पर उनका भरणपोषण करने का दायित्व डालना और उनके रहन-सहन के लिए वृद्धाश्रम स्थापित करने और बेहतर चिकित्सा सुविधाएं प्रदान करने और उनके जीवन और संपत्ति की सुरक्षा हेतु उपबंध करने के लिए माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण और कल्याण बिल को संसद् में पेश किया गया था ।"

7. उपरोक्त चर्चा के साथ, अधिनियम निम्नलिखित तरीके से 'उद्देश्यों और कारणों के विवरण' के बारे में आगे इस प्रकार बताता है :–

"भारतीय समाज के पारंपरिक मानदंडों और मूल्यों ने बुज़ुर्गों की देखभाल करने पर जोर दिया । यद्यपि संयुक्त परिवार प्रणाली के कमजोर पड़ने के कारण, बड़ी संख्या में बुज़ुर्गों की देखभाल उनके परिवार द्वारा नहीं की जा रही है । परिणामतः, कई वृद्ध व्यक्ति, विशेष रूप से विधवा महिलाओं को अब अपने जीवन के अंतिम वर्ष अकेले बिताने के लिए विवश किया जाता है और उनकी भावनात्मक रूप से उपेक्षा की जाती है और शारीरिक तथा वित्तीय सहायता की कमी का सामना भी करना पड़ता है । इससे स्पष्ट रूप से यह पता चलता है कि उम्र बढ़ना एक बड़ी सामाजिक चुनौती बन गई है और वृद्धों की देखभाल और सुरक्षा पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है । यद्यपि माता-पिता दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अधीन भरणपोषण का दावा कर सकते हैं किन्तु यह प्रक्रिया समय लेने वाली और महंगी दोनों है । इसलिए, माता-पिता के भरणपोषण का दावा करने के लिए सरल, सस्ते और त्वरित उपबंधों की आवश्यकता है ।

2. इस बिल में ऐसे व्यक्तियों पर अपने वृद्ध रिश्तेदारों का भरणपोषण करने की जिम्मेदारी अधिरोपित करने का प्रस्ताव रखा गया है जो अपने वृद्ध रिश्तेदारों की संपत्ति विरासत में प्राप्त करते हैं और इस बिल में वृद्ध व्यक्तियों के रहन-सहन के लिए वृद्धाश्रम स्थापित करने का प्रस्ताव भी रखा गया है ।

इस बिल में वरिष्ठ नागरिकों को बेहतर चिकित्सा सुविधाएं प्रदान करने और उनके जीवन और संपत्ति की सुरक्षा के उपबंधों का भी प्रस्ताव है ।

3. अत: इस बिल में निम्नलिखित के लिए उपबंध करने का प्रस्ताव है –

(क) माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों को आवश्यकता-आधारित रखरखाव प्रदान करने के लिए उपयुक्त तंत्र स्थापित किया जाना ;

(ख) वरिष्ठ नागरिकों को बेहतर चिकित्सा सुविधाएं प्रदान करना ;

(ग) वृद्ध व्यक्तियों के जीवन और संपत्ति की सुरक्षा के लिए एक उपयुक्त तंत्र के संस्थागतकरण के लिए ;

(घ) प्रत्येक जिले में वृद्धाश्रमों की स्थापना ।

4. विधेयक उपरोक्त उद्देश्यों को प्राप्त करना चाहता है ।”

8. इस प्रकार, यह पूरी तरह स्पष्ट है कि अधिनियम, 2007 वृद्धों को देखभाल और रखरखाव प्रदान करने के लिए अधिनियमित किया गया है, जिनकी संयुक्त परिवार प्रणाली के कमजोर होने के कारण उनके परिवार द्वारा ठीक से देखभाल नहीं की जाती है । इसलिए, अधिनियम, 2007 का प्राथमिक उद्देश्य उन रिश्तेदारों से भरणपोषण के संबंध में विशेष अनुतोष प्रदान करने के लिए एक तंत्र प्रदान करना है, जिन्हें अपने वृद्ध रिश्तेदारों की संपत्ति विरासत में मिली है ।

9. अधिनियम, 2007 की धारा 4 में माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों के भरणपोषण का उपबंध है । इसमें कहा गया है कि माता-पिता सहित एक वरिष्ठ नागरिक, जो अपनी खुद की कमाई से या अपने

स्वामित्व वाली संपत्ति से खुद को बनाए रखने में असमर्थ है, धारा 5 के अधीन आवेदन करने का हकदार होगा । धारा 4 की उपधारा (2), (3) और (4) के अधीन अपने माता-पिता के भरणपोषण के लिए बच्चों के दायित्व और एक वरिष्ठ नागरिक के रिश्तेदार के दायित्व के बारे में उपबंध किया गया है, बशर्ते कि वह ऐसे वरिष्ठ नागरिक की संपत्ति उसके कब्जे में हो या वह ऐसे वरिष्ठ नागरिक की संपत्ति का उत्तराधिकारी हो । इसलिए, यह उपबंध ऐसे तीसरे पक्ष के खिलाफ कोई अनुतोष प्रदान नहीं करता है जो न तो उस व्यक्ति के बच्चे हैं और न ही उसके रिश्तेदार हैं जिन्हें वरिष्ठ नागरिक की संपत्ति विरासत में मिली है या मिलेगी ।

10. हमारे सामने मामले में, अपीलार्थी ने स्वयं प्रतिवादी संख्या 4 के साथ एक किराएदारी समझौता किया, जो न तो उसके बच्चे हैं और न ही रिश्तेदार । प्रतिवादी संख्या 4 भी इस अर्थ में कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिनियम, 2007 की धारा 23 के अधीन **एस. वनिता** (उपरोक्त) वाले मामले में निर्दिष्ट मतानुसार तीसरा पक्ष नहीं है ।

11. अधिनियम, 2007 की धारा 23 के अधीन यह उपबंध किया गया है कि संपत्ति का हस्तांतरण कुछ परिस्थितियों में शून्य होना है । यह उपबंध तत्काल संदर्भ के लिए यहां पुनः प्रस्तुत किया जा रहा है :-

> "23. **कुछ परिस्थितियों में संपत्ति का हस्तांतरण शून्य होना** - (1) जहां कोई वरिष्ठ नागरिक जिसने अधिनियम के आरंभ के पश्चात् अपनी संपत्ति का दान के रूप में या अन्यथा अंतरण इस शर्त के अधीन रहते हुए किया है कि अंतरिती, अन्तरक को बुनियादी सुख-सुविधाएं और बुनियादी भौतिक आवश्यकताएं प्रदान करेगा और ऐसा अंतरिती ऐसी सुख-सुविधाएं तथा भौतिक आवश्यकताएं प्रदान करने से इनकार करेगा या असफल रहेगा तो संपत्ति का उक्त अंतरण कपट या प्रपीड़न या अनावश्यक प्रभाव के अधीन किया गया समझा जाएगा और अन्तरक के विकल्प पर अधिकरण द्वारा शून्य घोषित किया जाएगा ।
>
> (2) जहां किसी भी वरिष्ठ नागरिक को किसी सम्पदा से भरणपोषण प्राप्त करने का अधिकार है और ऐसी सम्पदा या उसका भाग अंतरित कर दिया जाता है, यदि अंतरिती को उस अधिकार

की जानकारी है या, यदि अंतरण बिना प्रतिफल के है तो भरणपोषण प्राप्त करने का अधिकार अंतरिती के विरुद्ध प्रवृत्त किया जा सकेगा – न कि उस अंतरिती के विरुद्ध जो प्रतिफल के लिए है और जिसके पास अधिकार की सूचना नहीं है ।

(3) यदि कोई वरिष्ठ नागरिक उपधारा (1) और (2) के अधीन अधिकार को प्रवर्तित करने में लागू करने में असमर्थ है तो धारा 5 की उपधारा (1) के स्पष्टीकरण में निर्दिष्ट किसी भी संगठन द्वारा उसकी ओर से कार्रवाई की जा सकेगी ।

12. धारा 23 के उपरोक्त उद्धृत उपबंध ऐसी स्थिति से संबंधित हैं जहां वरिष्ठ नागरिक संपत्ति को दान के माध्यम से या अन्यथा इस शर्त के साथ स्थानांतरित करता है कि अंतरिती हस्तांतरणकर्ता को बुनियादी सुविधाएं और बुनियादी भौतिक आवश्यकताएं प्रदान करेगा और यदि ऐसा अंतरिती इनकार करता है या ऐसी सुविधाओं तथा भौतिक आवश्यकताओं को प्रदान करने में विफल रहता है तो ऐसी स्थिति में, संपत्ति के उक्त हस्तांतरण को धोखाधड़ी या जबरदस्ती या अनुचित प्रभाव के अधीन किया गया माना जाएगा और हस्तांतरणकर्ता के विकल्प पर अधिकरण द्वारा शून्य घोषित किया जा सकता है । संपत्ति से भरणपोषण प्राप्त करने का अधिकार, जिसे एक वरिष्ठ नागरिक द्वारा हस्तांतरित किया जाता है, को हस्तांतरिती के खिलाफ लागू किया जा सकता है । यह उपबंध ऐसी स्थिति को लागू नहीं होगा जहां किराएदार के कब्जे में वह संपत्ति है जो किसी वरिष्ठ नागरिक की है और इसका पहला कारण यह है कि किराएदारी का अर्थ संपत्ति का अंतरण नहीं है, अतः, किराएदार अंतरिती नहीं है और भरणपोषण प्राप्त करने का अधिकार गृहस्वामी/वरिष्ठ नागरिक के बेदखल करने या किराए की बकाया राशि प्राप्त करने के अधिकार के बराबर नहीं है ।

13. मकान मालिक का बेदखली का अधिकार छत्तीसगढ़ किराया नियंत्रण अधिनियम, 2011 (संक्षेप में “अधिनियम, 2011”) के अधीन आता है । अधिनियम, 2011 की अनुसूची 2 में अधिनियम के अधीन उपलब्ध मकान मालिक के अधिकारों का उपबंध किया गया है । परंतुक दूसरी अनुसूची के खंड 11 के उपखंड (ज) के परंतुक अधीन वरिष्ठ नागरिक को किराएदार को एक महीने का नोटिस देकर बेदखली का

अधिकार प्रदान करता है । नोटिस की यह अवधि अन्य श्रेणी के किराएदारों के लिए 6 महीने है ।

14. इस प्रकार, वरिष्ठ नागरिक के लिए लाभकारी उपबंध भी अधिनियम, 2011 के अधीन किए गए हैं और यह ऐसा मामला नहीं है जहां मकान मालिक के वरिष्ठ नागरिक होने पर बेदखली का अधिकार अनिश्चितकाल तक दिया जाएगा । जब एक मकान मालिक को अधिनियम, 2011 के अधीन एक विशेष अनुतोष अनुज्ञात किया गया है, तो उसी अधिकार और अनुतोष को अधिनियम, 2007 के उपबंधों के साथ मात्र इस आधार पर नहीं पढ़ा जा सकता है कि इसलिए कि मकान मालिक एक वरिष्ठ नागरिक है ।

15. यदि अपीलार्थी के विद्वान् अधिवक्ता द्वारा किया गया निर्वाचन स्वीकार कर लिया जाता है तब वरिष्ठ नागरिक द्वारा निष्पादित प्रत्येक समझौते में, चाहे वह व्यावसायिक संव्यवहार हो या कोई अन्य संव्यवहार, एक आवेदन वरिष्ठ नागरिक द्वारा जिला मजिस्ट्रेट के समक्ष अधिनियम, 2007 के तहत किया जा सकता है । अधिनियम के अधीन उपबंधों का उद्देश्य और परिधि नहीं है ।

16. तीसरे पक्ष के विरुद्ध एक वरिष्ठ नागरिक के अधिकारों को अधिनियम, 2007 की धारा 23 के उपबंधों के अधीन सख्ती से नियंत्रित किया गया है और जब एक बार, ऐसा उपबंध ऐसे लेनदेन जो हस्तांतरण की कोटि में नहीं आता है, भूस्वामी पर लागू नहीं होता है, तब एक वरिष्ठ नागरिक सामान्य कानून के अधीन बेदखली की ईप्सा करनी होगी ।

17. विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप की कोई गुंजाइश नहीं है ।

18. रिट अपील में कोई सार नहीं है, यह खारिज होने योग्य है और इसे खारिज किया जाता है ।

रिट अपील खारिज की गई ।

अस.

गौतम महन्ती

बनाम

जयश्री महन्ती

(2007 की प्रथम अपील सं. 52)

तारीख 9 फरवरी, 2021

न्यायमूर्ति अपरेश कुमार सिंह और न्यायमूर्ति अनूभा रावत चौधरी

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 13(1)(i-क) – क्रूरता और अभित्यजन – पत्नी द्वारा पति के विरुद्ध दहेज की मांग के आधार पर क्रूरता का मामला दर्ज किया जाना – आपराधिक मामले में पति और उसके परिजनों की दोषमुक्ति – तत्पश्चात् पति द्वारा पत्नी के विरुद्ध क्रूरता और अभित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद का वाद फाइल किया जाना – पति-पत्नी का एक दूसरे से 22 वर्ष से अधिक समय से अलग-अलग रहना – पत्नी द्वारा पति के विरुद्ध फाइल किए गए आपराधिक मामले में अपीलार्थी-पति और उसके परिजनों की दोषमुक्ति की गई है और प्रत्यर्थी-पत्नी के समक्ष ऐसा कोई युक्तियुक्त कारण नहीं पाया गया है जिसके आधार पर उसका वैवाहिक गृह छोड़कर जाना उचित कहा जा सके ; अतः, पत्नी के विरुद्ध क्रूरता और अभित्यजन के आरोप सिद्ध होते हैं जिनके आधार पर विवाह विघटन किए जाने योग्य है और निचले न्यायालय का निर्णय न्यायोचित नहीं है ।

अपीलार्थी और प्रत्यर्थी हिन्दू समाज से हैं और उनको हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 के उपबंध लागू होते हैं । अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह तारीख 9 मई, 1997 को मनबाजार स्थित प्रतिवादी के घर में हिन्दू रीति-रिवाज के अनुसार प्रतिस्थापित हुआ था । इसके पश्चात् इस विवाह-बंधन से नवंबर, 1998 में बंगपुरा सम्मीलानी मेडिकल कालेज में इन दम्पत्तियों के यहां पुत्री ने जन्म लिया । उस समय अपीलार्थी दामोदा कोलियरी में अधिशासी अभियंता के रूप में कार्यरत था और उसे बीसीसीएल प्राधिकरण द्वारा सरकारी क्वार्टर आबंटित किया गया था ।

विवाह के पश्चात् वह अपनी पत्नी और पुत्री को सुनहरी पारिवारिक सपनों के साथ सरकारी क्वार्टर में ले गया । अपीलार्थी के माता-पिता ने वैवाहिक गृह में प्रत्यर्थी का स्वागत किया और नव-विवाहित जोड़े के साथ सभी तरह का सहयोग किया ताकि प्रत्यर्थी स्वयं को अनुकूल बना सके । वैवाहिक गृह में आने के पहले दिन से ही पत्नी का आचरण अपीलार्थी तथा उसके माता-पिता के प्रति विशिष्ट रूप से अप्रिय था । प्रत्यर्थी-पत्नी का, अपीलार्थी के माता-पिता और अन्य व्यक्तियों के प्रति अनुचित आचरण देखकर वह आश्चर्यचकित था किंतु फिर भी वह चुप रहा । "अष्ट-मंगला" की रसम के पश्चात् अपीलार्थी प्रत्यर्थी-पत्नी के साथ काठमांडू (नेपाल) हनीमून के लिए गया किंतु उसे पत्नी के आचरण को लेकर बहुत कष्ट हुआ । प्रत्यर्थी-पत्नी ने अपीलार्थी के साथ अत्यंत अप्रत्याशित व्यवहार किया और उसने स्वयं को अपने पति से पूरी तरह अलग कर लिया । उसने अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों के प्रति पूर्णतया उदासीनता दर्शायी और यहां तक कि उसने अपीलार्थी की फोन-कॉलों का भी जवाब नहीं दिया । अपीलार्थी शांति बनाए रखने के लिए प्रत्यर्थी की सभी अनुचित मांगों को पूरा करता रहता था किंतु प्रत्यर्थी-पत्नी के निरंतर दुर्व्यवहार किए जाने के कारण वैवाहिक संबंधों में सुधार आने के बजाय बिगाड़ पैदा होता रहा । अपीलार्थी ने अपनी पत्नी के संतोष और शांति के लिए बहुत प्रयास किया और यहां तक कि उसे पत्नी से थप्पड़, मुक्के और गालियां भी खानी पड़ीं । अपीलार्थी के माता-पिता और मित्रों की मौजूदगी में भी प्रत्यर्थी-पत्नी के दुर्व्यवहार ने अपीलार्थी का जीवन नरकीय बना दिया था । अपीलार्थी ने अपने माता-पिता का इकलौता पुत्र होने के नाते अत्यधिक मानसिक पीड़ा का सामना किया और वह अपने माता-पिता की शांति के लिए प्रत्यर्थी-पत्नी को अपने कार्यस्थल अर्थात् दमोदा ले गया । प्रत्यर्थी कोई भी निमंत्रण स्वीकार करने, सामाजिक सभा में सम्मिलित होने और यहां तक कि विभागीय अधिकारियों की पारिवारिक महफिलों में जाने से भी कतराता था । प्रत्यर्थी-पत्नी, अपीलार्थी-पति के लिए अधिकांशत: बिना किसी कारण खाना न तो बनाती थी और न ही उसकी कोई व्यवस्था करती थी । ऐसी स्थिति में कारण पूछे जाने पर प्रत्यर्थी-पत्नी अपीलार्थी-पति पर

नाखूनों से खरोंचें मारते हुए शारीरिक हमला करती थी । ऐसी स्थिति में अपीलार्थी अपने सास-श्वसुर की सहायता लेता था किंतु स्थिति ठीक होने के बजाय और बिगड़ जाया करती थी । अंत में, अपीलार्थी के पास कोई अन्य विकल्प न होने की स्थिति में उसने अपने सास-श्वसुर से प्रत्यर्थी-पत्नी को कुछ दिन के लिए इस आशा से अपने साथ ले जाने को कहा कि उनके साथ रहकर और उनसे अच्छी सलाह पाकर प्रत्यर्थी-पत्नी के व्यवहार और आचरण में सुधार आ सकता है । इस दौरान प्रत्यर्थी-पत्नी गर्भवती हो गई थी । तथापि, इस गर्भावस्था के कारण प्रत्यर्थी-पत्नी न केवल अपीलार्थी के प्रति अपितु अजन्मी संतान के प्रति भी और अधिक क्रूरतापूर्ण व्यवहार करने लगी । प्रत्यर्थी-पति द्वारा गालियों का प्रयोग किए जाने और शारीरिक यातनाएं पहुंचाने का कृत्य अपीलार्थी के जीवन में प्रतिदिन होता था और अपीलार्थी के माता-पिता और उसके मित्र यह सब देखते रहते थे । स्थिति इतनी गंभीर हो गई कि अपीलार्थी-पति को वास्तव में अपनी वैयक्तिक सुरक्षा का भय होने लगा और उसने अन्य लोगों को अपनी मानसिक स्थिति के बारे में बताया । पूरी तरह निराश और भयोपरत होकर अपीलार्थी मानसिक रूप से टूट गया । अपीलार्थी के पिता ने ऐसी स्थिति देखकर प्रत्यर्थी के पिता को बुलाने और कोई फैसला लेने का निवेदन किया । प्रत्यर्थी का पिता वहां पहुंचा और सभी बातों पर ध्यान देने के पश्चात् वह अपनी पुत्री को उसके सभी सामान के साथ ले गया । प्रत्यर्थी के पिता द्वारा यह प्रकट किया गया कि प्रत्यर्थी का प्रसव होने तथा उसके पूरी तरह ठीक हो जाने के पश्चात् वह अपीलार्थी को सूचित करेगा । प्रत्यर्थी-पत्नी को, जून, 1998 में अंतिम बार प्रस्थान किए जाने के पूर्व, अपीलार्थी द्वारा बोकारो स्टील नगर स्थित अपीलार्थी के पिता के क्वार्टर पर लाया गया जहां प्रत्यर्थी-पत्नी 7-10 दिन तक रही । उन दिनों प्रत्यर्थी-पत्नी ने 2-3 बार अत्यंत क्रोधपूर्ण व्यवहार किया और उसके नखरे कई घंटों तक बने रहे । प्रत्यर्थी-पत्नी का उद्देश्य अपीलार्थी-पति को मात्र शारीरिक यातना पहुंचाना ही नहीं था अपितु उसके साथ यथासंभव अभद्र भाषा का प्रयोग भी करना था । फिर भी अपीलार्थी, प्रत्यर्थी-पत्नी के बाबत जानकारी फोन पर लेता रहता था । दुर्भाग्यवश एक बार पत्नी द्वारा ऐसे अपशब्द कहे गए कि पति को बात

करते-करते फोन-कॉल काटनी पड़ी । अपीलार्थी को नवंबर, 1998 के पहले सप्ताह में प्रत्यर्थी के अस्पताल में भर्ती होने और बच्चे को जन्म देने के संबंध में सूचना भी नहीं दी गई थी । अपीलार्थी यह देखकर हैरान रह गया कि उसकी पत्नी ने उसके, माता-पिता और उसकी वैवाहिक बहन के विरुद्ध मिथ्या और बनावटी अभिकथनों के आधार पर विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, पुरूलिया के समक्ष शिकायत फाइल की है । इस शिकायत के आधार पर भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 498क/406/34 और दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 4/5 के अधीन पुलिस थाना मनबाजार में मामला सं. 48/99 अपीलार्थी और उसके परिवार की छवि दूषित करने हेतु संस्थापित किया गया । प्रत्यर्थी-पत्नी का आचरण ऐसा हो गया कि अपीलार्थी-पति के लिए और अधिक सहन करना कठिन हो गया था और साथ-साथ रहना असंभव हो गया था । यह प्रकथन किया गया है कि प्रत्यर्थी ने शारीरिक और मानसिक रूप से कई तरीकों से, जैसाकि ऊपर कहा गया है, क्रूरता कारित की है और अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह-बंधन अपरिहार्य रूप से टूट गया है और इसे पुनरुज्जीवित नहीं किया जा सकता । अपीलार्थी ने यह कथन किया है कि इस विवाह-बंधन को जारी रखना अनुकूल नहीं होगा । वाद हेतुक कुटुंब न्यायालय की अधिकारिता के अधीन 9 मई, 1997 अर्थात् विवाह अनुष्ठापित किए जाने के समय, नवंबर, 1998 में और दिसंबर, 1999 में जब प्रत्यर्थी ने पश्चात्वर्ती कई तारीखों में मिथ्या और निराधार आपराधिक कार्यवाही संस्थित की थी, को सृजित होता है जो अभी भी बना हुआ है । 2003 के सिविल वाद सं. 13 में विद्वान् प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, बोकारो द्वारा तारीख 30 मार्च, 2007 को पारित उस निर्णय तथा तारीख 9 अप्रैल, 2007 को पारित उस डिक्री के विरुद्ध प्रथम अपील फाइल की है जिसके द्वारा हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 के अधीन क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद का वाद खारिज किया गया है । पति ने प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, बोकारो के तारीख 9 अप्रैल, 2007 के आदेश से व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रत्यर्थी की ओर से रवीन्दर कौर वाले मामले में किए

गए उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब इस प्रतिपादना के आधार पर लिया गया है कि पत्नी द्वारा अपनी संरक्षा और संपत्ति की सुरक्षा के लिए संस्थित की गई विधिक कार्यवाही को मानसिक क्रूरता नहीं माना जा सकता । ऐसे उदाहरणों से यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि विवाह असाध्य रूप से समाप्त हो गया है । वर्तमान मामले के तथ्यों को दृष्टिगत करते हुए प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा वर्ष 1999 में संस्थित की गई आपराधिक कार्यवाही में, जो वर्ष 2011 तक चली, अपीलार्थी और उसके परिजनों की दोषमुक्ति की गई क्योंकि अभियोजन पक्ष शिकायतकर्ता और उसके परिवार के सदस्यों सहित आठ अभियोजन साक्षियों की परीक्षा कराए जाने के बावजूद युक्तियुक्त संदेह के परे आरोप साबित करने में असफल रहा । मिथ्या अभिकथनों के कारण अभियुक्तों की दोषमुक्ति होना एक बात है और साथ ही ऐसे आरोपों के आधार पर, जिन्हें प्रत्यर्थी-पत्नी 12 वर्ष तक विचारण चलाए जाने के बाद भी साबित नहीं कर सकी, यह कहा जा सकता है कि यह कार्यवाही अपीलार्थी और उसके परिजनों के साथ मानसिक क्रूरता कारित किए जाने की कोटि में आएगी । ऐसे अभिकथनों के आधार पर अभियुक्तों को अनावश्यक गिरफ्तारी से बचने के लिए उच्चतम न्यायालयों के समक्ष गुहार लगानी पड़ी । उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि एक समुचित मामले में दहेज की मांग का मिथ्या अभिकथन या इसी प्रकार का अन्य कोई अभिकथन पति और उसके परिजनों के विरुद्ध किया जाता है और उन्हें ऐसे आपराधिक मुकदमों का सामना करना पड़ता है जो अवांछनीय और निराधार पाए जाते हैं तब ऐसी कार्यवाही को उस समय मानसिक क्रूरता की कोटि में रखा जाएगा जब पति ने पत्नी के विरुद्ध विवाह विघटन के लिए आवेदन किया हो । वर्तमान मामले में वादी/अपीलार्थी ने न केवल अभिकथित क्रूरता कारित की है अपितु दहेज की मांग किए जाने का मिथ्या अभिकथन भी किया है और यह भी अभिकथन किया है कि दहेज की मांग पूरी न किए जाने के कारण उसके साथ यातनापूर्ण व्यवहार भी किया गया था । उसने यह भी अभिकथन किया है कि अपीलार्थी और उसके माता-पिता एवम बहिन को पुरूलिया न्यायालय से कलकत्ता उच्च न्यायालय और वहां से माननीय उच्चतम

न्यायालय का द्वार खटखटाना पड़ा ताकि अवांछनीय गिरफ्तारी से संरक्षा मिल सके । दहेज की मांग और यातनापूर्ण व्यवहार किए जाने के अभिकथन संपूर्ण विचारण प्रक्रिया के बावजूद भी साबित न हो सके । अत:, प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा किया गया कृत्य अपीलार्थी के साथ मानसिक क्रूरता कारित किए जाने की कोटि में आता है । उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अभित्यजन का अपराध तब कारित होता है जब पृथक्करण और विद्वेष का तथ्य विद्यमान होता है । किंतु यह आवश्यक नहीं है कि ये दोनों अवयव एक साथ घटित हों । तथ्यत: पृथक्करण विद्वेष की भावना के बिना भी कारित हो सकता है और ऐसा भी हो सकता है कि पृथक्करण और शत्रुभाव एक साथ घटित हों ; उदाहरण के लिए जब अभित्याजक दंपत्ति वैवाहिक गृह ऐसे स्पष्ट या विवक्षित आशय के साथ छोड़कर जाता है कि वह अब स्थायी रूप से सहवास बंद कर देगा तब उपरोक्त स्थिति पाई जाती है । वर्तमान मामले में, यह देखना होगा कि क्या अभित्यक्त दंपत्ति अर्थात् अपीलार्थी द्वारा सम्मति नहीं दी गई है और उसके द्वारा ऐसा आचरण भी नहीं किया गया है जिसके आधार पर दूसरा दंपत्ति वैवाहिक गृह छोड़ने का आवश्यक रूप से आशय कर सके । अभित्याजक दंपत्ति के लिए दो शर्तों का समाधान किया जाना चाहिए अर्थात् पृथक्करण होना चाहिए और दूसरी शर्त यह कि सहवास को स्थायी रूप से बंद करने के लिए विद्वेष या शत्रुभाव होना चाहिए । दहेज की मांग किए जाने का अभिकथन और मांग पूरी न किए जाने के परिणामस्वरूप यातनापूर्ण व्यवहार किए जाने से प्रत्यर्थी ने यह उपधारित किया कि जून, 1998 में वैवाहिक गृह छोड़कर जाने हेतु उसके पास युक्तियुक्त कारण था किंतु वर्ष 1999 में संस्थित किए गए आपराधिक मामले में अपीलार्थी और उसके परिजनों की जो दोषमुक्ति की गई थी उससे यह सिद्ध होता है कि अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को ऐसा कोई युक्तियुक्त कारण नहीं दिया जिसके आधार पर वह वैवाहिक गृह छोड़कर जाती, इस प्रकार संपूर्ण विचारण प्रक्रिया के उपरांत भी प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा आरोप सिद्ध नहीं किया जा सका । प्रत्यर्थी जून, 1998 में वैवाहिक गृह छोड़कर चले जाने के बाद अभी तक वापस नहीं आई है । इन परिस्थितियों में यह निष्कर्ष

निकलता है कि यद्यपि प्रत्यर्थी-पत्नी के जून, 1998 में वैवाहिक गृह छोड़कर चले जाने से भौतिक पृथक्करण तो हुआ है किंतु इन वर्षों के दौरान दाम्पत्य जीवन का पुन: आरंभ न होने से प्रत्यर्थी-पति द्वारा शत्रुभाव रखे जाने का निष्कर्ष निकलता है अर्थात् यह पता चलता है कि प्रत्यर्थी-पत्नी स्थायी रूप से बंद करना चाहती थी । अत: प्रत्यर्थी पर लगाया गया अभित्यजन का आरोप सिद्ध होता है । वैवाहिक वाद की कार्यवाही आपराधिक विचारण और वर्तमान अपील जो 14 वर्ष से अधिक समय से लंबित है, से पक्षकारों के बीच ऐसी दूरी बन गई है जिससे यह अहसास होता है कि यह विवाह-बंधन असाध्य रूप से समाप्त हो गया है । यद्यपि हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 के अधीन विवाह का असाध्य विघटन विवाह-विच्छेद का कोई मान्य आधार नहीं है किंतु अन्य सुस्थापित आधारों पर संचयी रूप से विचार करने पर यह पता चलता है कि विवाह-विच्छेद के अभिवाक् को विनिश्चित करते समय ऐसे अतिरिक्त कारक को भी ध्यान में रखना चाहिए । यह सत्य है कि तारीख 5 नवंबर, 1998 को इस विवाह-बंधन से पुत्री ने जन्म लिया था जिसकी आयु अब 21 वर्ष है जो एम. टेक पाठ्यक्रम की छात्रा है जिसके भविष्य और विवाह संबंधी संभावनाओं पर ध्यान देना होगा किंतु केवल 13 मास के दाम्पत्य जीवन के पश्चात् लगभग 22 वर्ष के लंबे समय तक अलग-अलग रहने के तथ्य से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि पति-पत्नी के बीच ऐसा कोई भावनात्मक संबंध नहीं बचा है जिसे पुनर्जीवित किया जा सके । विवाह केवल एक विधिक बंधन है । जब वैवाहिक बंधन सुधार के परे हो जाए तब ऐसे मामलों में विधि विवाह की पवित्रता को महत्व नहीं दे पाती है । इसके प्रतिकूल, पक्षकारों की भावनाओं को बहुत ही कम महत्व दिया जाता है । ऐसी परिस्थितियों से दोनों के साथ क्रूरता कारित हो सकती है, जैसाकि समर घोष वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है जिसमें पति-पत्नी 16 वर्ष 6 महीने से भी अधिक समय से अलग-अलग रह रहे थे । वर्तमान मामले में, पति-पत्नी को अलग-अलग रहते हुए अब तक 22 वर्ष से अधिक समय बीत चुका है । अत: हमारी सुविचारित राय में प्रत्यर्थी-पत्नी के विरुद्ध क्रूरता और अभित्यजन जैसे दोनों ही आरोप सिद्ध

होते हैं और चूंकि दोनों पक्षकार 22 वर्ष से अधिक समय से अलग-अलग रह रहे हैं इसलिए हमारा यह मत है कि यह विवाह विघटित किए जाने योग्य है । तदनुसार, पक्षकारों के बीच विवाह विघटित किया जाता है । अपीलार्थी भारत कोकिंग कोल लिमिटेड क्षेत्र सं. 3, धनबाद में मुख्य अभियंता (विद्युत एवं यांत्रिक) है । एक प्रश्न के उत्तर में अपीलार्थी ने यह कथन किया है कि उसकी कुल आय 1,80,000/- रुपए है और उसमें से 80,000/- रुपए प्रतिमाह ही प्रत्याहृत करता है । अपीलार्थी ने यह कथन किया है कि उसकी अभी 5 वर्ष की सेवा शेष है । अपीलार्थी ने यह भी कथन किया है कि उसकी अपनी पुत्री के विवाह के लिए 3,00,000/- रुपए का भी निवेश किया है । तारीख 2 फरवरी, 2016 के आदेश के अनुसरण में प्रत्यर्थी और उसकी पुत्री क्रमश: 10,000/- रुपए और 5,000/- रुपए भरणपोषण के रूप में प्राप्त कर रहे हैं । प्रत्यर्थी की स्पष्ट रूप से अन्य किसी भी स्रोत से आमदनी नहीं है और उसकी पुत्री भी आश्रित के रूप में एम. टेक पाठ्यक्रम में पढ़ाई कर रही है । वास्तव में तारीख 17 सितंबर, 2020 के इस न्यायालय के पूर्ववर्ती आदेश द्वारा अपीलार्थी ने अपनी पुत्री की आधी फीस अर्थात् 70,500/- रुपए एम. टेक पाठ्यक्रम (वायरलैस टेक्नोलॉजी, टेली कम्युनिकेशन एण्ड इलेक्ट्रोनिक्स, बी.आई.टी. मेसरा) के प्रथम वर्ष में जमा किए थे । इन सभी बातों को दृष्टिगत करते हुए हमारी यह सुविचारित राय है कि अपीलार्थी 25,00,000/- (पच्चीस लाख) रुपए का संदाय स्थायी निर्वाहिका के रूप में करेगा । 25,00,000/- (पच्चीस लाख) रुपए में से 15,00,000/- (पन्द्रह लाख) रुपए प्रत्यर्थी पत्नी को और 10,00,000/- (दस लाख) रुपए पुत्री को दिए जाएंगे । पुत्री को दी गई 10,00,000/- रुपए की इस धन राशि में से 4,00,000/- रुपए का प्रयोग उसकी शिक्षा के लिए और 6,00,000/- रुपए उसके विवाह के प्रयोजनार्थ रखे जाएंगे । अपीलार्थी द्वारा पुत्री के नाम में जो निवेश किया गया है उस राशि का संवितरण भी उसके विवाह के समय किया जा सकता है । अपीलार्थी स्थायी निर्वाहिका की राशि का संदाय डिक्री की तारीख से 4 मास के भीतर करेगा । स्थायी निर्वाहिका का संदाय किए जाने पर अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी और उसकी पुत्री को संदाय किया जा रहा अंतरिम भरणपोषण

समाप्त कर दिया जाएगा । विद्वान् मुख्य न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय बोकारो द्वारा 2003 के वाद सं. 13 में पारित तारीख 30 मार्च, 2007 का आक्षेपित निर्णय और तारीख 9 अप्रैल, 2007 को पारित डिक्री अपास्त किए जाते हैं । अपील मंजूर की जाती है । तदनुसार डिक्री पारित की जाए । (पैरा 21, 22, 24, 25 और 26)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2020]	ए. आई. आर. 2020 एस. सी. 1198 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2020 एस. सी. 284 : **मंगयाकरसी** बनाम **एम. युवराज** ;	15
[2019]	2019 एस. सी. सी. ऑनलाइन (छत्तीसगढ़) 89 : **चांदना सिंह** बनाम **संगीता सिंह** ;	12, 15
[2019]	(2019) 8 एस. सी. सी. 308 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2019 एस. सी. 881 : **रविन्दर कौर** बनाम **मंजीत सिंह (मृत) द्वारा विधिक प्रतिनिधि** ;	15
[2018]	2018 एस. सी. सी. ऑनलाइन (झारखंड) 1776 : **अजय नारायण दास** बनाम **आशा देवी** ;	12
[2014]	(2014) 16 एस. सी. सी. 34 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2014 एस. सी. 147 : **के. श्रीनिवास** बनाम **के. सुनीता** ;	14, 17, 19, 20
[2013]	(2013) 5 एस. सी. सी. 226 = ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 2176 : **के. श्रीनिवास राव** बनाम **डी. ए. दीपा** ;	14
[2011]	2011 एस. सी. सी. ऑनलाइन (कलकत्ता) 976 : **पलश चन्द्र करन** बनाम **सुजाता करन** ;	14
[2010]	(2010) 4 एस. सी. सी. 476 = ए. आई. आर. 2010 एस. सी. (सप्ली.) 544 : **रवि कुमार** बनाम **जुल्मी देवी** ;	14

[2007]	(2007) 4 एस. सी. सी. 511 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2007 एस. सी. 347 : **समर घोष** बनाम **जया घोष** ;	22, 24
[2002]	(2002) 2 एस. सी. सी. 73 = ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 591 : **सावित्री पांडे** बनाम **प्रेम चंद पांडे** ;	23
[2002]	(2002) 2 एस. सी. सी. 256 = ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 665 : **ओम प्रकाश गुप्ता** बनाम **रनबीर बी. गोयल ।**	14

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2007 की प्रथम अपील सं. 52.

2003 के सिविल वाद सं. 13 में विद्‌वान् प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, बोकारो द्‌वारा तारीख 30 मार्च, 2007 को पारित निर्णय तथा तारीख 9 अप्रैल, 2007 को पारित डिक्री के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से स्वयं अपीलार्थी

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री रोहिताशय रॉय

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अपरेश कुमार सिंह ने दिया ।

न्या. सिंह – अपीलार्थी की सुनवाई की गई है जो न्यायालय में स्वयं पेश हुआ है और प्रत्यर्थी की ओर से श्री रोहिताशय रॉय पेश हुए हैं ।

2. 2003 के सिविल वाद सं. 13 में विद्‌वान् प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, बोकारो द्‌वारा तारीख 30 मार्च, 2007 को पारित उस निर्णय तथा तारीख 9 अप्रैल, 2007 को पारित उस डिक्री के विरुद्ध प्रथम अपील फाइल की है जिसके द्‌वारा हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 के अधीन क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद का वाद खारिज किया गया है ।

3. संक्षेप में अपीलार्थी का मामला इस प्रकार है –

अपीलार्थी और प्रत्यर्थी हिन्दू समाज से हैं और उनको हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 के उपबंध लागू होते हैं । अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह तारीख 9 मई, 1997 को मनबाजार स्थित प्रतिवादी के घर

में हिन्दू रीति-रिवाज के अनुसार प्रतिस्थापित हुआ था । इसके पश्चात् इस विवाह-बंधन से नवंबर, 1998 में बंगपुरा सम्मीलानी मेडिकल कालेज में इन दम्पत्तियों के यहां पुत्री ने जन्म लिया । उस समय अपीलार्थी दामोदा कोलियरी में अधिशासी अभियंता के रूप में कार्यरत था और उसे बीसीसीएल प्राधिकरण द्वारा सरकारी क्वार्टर आबंटित किया गया था । विवाह के पश्चात् वह अपनी पत्नी और पुत्री को सुनहरी पारिवारिक सपनों के साथ सरकारी क्वार्टर में ले गया । अपीलार्थी के माता-पिता ने वैवाहिक गृह में प्रत्यर्थी का स्वागत किया और नव-विवाहित जोड़े के साथ सभी तरह का सहयोग किया ताकि प्रत्यर्थी स्वयं को अनुकूल बना सके । वैवाहिक गृह में आने के पहले दिन से ही पत्नी का आचरण अपीलार्थी तथा उसके माता-पिता के प्रति विशिष्ट रूप से अप्रिय था । प्रत्यर्थी-पत्नी का, अपीलार्थी के माता-पिता और अन्य व्यक्तियों के प्रति अनुचित आचरण देखकर वह आश्चर्यचकित था किंतु फिर भी वह चुप रहा । "अष्ट-मंगला" की रसम के पश्चात् अपीलार्थी प्रत्यर्थी-पत्नी के साथ काठमांडू (नेपाल) हनीमून के लिए गया किंतु उसे पत्नी के आचरण को लेकर बहुत कष्ट हुआ । प्रत्यर्थी-पत्नी ने अपीलार्थी के साथ अत्यंत अप्रत्याशित व्यवहार किया और उसने स्वयं को अपने पति से पूरी तरह अलग कर लिया । उसने अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों के प्रति पूर्णतया उदासीनता दर्शायी और यहां तक कि उसने अपीलार्थी की फोन-कॉलों का भी जवाब नहीं दिया । अपीलार्थी शांति बनाए रखने के लिए प्रत्यर्थी की सभी अनुचित मांगों को पूरा करता रहता था किंतु प्रत्यर्थी-पत्नी के निरंतर दुर्व्यवहार किए जाने के कारण वैवाहिक संबंधों में सुधार आने के बजाय बिगाड़ पैदा होता रहा । अपीलार्थी ने अपनी पत्नी के संतोष और शांति के लिए बहुत प्रयास किया और यहां तक कि उसे पत्नी से थप्पड़, मुक्के और गालियां भी खानी पड़ीं । अपीलार्थी के माता-पिता और मित्रों की मौजूदगी में भी प्रत्यर्थी-पत्नी के दुर्व्यवहार ने अपीलार्थी का जीवन नरकीय बना दिया था । अपीलार्थी ने अपने माता-पिता का इकलौता पुत्र होने के नाते अत्यधिक मानसिक पीड़ा का सामना किया और वह अपने माता-पिता की शांति के लिए प्रत्यर्थी-पत्नी को अपने कार्यस्थल अर्थात् दमोदा ले गया । प्रत्यर्थी कोई भी निमंत्रण स्वीकार करने, सामाजिक सभा में सम्मिलित होने और यहां तक कि विभागीय अधिकारियों की पारिवारिक महफिलों में जाने से भी कतराता

था । प्रत्यर्थी-पत्नी, अपीलार्थी-पति के लिए अधिकांशत: बिना किसी कारण खाना न तो बनाती थी और न ही उसकी कोई व्यवस्था करती थी । ऐसी स्थिति में कारण पूछे जाने पर प्रत्यर्थी-पत्नी अपीलार्थी-पति पर नाखूनों से खरोंचें मारते हुए शारीरिक हमला करती थी । ऐसी स्थिति में अपीलार्थी अपने सास-श्वसुर की सहायता लेता था किंतु स्थिति ठीक होने के बजाय और बिगड़ जाया करती थी ।

4. अंत में, अपीलार्थी के पास कोई अन्य विकल्प न होने की स्थिति में उसने अपने सास-श्वसुर से प्रत्यर्थी-पत्नी को कुछ दिन के लिए इस आशा से अपने साथ ले जाने को कहा कि उनके साथ रहकर और उनसे अच्छी सलाह पाकर प्रत्यर्थी-पत्नी के व्यवहार और आचरण में सुधार आ सकता है । इस दौरान प्रत्यर्थी-पत्नी गर्भवती हो गई थी । तथापि, इस गर्भावस्था के कारण प्रत्यर्थी-पत्नी न केवल अपीलार्थी के प्रति अपितु अजन्मी संतान के प्रति भी और अधिक क्रूरतापूर्ण व्यवहार करने लगी । प्रत्यर्थी-पति द्वारा गालियों का प्रयोग किए जाने और शारीरिक यातनाएं पहुंचाने का कृत्य अपीलार्थी के जीवन में प्रतिदिन होता था और अपीलार्थी के माता-पिता और उसके मित्र यह सब देखते रहते थे । स्थिति इतनी गंभीर हो गई कि अपीलार्थी-पति को वास्तव में अपनी वैयक्तिक सुरक्षा का भय होने लगा और उसने अन्य लोगों को अपनी मानसिक स्थिति के बारे में बताया । पूरी तरह निराश और भयोपरत होकर अपीलार्थी मानसिक रूप से टूट गया । अपीलार्थी के पिता ने ऐसी स्थिति देखकर प्रत्यर्थी के पिता को बुलाने और कोई फैसला लेने का निवेदन किया । प्रत्यर्थी का पिता वहां पहुंचा और सभी बातों पर ध्यान देने के पश्चात् वह अपनी पुत्री को उसके सभी सामान के साथ ले गया । प्रत्यर्थी के पिता द्वारा यह प्रकट किया गया कि प्रत्यर्थी का प्रसव होने तथा उसके पूरी तरह ठीक हो जाने के पश्चात् वह अपीलार्थी को सूचित करेगा । प्रत्यर्थी-पत्नी को, जून, 1998 में अंतिम बार प्रस्थान किए जाने के पूर्व, अपीलार्थी द्वारा बोकारो स्टील नगर स्थित अपीलार्थी के पिता के क्वार्टर पर लाया गया जहां प्रत्यर्थी-पत्नी 7-10 दिन तक रही । उन दिनों प्रत्यर्थी-पत्नी ने 2-3 बार अत्यंत क्रोधपूर्ण व्यवहार किया और उसके नखरे कई घंटों तक बने रहे । प्रत्यर्थी-पत्नी

का उद्देश्य अपीलार्थी-पति को मात्र शारीरिक यातना पहुंचाना ही नहीं था अपितु उसके साथ यथासंभव अभद्र भाषा का प्रयोग भी करना था । फिर भी अपीलार्थी, प्रत्यर्थी-पत्नी के बाबत जानकारी फोन पर लेता रहता था । दुर्भाव्यवश एक बार पत्नी द्वारा ऐसे अपशब्द कहे गए कि पति को बात करते-करते फोन-कॉल काटनी पड़ी । अपीलार्थी को नवंबर, 1998 के पहले सप्ताह में प्रत्यर्थी के अस्पताल में भर्ती होने और बच्चे को जन्म देने के संबंध में सूचना भी नहीं दी गई थी । अपीलार्थी यह देखकर हैरान रह गया कि उसकी पत्नी ने उसके, माता-पिता और उसकी वैवाहिक बहन के विरुद्ध मिथ्या और बनावटी अभिकथनों के आधार पर विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, पुरूलिया के समक्ष शिकायत फाइल की है । इस शिकायत के आधार पर भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 498क/406/34 और दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 4/5 के अधीन पुलिस थाना मनबाजार में मामला सं. 48/99 अपीलार्थी और उसके परिवार की छवि दूषित करने हेतु संस्थापित किया गया । प्रत्यर्थी-पत्नी का आचरण ऐसा हो गया कि अपीलार्थी-पति के लिए और अधिक सहन करना कठिन हो गया था और साथ-साथ रहना असंभव हो गया था । यह प्रकथन किया गया है कि प्रत्यर्थी ने शारीरिक और मानसिक रूप से कई तरीकों से, जैसाकि ऊपर कहा गया है, क्रूरता कारित की है और अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह-बंधन अपरिहार्य रूप से टूट गया है और इसे पुनरुज्जीवित नहीं किया जा सकता । अपीलार्थी ने यह कथन किया है कि इस विवाह-बंधन को जारी रखना अनुकूल नहीं होगा । वाद हेतुक कुटुंब न्यायालय की अधिकारिता के अधीन 9 मई, 1997 अर्थात् विवाह अनुष्ठापित किए जाने के समय, नवंबर, 1998 में और दिसंबर, 1999 में जब प्रत्यर्थी ने पश्चात्वर्ती कई तारीखों में मिथ्या और निराधार आपराधिक कार्यवाही संस्थित की थी, को सृजित होता है जो अभी भी बना हुआ है ।

प्रत्यर्थी का पक्षकथन

5. प्रत्यर्थी ने अपने लिखित कथन में यह उल्लेख किया है कि वाद के लिए कोई वाद हेतुक नहीं है और यह वाद विधि की दृष्टि से और अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत किए गए तथ्यों के आधार पर चलने योग्य नहीं

है । प्रत्यर्थी के पास यह विश्वास करने का कारण है कि अपीलार्थी के पिता ने अपीलार्थी को अर्जी पर हस्ताक्षर करने के लिए विवश किया था जो अपीलार्थी के पिता द्वारा बोल-बोलकर लिखाई गई थी क्योंकि अपीलार्थी के श्वसुर ने कार खरीदने के लिए दहेज के रूप में 3 लाख रुपए की अतिरिक्त मांग पूरी नहीं कर सका था । यह भी कथन किया गया है कि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी हिन्दू हैं और उनको हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 लागू होता है । अपीलार्थी और प्रत्यर्थी का विवाह पुलिस थाना मनबाजार के क्षेत्राधिकार के अधीन मनबाजार, जिला पुरूलिया में 9 मई, 1997 को हिन्दू रीति-रिवाज के अनुसार अनुष्ठापित हुआ था । विवाह के पश्चात् प्रत्यर्थी-पत्नी अपने वैवाहिक गृह गई और अपने पति के साथ रहने लगी । "अष्टमंगला" की रसम के समय अपीलार्थी और प्रत्यर्थी तारीख 16 मई, 1997 को मनबाजार वापस आए और केवल वहां एक दिन वास किया । इसके पश्चात् अपीलार्थी और प्रत्यर्थी मई, 1997 से अक्तूबर, 1997 तक कुछ दिनों को छोड़कर अर्थात् दुर्गा-पूजा के दौरान प्रत्यर्थी मनबाजार स्थित अपने मायके गई थी, बोकारो में पति-पत्नी के रूप में एक साथ रहने लगे । अपीलार्थी और प्रत्यर्थी मार्च, 1998 तक अपीलार्थी के जमाडोबा स्थित क्वार्टर में रहते थे । इसी दौरान प्रत्यर्थी ने गर्भ धारण कर लिया और उसे चिकित्सा जांच के लिए बोकारो लाया गया । डा. लिमाया और अन्य चिकित्सकों द्वारा उसका उपचार किया गया । प्रत्यर्थी द्वारा यह कथन किया गया कि अपीलार्थी उसके अपने माता-पिता के कहने में आकर मोटरकार दहेज में प्रत्यर्थी-पत्नी के पिता द्वारा न दिए जाने के कारण दुर्व्यवहार किया करता था । सुसराल के सदस्यों द्वारा यातनापूर्ण व्यवहार किए जाने तथा उसके साथ लापरवाही बरते जाने के कारण प्रत्यर्थी-पत्नी गंभीर रूप से बीमार पड़ गई । अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी-पत्नी से कहा कि वे अपने पिता को चिकित्सा जांच कराने हेतु धन के लिए लिखे और तद्नुसार प्रत्यर्थी का पिता बोकारो गया और उसने प्रत्यर्थी के इलाज के लिए 10 हजार रुपए दिए । प्रत्यर्थी को प्रसव के समय बंकुरा सोमलानी मेडिकल कालेज अस्पताल में भर्ती कराया गया और उसने उक्त अस्पताल में पुत्री को जन्म दिया । अपीलार्थी और उसके परिवार के सदस्य प्रत्यर्थी से मिलने नहीं आए और न ही बच्चे के जन्म के पश्चात् उसकी कोई खबर ली गई । यह कथन किया गया है कि विवाह

के समय प्रत्यर्थी के पिता ने 2,10,000/- रुपए का एक बैंक ड्राफ्ट अपीलार्थी को दिया था और 1,50,000/- रुपए की प्रत्यर्थी के नाम में एफडी कर दी गई । अपीलार्थी को विवाह के समय 1,00,000/- रुपए के सोने के आभूषण भी दिए थे । अपीलार्थी ने कार खरीदने के लिए 3,00,000/- रुपए की मांग की थी और इस मांग के पूरा न किए जाने पर अपीलार्थी-प्रत्यर्थी को वापस बोकारो लेकर नहीं गया जहां माता-पिता और अपीलार्थी के परिवार के अन्य सदस्य ठहरे हुए थे । यह भी कथन किया गया है कि अपीलार्थी तारीख 28 नवंबर, 1999 को मनबाजार आया था और प्रत्यर्थी को धमकी देकर यह कहा था कि वह उसे तब तक अपने घर में शरण नहीं देगा जब तक वह 3,00,000/- रुपए का संदाय नहीं कर देती है । अपीलार्थी द्वारा पैरा 5 में किए गए अभिकथन पूर्णतया मिथ्या और आशयित हैं । प्रत्यर्थी के पास उसके विवाह पूर्व से 50,000/- रुपए की राशि जमा थी । यह दलील दी गई है कि प्रत्यर्थी ने किसी भी समय अपीलार्थी से कोई मांग नहीं की और न ही उस पर कभी कोई दबाव डाला । अपीलार्थी के विरुद्ध यह भी अभिकथन किया गया है कि अपीलार्थी का आचरण असहनीय विद्वेषपूर्ण और अभद्र है । प्रत्यर्थी के विरुद्ध किया गया यह अभिकथन कि अपीलार्थी उसके नखरों से मानसिक और शारीरिक रूप से परेशान था, पूर्णतया मिथ्या और कुप्रेरित है । प्रत्यर्थी को उसके कार्यस्थल "दमोहा" में निवास करने के लिए ले जाया गया क्योंकि अपीलार्थी के माता-पिता ने पति-पत्नी के शांतिपूर्वक रहने के लिए ऐसा करना उचित समझा था । प्रत्यर्थी ने वाद के पैरा 8 में किए गए सभी अभिकथनों से इनकार किया है । पैरा 9 में किए गए अभिकथनों से भी इस आधार पर इनकार किया गया है कि वे मिथ्या और कुप्रेरित हैं । जब कभी आमंत्रित किया जाता था, प्रत्यर्थी सार्वजनिक सभाओं और अधिकारियों की घरेलू महफिल में भाग लिया करती थी और अपीलार्थी के सहकर्मी और उसके परिवार के सदस्य प्रत्यर्थी-पत्नी के मृदु स्वभाव की प्रशंसा किया करते थे । प्रत्यर्थी स्वादिष्ट खाना बनाने और उसे अपीलार्थी को परोसने जैसा घर का संपूर्ण कार्य किया करती थी । यह भी कथन किया गया है कि जब अपीलार्थी, प्रत्यर्थी के गर्भवती रहने के दौरान गंभीर रूप से रोगग्रस्त हो गया था, तब प्रत्यर्थी के पिता को चिकित्सा व्यवसायी होने के नाते बुलाया गया था । प्रत्यर्थी-पत्नी को अपीलार्थी के पास भेज दिया गया क्योंकि

अपीलार्थी का स्वास्थ्य गंभीर रूप से बिगड़ गया था । यह भी कथन किया गया है कि एक अवसर पर अपीलार्थी तारीख 28 नवंबर, 1999 को मनबाजार आया और प्रत्यर्थी को धमकी देते हुए कार खरीदने के लिए 3,00,000/- रुपए की अतिरिक्त मांग की । मांग पूरी करने से इनकार किए जाने पर प्रत्यर्थी को लात मारी गई और अपीलार्थी ने उसकी हत्या करने का प्रयास किया । इस प्रकार पुरूलिया न्यायालय में एक आपराधिक मामला फाइल किया गया । वाद के पैरा 15 से सही स्थिति का पता नहीं चलता है । प्रत्यर्थी ने यह निवेदन किया है कि पूर्वोक्त तथ्यों को दृष्टिगत करते हुए कोई भी वाद हेतुक साबित नहीं होता है क्योंकि विवाह जिला पुरूलिया के मनबाजार में तारीख 9 मई, 1997 को अनुष्ठापित हुआ था और नवंबर, 1998 तथा दिसंबर, 1999 में भी वाद हेतुक नहीं बनता है ।

6. पक्षकारों के परस्पर विरोधी अभिवाकों के आधार पर कुटुंब न्यायालय द्वारा निम्न मुद्दे विरचित किए गए हैं :–

(i) क्या वाद अपनी वर्तमान स्थिति के आधार पर चलने योग्य है ?

(ii) क्या वादी के पास कोई वैध वाद हेतुक है ?

(iii) क्या प्रत्यर्थी ने वैवाहिक गृह में रहने के दौरान अपीलार्थी के साथ क्रूरता कारित की है और क्या कभी प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी या उसके माता-पिता के साथ ऐसा दुर्व्यवहार किया है जिसके आधार पर वादी विवाह-विच्छेद की डिक्री पाने का हकदार हो सके ?

(iv) क्या वादी अभित्यजन के आधार पर स्वत: ही विवाह-विच्छेद की डिक्री का हकदार है ?

(v) क्या वादी अन्य किसी/किन्हीं अनुतोष का हकदार है ?

7. विचारण के दौरान अपीलार्थी ने पांच साक्षियों अर्थात् मिथिलेश्वर नारायण (अभि. सा. 1), वादी गौतम महन्ती (अभि. सा. 2), संजय सिंह (अभि. सा. 3), अवधेश कुमार सिंह (अभि. सा. 4) और वादी के पिता गोपाल प्रसाद महन्ती (अभि. सा. 5) की परीक्षा कराई । मुख्य परीक्षा

का विवरण पांचों साक्षियों के शपथपत्र के रूप में फाइल किया गया और इन साक्षियों की प्रतिपरीक्षा भी कराई गई । प्रतिवादी जयश्री महन्ती ने अपनी परीक्षा प्रतिरक्षा साक्षी 1 के रूप में कराई, डा. राजकुमार महापात्रा की परीक्षा प्रतिरक्षा साक्षी 2 के रूप में और प्रतिवादी के भाई जीमट वाहन महन्ती की परीक्षा प्रतिरक्षा साक्षी 3 के रूप में कराई गई । इस मामले में किसी भी पक्षकार की ओर से अभिलेख पर भी कोई भी दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने निम्न विवाद्यकों का उत्तर इस प्रकार दिया :-

विवाद्यक सं. (iii)

प्रत्यर्थी द्वारा अपीलार्थी के विरुद्ध की गई क्रूरता के संबंध में उत्तर दिया गया है । विद्वान् कुटुंब न्यायालय के अनुसार याची/अपीलार्थी ने एक भी परिस्थिति प्रस्तुत नहीं की है जिससे यह पता चलता हो कि प्रत्यर्थी ने अभिकथित रूप से क्रोधपूर्ण व्यवहार किया है और न ही ऐसी किसी स्थिति को इंगित किया गया है । ऐसा अभिकथन अवांछनीय पाया गया है । भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 498क के अधीन प्रत्यर्थी द्वारा संस्थित किए गए मामले के संबंध में विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि मामला अभी तक विचाराधीन है और वादी द्वारा प्रत्यर्थी के साथ दहेज की मांग को लेकर किए गए यातनापूर्ण व्यवहार से संबंधित अभिकथन की सत्यता या मिथ्या के संबंध में कोई भी टिप्पणी करना उचित नहीं होगा । यह भी मत व्यक्त किया गया है कि जब तक न्यायिक रूप से इस संबंध में निर्णय न दे दिया जाए कि दहेज की मांग का मामला पूर्णतया मनगढ़ंत है तब तक इस महिला को दहेज का मामला फाइल किए जाने के आधार पर क्रूरता कारित करने के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता ।

इसके पश्चात् विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने प्रत्यर्थी द्वारा अभित्यजन किए जाने से सम्बंधित विवाद्यक पर विचार किया और इसे याची/अपीलार्थी के विरुद्ध विनिश्चित किया । विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने एक बार फिर यह अवेक्षा की कि कार खरीदने के लिए 3,00,000/- रुपए का संदाय न किए जाने को लेकर प्रतिवादी द्वारा दी गई यातना के

सम्बन्ध में और प्रत्यर्थी के इस पक्ष कथन के बाबत कोई भी टिप्पणी करना उचित नहीं था कि वह बच्चे के जन्म के पश्चात् अपने वैवाहिक गृह को वापस नहीं जा सकी थी । उसने यह भी दलील दी कि सुलह के माध्यम से समझौता करने का प्रयास पहले ही असफल हो गया था यद्यपि प्रतिवादी ने किसी भी शर्तों और निबंधनों पर वादी के साथ रहने की इच्छा स्पष्ट रूप से व्यक्त कर दी थी ।

विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने पक्षकारों की ओर से अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए अभिवाक् और साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् यह मत व्यक्त किया कि अभित्यजन का आशय किसी भी समय प्रतिवादी-पत्नी द्वारा नहीं किया गया था । अतः, मात्र भौतिक अभित्यजन के आधार पर वादी विवाह-विच्छेद की डिक्री पाने का हकदार नहीं है । विवाद्यक सं. 1 वादी के पक्ष में वाद की पोषणीयता के संबंध में है किंतु विवाद्यक सं. 2, जो विधिमान्य वाद हेतुक से संबंधित है, विवाद्यक सं. 3 और 4 से संबंधित निकाले गए निष्कर्षों को दृष्टिगत करते हुए वादी-पति के पक्ष में विनिश्चित किया गया । विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने भी वादी द्वारा उद्धृत विनिश्चयों को निर्दिष्ट तो किया है किंतु यह राय व्यक्त की है कि उन विनिश्चयों में के तथ्य वर्तमान मामले के तथ्यों से भिन्न हैं । तद्नुसार, वाद खारिज किया गया किंतु खर्चों के लिए कोई आदेश नहीं किया गया ।

8. आक्षेपित निर्णय में, यह अवेक्षा की गई है कि प्रतिवादी अपने भरणपोषण के लिए 2,000/- रुपए और अपनी पुत्री के लिए 1,500/- रुपए हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन वाद के लंबित रहने के दौरान तारीख 15 अप्रैल, 2004 के आदेश के अनुसार प्राप्त कर रही थी । वादी को यह निदेश दिया गया कि वह प्रतिवादी और उसकी पुत्री को तब तक उक्त राशि का भुगतान करता रहेगा जब तक वह उन दोनों को वैवाहिक गृह में न ले आए । इस अपील की कार्यवाहियों के दौरान तारीख 2 फरवरी, 2016 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थी-पत्नी के पक्ष में अंतरिम भरणपोषण बढ़ाकर 10,000/- रुपए और पुत्री के लिए 5,000/- रुपए प्रतिमास कर दिया गया । फुलारीतंग भरोरा क्षेत्र-I, बीसीसीएल के महानिदेशक को यह निदेश दिया गया कि वे अपीलार्थी के

वेतन से प्रतिमास 15,000/- रुपए की राशि की कटौती करके प्रत्यर्थी के बैंक खाते में जमा कराएंगे ।

9. इसके साथ-साथ यहां यह उल्लेख करना भी आवश्यक होगा कि इस अपील के लंबित रहने के दौरान दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 498क के अधीन अपीलार्थी और उसके परिवार के सदस्यों के विरुद्ध तारीख 20 मई, 2011 को पारित विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट-तृतीय, पुरूलिया द्वारा आपराधिक मामला सं. 938/1999 विनिश्चित किया गया जिसे अभिलेख पर अपीलार्थी द्वारा फाइल किए गए तारीख 21 अगस्त, 2015 के शपथपत्र के पूरक की हैसियत से उपाबंध-2 के रूप में प्रस्तुत किया गया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अभियोजन पक्ष अभियुक्त के विरुद्ध युक्तियुक्त संदेह के परे दंड संहिता की धारा 498क के अधीन मामला साबित करने में असफल रहा है । अभियुक्त-1 अर्थात् गौतम महन्ती (वादी), अभियुक्त-2 अर्थात् गोपाल प्रसाद महन्ती (पिता), अभियुक्त-3 अर्थात् उर्मिला महन्ती (माता) और अभियुक्त-4 अर्थात् रूपाली सन्निग्रही (बहिन) को दंड संहिता की धारा 498क/34 के अधीन अपराध का दोषी नहीं पाया गया । उन्हें आरोपों से मुक्त किया गया और उनके जमानत-पत्र उन्मोचित किए गए ।

10. प्रत्यर्थी ने अभिलेख पर तारीख 16 दिसंबर, 2020 के पूरक शपथपत्र के माध्यम से तारीख 12 मार्च, 2020 का आदेश प्रकीर्ण मामला सं. 90/2013 के अभिलेख पर प्रस्तुत किया । घरेलू हिंसा वाला मामला विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम न्यायालय, पुरूलिया द्वारा तारीख 12 मार्च, 2020 के एकपक्षीय के अनुसार विनिश्चित किया गया है । विरोधी पक्षकार गौतम महन्ती (अपीलार्थी) को यह निदेश दिया गया है कि वह भरणपोषण के रूप में प्रतिमास 7,000/- रुपए का संदाय अर्जीदार पत्नी को करेगा और 3,000/- रुपए प्रतिमास अपने बच्चे को देगा अर्थात् कुल मिलाकर प्रत्येक माह की 10 तारीख को 10,000/- रुपए का अचूक संदाय करेगा । पति को अर्जीदार पर जो इस मामले में प्रत्यर्थी है, किसी भी प्रकार की घरेलू हिंसा करने से भी रोका जाता है ।

अपीलार्थी ने यह इंगित किया है कि वर्तमान अपील में इस न्यायालय द्वारा पारित तारीख 2 फरवरी, 2016 के आदेश के अनुसरण में भरणपोषण की राशि बढ़ाने से संबंधित तथ्य घरेलू हिंसा वाले मामले की कार्यवाहियों के दौरान विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट-प्रथम, पुरूलिया की जानकारी में नहीं लाया गया था ।

11. अपीलार्थी न्यायालय में स्वयं पेश हुआ है । उसने आक्षेपित निर्णय और डिक्री का खंडन अन्य बातों के साथ निम्न आधार पर किया है :–

> "पक्षकार तारीख 9 मई, 1997 को विवाह होने के पश्चात् पत्नी के अपने माता-पिता के यहां ले जाए जाने अर्थात् तारीख 16 जून, 1998 तक साथ-साथ थे । तब से लेकर अब तक दोनों के बीच सहवास नहीं हुआ है । तारीख 5 नवंबर, 1998 को बंकुरा मेडिकल, बंकुरा में पुत्री का जन्म हुआ था और उस समय प्रत्यर्थी-पत्नी अपने माता-पिता के साथ रहती थी । वैवाहिक गृह में रहने के दौरान प्रत्यर्थी-पत्नी का आचरण अपीलार्थी की ओर से प्रकोपन के बिना भी अभद्र और अप्रिय था । उसने अपीलार्थी के लिए खाना बनाने से इनकार कर दिया था और ऐसा करने का कारण पूछने पर वह कई बार आक्रामक हो जाया करती थी । वह बर्तन फेंककर भी मारा करती थी जिससे अपीलार्थी को शारीरिक क्षतियां पहुंचती थीं । अपीलार्थी ने उससे फोन पर संपर्क करने का प्रयास किया किंतु वह अत्यंत अभद्र तरीके से फोन कॉल काट दिया करती थी । अपीलार्थी-पति को प्रत्यर्थी-पत्नी के नवंबर, 1998 के पहले सप्ताह में अस्पताल में भर्ती होने और पुत्री को जन्म देने के संबंध में सूचना नहीं दी गई थी । अपीलार्थी को यह जानकर अत्यंत आश्चर्य हुआ कि उसके और उसके माता-पिता तथा बहिन के विरुद्ध दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 4/5 के साथ पठित दंड संहिता की धारा 498क/406/34 के अधीन मनबाजार पुलिस थाना क्षेत्र के अंतर्गत मामला सं. 48/1999 दर्ज कराया गया है । प्रत्यर्थी-पत्नी ने बिना किसी कारण अपने वैवाहिक गृह से दूर रहना पसंद किया । अपीलार्थी, उसके माता-पिता और उसकी बहिन के साथ आपराधिक

मिथ्या मामला संस्थित कराए जाने के कारण अत्यंत अपमानजनक व्यवहार किया गया । इस आपराधिक मामले में सभी अभियुक्तों को दोषमुक्त कर दिया गया । अपीलार्थी के वैवाहिक जीवन में उसकी जिस प्रकार अनदेखी की गई उससे उसे शारीरिक और मानसिक यातना पहुंची और उसे वर्ष 2003 में विद्वान् कुटुंब न्यायालय, बोकारो के समक्ष विवाह-विच्छेद का वाद संस्थित करना पड़ा । दांडिक कार्यवाही 12 वर्ष चली और अंत में अपीलार्थी, उसके माता-पिता और बहिन को दोषमुक्त कर दिया गया किंतु इस दौरान उन्हें निराधार आरोपों के कारण उत्पीड़ित होना पड़ा । यद्यपि प्रत्यर्थी-पत्नी जून, 1998 से अपीलार्थी के साथ नहीं रहती थी किंतु फिर भी पुरूलिया के न्यायालय में घरेलू हिंसा को लेकर प्रकीर्ण मामला सं. 90/2013 मिथ्या रूप से संस्थित किया गया । वह मामला एकपक्षीय रूप से विनिश्चित किया गया । विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, पुरूलिया को इस संबंध में सूचित नहीं किया गया कि इस न्यायालय के तारीख 2 फरवरी, 2016 के आदेश के अनुसार भरणपोषण की राशि 3,500/- रुपए से बढ़ाकर 15,000/- रुपए कर दी गई है और इस संबंध में सूचित न करना न्यायिक कार्यवाही में न्यायालय से महत्वपूर्ण तथ्यों को छिपाने की कोटि में आता है । विद्वान् न्यायालय को जानबूझकर तथ्यों को छिपाकर भ्रमित किया गया है ताकि न्यायालय भरणपोषण की राशि में वृद्धि कर दे जिसका अपीलार्थी पहले से ही संदाय कर रहा है ।

12. क्रूरता का आरोप साबित करने के लिए अपीलार्थी ने अभियोजन साक्षियों का अभिसाक्ष्य निर्दिष्ट किया है । उसने प्रतिपरीक्षा के पैरा 28, 29 और 34 में वादी द्वारा किए गए कथनों को इस बाबत निर्दिष्ट किया है कि विवाह के 7 वर्ष के भीतर ही प्रत्यर्थी, अपीलार्थी को उसके विरुद्ध मामला दर्ज कराने और उसे जेल भेजने की धमकी दिया करती थी । वह उसके पिता के साथ भी अपमानजनक शब्दों का प्रयोग किया करती थी । यह दलील दी गई है कि वादी के पिता ने भी इस आरोप का समर्थन किया है कि प्रत्यर्थी-पत्नी अपनी ससुराल में रहने के दौरान क्रूरतापूर्ण व्यवहार किया करती थी । प्रत्यर्थी-पत्नी जून, 1998 के

दूसरे सप्ताह में चली गई थी और तब से वह अपने मायके में रहती है । वादी के पिता को उसकी इकलौती पोती के जन्म की सूचना नहीं दी गई थी । अपीलार्थी ने अपनी मुख्य परीक्षा के पैरा 23, 24 और 25 में अन्य धाराओं सहित दंड संहिता की धारा 498क के अधीन आपराधिक मामला दर्ज कराए जाने का उल्लेख भी किया है । अपीलार्थी ने यह दलील दी है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने दोषमुक्ति के निर्णय में स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि अभियोजन पक्ष की ओर से किसी भी साक्षी ने प्रत्यर्थी के विरुद्ध क्रूरतापूर्ण व्यवहार किए जाने का साक्ष्य नहीं दिया है । प्रतिरक्षा साक्षी 2 प्रत्यर्थी-पत्नी का भाई है जो प्रत्यर्थी-पति द्वारा संस्थित किए गए आपराधिक मामले में अपनी बहिन के समर्थन में पेश नहीं हुआ था । वैवाहिक वाद के विचारण के दौरान इस साक्षी के अभिसाक्ष्य से यह दर्शित होता है कि उसे अपीलार्थी के साथ हुए अपनी बहिन के विवाह का वर्ष भी याद नहीं है । इस साक्षी ने एक जगह यह कथन किया है कि विवाह वर्ष 1996 में हुआ था और दूसरे स्थान पर कहता है कि विवाह 1997 में हुआ था । अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी के विरुद्ध यह भी अभिवाक् किया है कि उसने अपीलार्थी के विरुद्ध बिना किसी कारण अभित्यजन किया है । अपीलार्थी के अनुसार प्रत्यर्थी-पत्नी की वैवाहिक गृह से 22 वर्ष से अधिक समय तक बिना किसी कारण अनुपस्थित हो जाने से अभित्यजन का आशय सृजित हो जाने के सभी अवयव पूरे हो जाते हैं । अपीलार्थी ने क्रूरता के अभिवाक् के समर्थन में **अजय नारायण दास** बनाम **आशा देवी**[1] और **चांदना सिंह** बनाम **संगीता सिंह**[2] वाले मामलों में किए विनिश्चयों का अवलंब लिया है ।

अपीलार्थी ने यह दलील दी है कि विवाह असाध्य रूप से समाप्त हो गया है और अब पुर्नजीवित करने की कोई संभावना नहीं है । यदि ऐसे विवाह का विघटन न किया जाए तो यह प्रत्यर्थी द्वारा अपीलार्थी पर क्रूरता कारित किए जाने की कोटि में आएगा । प्रत्यर्थी को उसकी अपनी गलती का लाभ लेने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जाना चाहिए । अतः,

---

[1] 2018 एस. सी. सी. ऑनलाइन (झारखण्ड) 1776.

[2] 2019 एस. सी. सी. ऑनलाइन (छत्तीसगढ़) 89.

यह निवेदन किया गया है कि विवाह विघटन की डिक्री द्वारा यह अपील मंजूर की जाए ।

13. प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री रोहिताशय रॉय ने इस न्यायालय के समक्ष अभिलेख पर आए सुसंगत अभिवाक् प्रस्तुत किए हैं । विवाह का तथ्य, जून, 1998 से पक्षकारों का अलग-अलग रहना, नवंबर, 1998 में इस विवाह-बंधन से पुत्री का जन्म होना और अपीलार्थी तथा उसके परिजनों के विरुद्ध प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा दहेज प्रतिषेध अधिनियम तथा दंड संहिता की अन्य धाराओं सहित धारा 498क के अधीन पुरूलिया में आपराधिक शिकायत दर्ज कराना जैसे तथ्यों पर विवाद नहीं है । प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि प्रत्यर्थी ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान स्पष्ट रूप से इस अभिकथन से इनकार किया है कि उसने अपीलार्थी के साथ क्रूरता कारित की है । प्रत्यर्थी-पत्नी ने यह भी अभिकथन किया है कि विवाह-विच्छेद का वाद इसलिए फाइल किया गया था कि उसका परिवार दहेज की मांग पूरी नहीं कर सका था । वादी के परिजनों द्वारा उसके साथ यातनापूर्ण व्यवहार किया गया और उन्होंने उसके पिता से कार की मांग भी की । ऐसी यातना के कारण प्रत्यर्थी बीमार हो गई । वादी ने प्रत्यर्थी से कहा कि वह अपने पिता से इलाज का खर्चा मांगे । तद्नुसार प्रत्यर्थी का पिता बोकारो आया और उसने प्रत्यर्थी को इलाज के लिए 10,000/- रुपए दिए । वादी के माता-पिता की इच्छानुसार प्रत्यर्थी को मनबाजार पुरूलिया ले जाया गया और बंकुरा मेडिकल कालेज और अस्पताल में प्रसव के लिए भर्ती कराया गया । तथापि, वादी और उसके परिजनों ने बच्चे के जन्म की जानकारी लेने में कोई इच्छा प्रकट नहीं की । प्रत्यर्थी-पत्नी के अनुसार विवाह के समय वादी के परिवार की 2,10,000/- रुपए की मांग पूरी की गई जिसके लिए कुछ धनराशि नगद दी गई और कुछ डिमांड ड्राफ्ट के माध्यम से पहुंचाई गई और साथ ही 1,50,000/- रुपए की एफडी भी प्रतिवादी के नाम में बनवाकर दी गई । अन्य कीमती सामान की भी मांग की गई जो विवाह के समय दिया गया । वादी द्वारा नकदी-प्रमाणपत्र भुना लिया गया । तारीख 28 नवंबर, 1999 को वादी मनबाजार आया और उसने 3,00,000/- रुपए की

मांग की । उसने यह धमकी दी कि अगर यह मांग पूरी नहीं की गई तो प्रतिवादी और उसके बच्चे को वापस वैवाहिक गृह में नहीं लाया जाया जाएगा । प्रत्यर्थी सदैव वादी के साथ पत्नी के रूप में रहने के लिए तैयार और इच्छुक थी । अत: प्रत्यर्थी ने वाद खारिज किए जाने की प्रार्थना की ।

14. प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने पक्षकारों के मामले का सम्यक् रूप से मूल्यांकन करने के पश्चात् क्रूरता और अभित्यजन जैसे दोनों आरोपों और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य को दृष्टिगत करते हुए वादी के पक्षकथन को अविश्वसनीय ठहराया । प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, तृतीय पुरूलिया द्वारा पारित दोषमुक्ति का निर्णय इस आधार पर दिया गया था कि अभियोजन पक्ष युक्तियुक्त संदेह के परे अपना पक्षकथन साबित नहीं कर सका और इस प्रकार यह दोषमुक्ति का स्पष्ट मामला नहीं था । यह निर्णय अभिलेख पर वाद में संशोधन की ईप्सा किए बिना पूरक शपथपत्र के माध्यम से या सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 41, नियम 27 के अधीन आवेदन फाइल किए बिना अभिलेख पर प्रस्तुत किया गया है । प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने **के. श्रीनिवास राव** बनाम **डी. ए. दीपा**[1] और **के. श्रीनिवास** बनाम **के. सुनीता**[2] वाले मामलों में किए गए विनिश्चयों का अवलंब लिया है जिनमें आपराधिक मामले में दोषमुक्ति के परिणामस्वरूप कारित क्रूरता का अभिवाक् किया गया है । प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि **के. श्रीनिवास राव** (उपरोक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस बात पर ध्यान दिया है कि पत्नी द्वारा कई शिकायतें सास-श्वसुर पर लगाए गए आरोपों के साथ दर्ज कराई गई हैं । **के. सुनीता** (उपरोक्त) वाले मामले में विवाह-विच्छेद का वाद संस्थित किए जाने के पश्चात् मिथ्या शिकायत दर्ज कराई गई थी । अत: माननीय उच्चतम न्यायालय ने दोनों ही मामलों में

---

[1] (2013) 5 एस. सी. सी. 226 = ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 2176.

[2] (2014) 16 एस. सी. सी. 34 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2014 एस. सी. 147.

यह मत व्यक्त किया कि मिथ्या शिकायतें दर्ज कराना मानसिक क्रूरता की कोटि में आता है । विद्वान् काउंसेल ने **पलश चन्द्र करन** बनाम **सुजाता करन**[1] वाले मामले में किए गए विनिश्चय के पैरा 11, 12, 13, 14 और 15 का अवलंब लिया है । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि कलकत्ता उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि दांडिक मामले में दिए गए निर्णय का अवलंब सिविल कार्यवाही के दौरान क्रूरता के आरोप को साबित करने के लिए नहीं लिया जा सकता । क्रूरता का अभिकथन सिविल कार्यवाहियों अर्थात् वैवाहिक वाद के दौरान किए गए अभिवाक् और प्रस्तुत किए गए साक्ष्यों के आधार पर साबित किया जाना चाहिए । भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 40 का भी अवलंब लिया गया है । अपनी दलील के समर्थन में विद्वान् काउंसेल ने **ओम प्रकाश गुप्ता** बनाम **रनबीर बी. गोयल**[2] वाले मामले के पैरा 11 और 12 का अवलंब लिया है । उन्होंने यह दलील दी है कि **रवि कुमार** बनाम **जुल्मी देवी**[3] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि क्रूरता साबित करने के लिए विशिष्ट ब्यौरे दिए जाने चाहिएं जिनकी अनुपस्थिति में क्रूरता के आधार पर डिक्री पारित नहीं की जा सकती । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि वादी-अपीलार्थी ने अपने अभिवाक् में प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा यातनापूर्ण व्यवहार और क्रूरता कारित किए जाने का कोई भी स्पष्ट उल्लेख नहीं किया है और न ही विचारण के दौरान ऐसे आरोपों को सिद्ध कर पाया है ।

15. प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने **रविन्दर कौर** बनाम **मंजीत सिंह (मृत) द्वारा विधिक प्रतिनिधि**[4] और **मंगयाकरसी** बनाम **एम. युवराज**[5] वाले मामलों में उच्चतम न्यायालय द्वारा किए गए विनिश्चियों का भी अवलंब लिया है । यह दलील दी गई है कि उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि किसी वैवाहिक वाद में किसी भी

---

[1] 2011 एस. सी. सी. ऑनलाइन (कलकत्ता) 976.

[2] (2002) 2 एस. सी. सी. 256 = ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 665.

[3] (2010) 4 एस. सी. सी. 476 = ए. आई. आर. 2010 एस. सी. (सप्ली.) 544.

[4] (2019) 8 एस. सी. सी. 308 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2019 एस. सी. 881.

[5] (2020) 3 एस. सी. सी. 786 = ए. आई. आर. 2020 एस. सी. 1198.

पक्षकार द्वारा फाइल किए गए प्रत्येक आपराधिक मामले में प्रत्येक दोषमुक्ति को स्वत: विवाह-विच्छेद का आधार नहीं माना जा सकता क्योंकि ऐसा करना कानूनी उपबंधों के विरुद्ध होगा । यदि अपनी संरक्षा और संपत्ति के कब्जे की सुरक्षा के लिए पत्नी की ओर से कोई विधिक कार्यवाही संस्थित की जाती है तब मात्र इस आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि पत्नी द्वारा मानसिक क्रूरता कारित की गई है । यह दलील दी गई है कि अपीलार्थी और उसके परिजनों के मामले में पारित किए गए दोषमुक्ति के निर्णय के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता है कि अपीलार्थी के विरुद्ध मात्र क्रूरता कारित की गई है कि जिसके आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री की ईप्सा कर सकें ।

अजय नारायण दास बनाम **आशा देवी**[1] वाले मामले में किए गए विनिश्चय में के तथ्यों और परिस्थितियों से पता चलता है कि पत्नी और उसके पिता द्वारा हत्या का मामला पति के विरुद्ध दर्ज कराया गया था जो पुलिस के अन्वेषण के दौरान मिथ्या पाया गया । चूंकि अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी इसलिए माननीय न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थी की पत्नी द्वारा हत्या का मिथ्या मामला दर्ज कराया जाना मानसिक क्रूरता की कोटि में आता है । **चांदना सिंह** बनाम **संगीता सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले का अवलंब अपीलार्थी द्वारा लिया गया है जिसमें माननीय छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि प्रत्यर्थी की पत्नी ने अपने श्वसुर के विरुद्ध अश्लील और अभद्र अभिकथन किए हैं और उसने अपने पति के साथ रहने से भी इनकार कर दिया । ऐसे आचरण को दृष्टिगत करते हुए विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान की गई । यह दलील दी गई है कि अपीलार्थी द्वारा अवलंब लिए गए निर्णय इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को लागू नहीं होते हैं । मात्र इस कारण से कि प्रत्यर्थी आपराधिक मामले में किए गए अभिकथनों को संदेह के परे साबित नहीं कर सकी है, यह अर्थ नहीं लगाया जा सकता कि अभिकथन मिथ्या हैं । अंत में, प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि अपीलार्थी की पुत्री का भविष्य

---

[1] 2018 एस. सी. सी. ऑनलाइन (झारखंड) 1776.

और उसका विवाह किए जाने की जिम्मेदारी इस अपील का न्यायनिर्णयन करते समय रखे जाने हेतु एक महत्वपूर्ण कारक है । प्रत्यर्थी की पुत्री इंजीनियरिंग में स्नातक पाठ्यक्रम की छात्रा है । इस संबंध में विद्वान् काउंसेल ने **एम. युवराज** (उपरोक्त) वाले मामले में के पैरा 15 को निर्दिष्ट किया है ।

16. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों द्वारा दी गई दलीलों पर विचार किया है । हमने निचले न्यायालय के अभिलेख से पक्षकारों द्वारा अवलंब लिए गए अभिलेख पर उपलब्ध अभिवाक् और साक्ष्य का परिशीलन किया है । हमने आक्षेपित निर्णय पर भी विचार किया है और न्यायालय में प्रस्तुत किए गए विनिश्चयों का भी अवलोकन किया है । पक्षकारों का यह पक्षकथन है कि विवाह तारीख 9 मई, 1997 को हुआ था और जून, 1998 से पक्षकार अलग-अलग रहते हैं । इस विवाह-बंधन से तारीख 5 नवंबर, 1998 को बंकुरा मेडिकल कालेज, में एक पुत्री ने जन्म लिया और उस समय प्रत्यर्थी अपने वैवाहिक गृह में रहती थी । प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी और उसके परिजनों अर्थात् इसके माता-पिता और बहिन के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 498क/406/34 तथा दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 4 और 5 के अधीन तारीख 3 दिसंबर, 1999 को आपराधिक मामला दर्ज कराया । विवाह-विच्छेद का वाद वर्ष, 2003 में अपीलार्थी द्वारा कुटुंब न्यायालय, बोकारो के समक्ष संस्थित किया गया । विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने औपचारिक आरोपों के अतिरिक्त क्रूरता और अभित्यजन का आरोप भी विरचित किया । दोनों आधार पर यह अभिनिर्धारित किया गया कि अर्जीदार/अपीलार्थी किसी भी तर्कसम्मत साक्ष्य के अभाव में आरोप सिद्ध करने में असफल रहा है । वाद तारीख 30 मार्च, 2007 को खारिज हो गया ।

17. इस अपील के लंबित रहने के दौरान विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट तृतीय पुरूलिया ने तारीख 20 मई, 2011 के निर्णय द्वारा अपीलार्थी और उसके परिजनों को दंड संहिता की धारा 498क/34 के अधीन आरोपों से इस आधार पर दोषमुक्त कर दिया कि अभियोजन पक्ष युक्तियुक्त संदेह के परे अपना पक्षकथन सिद्ध नहीं कर सका । दोषमुक्ति का निर्णय पूरक शपथपत्र के रूप में अभिलेख पर प्रस्तुत

किया गया है । वैवाहिक वाद के लंबित रहने के दौरान अपीलार्थी ने अपने अभिसाक्ष्य में अपने और अपने परिजनों के विरुद्ध आपराधिक मामला संस्थित किए जाने को निर्दिष्ट करते हुए यह कथन किया कि ये मामले पूर्णतया मिथ्या हैं । यह कथन किया गया कि वैवाहिक गृह से चले जाने के 8 मास पश्चात् आपराधिक मिथ्या मामला अपीलार्थी, उसके वृद्ध माता-पिता और वैवाहिक बहिन जिसके पास एक शिशु है, के विरुद्ध संस्थित किए जाने से कारावास भोगने जैसी मानसिक पीड़ा का सामना करना पड़ा । इन व्यक्तियों को अग्रिम जमानत के लिए जिला न्यायालय, पुरूलिया से माननीय उच्च न्यायालय कलकत्ता तथा उसके बाद उच्चतम न्यायालय तक भाग-दौड़ करनी पड़ी । अपीलार्थी ने यह भी कथन किया है कि विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग करने हेतु मिथ्या अभिकथन किए गए हैं । वर्ष 2003 में विवाह-विच्छेद का वाद संस्थित किए जाने के पूर्व दर्ज कराए गए आपराधिक मामले में अपीलार्थी और उसके परिजनों की परिणामस्वरूप दोषमुक्ति हो गई । इस अपील के लंबित रहने के दौरान पारित किए गए दोषमुक्ति के निर्णय को अभियोजन से संबंधित पश्चात्वर्ती कार्यवाही माना जा सकता है और यह कार्यवाही विवाह-विच्छेद मामले के संस्थित किए जाने के पूर्व आरंभ की गई थी और इस संबंध में अपीलार्थी ने अपने अभिसाक्ष्य में स्पष्ट कथन किए हैं । **के. सुनीता** (उपरोक्त) वाले मामले में दोषमुक्ति के निर्णय पर विचार किया गया है जो वैवाहिक वाद में निष्कर्ष निकाले जाने के पश्चात् की कार्यवाही है जिसे क्रूरता के अभिवाक् की कोटि में रखा जा सकता है । इस संबंध में, **के. श्रीनिवास** बनाम **के. सुनीता**[1] वाले मामले का भी अवलंब लिया गया है । इस प्रकार, इस न्यायालय की यह राय है कि पक्षकारों के बीच संस्थित किए गए आपराधिक मामले में विद्वान् इस अपील के विनिश्चित किए जाने के लिए न्यायिक मजिस्ट्रेट-तृतीय, पुरूलिया द्वारा पारित किया गया अपीलार्थी की दोषमुक्ति के निर्णय पर अवश्य ही विचार किया जाना चाहिए ।

18. विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट-तृतीय, पुरूलिया (अर्थात् विचारण

---

[1] (2014) 16 एस. सी. सी. 34 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2014 एस. सी. 147.

न्यायालय) द्वारा पारित किए गए दोषमुक्ति के निर्णय का परिशीलन करने पर यह पता चलता है कि विवाह के दौरान लिखित शिकायत (जिसे प्रदर्श-1 के रूप में चिह्नांकित किया गया है) में उल्लिखित यातना दिए जाने, क्रूरता कारित किए जाने तथा प्रपीड़न के अभिकथनों पर विचार करने पर यह पता चलता है कि सबसे पहले शिकायत के टंकित किए हुए 7 पृष्ठ तैयार किए गए हैं और इसके पश्चात् वह शिकायत शिकायतकर्ता को पढ़कर सुनाई गई और उसके बाद ही शिकायतकर्ता-पत्नी ने उस पर हस्ताक्षर किए । शिकायत में कहीं भी यह उल्लेख नहीं है और न ही ऐसा कोई दावा किया गया है कि यह शिकायत शिकायतकर्ता के निर्देशानुसार या श्रुतलेख के आधार पर तैयार की गई है । विद्वान् विचारण न्यायालय के अनुसार यह शिकायत किसी बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा तैयार की गई है और शिकायतकर्ता ने तो केवल अपने हस्ताक्षर किए हैं । पत्नी ने अपनी मुख्य परीक्षा के दौरान इस तथ्य का उल्लेख नहीं किया है कि तारीख 28 नवंबर, 1999 को पति द्वारा उसकी साड़ी में आग लगाकर उसकी हत्या करने का प्रयास किया गया था । पत्नी ने यह भी उल्लेख नहीं किया है कि उसके पति द्वारा उस पर हमला किया गया था और यह कि उसे समुचित रूप से भोजन भी उपलब्ध नहीं कराया गया था । इस संबंध में किसी भी साक्षी ने तनिक भी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने इस लोप को अत्यंत गंभीर माना है और यह प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श-ए) से विरोधाभास रखने की कोटि में आता है । विचारण के दौरान अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 8) सहित 8 अभियोजन साक्षियों की परीक्षा कराई गई । विद्वान् विचारण न्यायालय ने दंड संहिता की धारा 406 के अधीन आरोप से संबंधित निष्कर्ष निकालते समय यह अभिनिर्धारित किया कि अभियुक्त को उपहार दिए जाने के समय तनिक भी साक्ष्य उपलब्ध नहीं है । शिकायतकर्ता के अनुसार उपहार में दिए गए सामान को दहेज नहीं कहा जा सकता । ऐसी वस्तुएं स्त्रीधन की कोटि में आती हैं । किसी भी साक्षी ने यह कथन नहीं किया है कि शिकायतकर्ता की सास ने पत्नी से उस समय सभी उपहार वापस ले लिए थे जब पत्नी अपने पिता के यहां वापस गई थी । अतः, दंड संहिता की धारा 406 के

अधीन किए गए अभिकथन साबित नहीं हुए हैं । अभियोजन साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह राय व्यक्त की है कि अभियोजन पक्ष दंड संहिता की धारा 498क के मूलभूत साबित करने में असफल रहा है । किसी भी साक्षी द्वारा यह कथन नहीं किया गया है कि किसी के साथ क्रूरता या प्रपीड़न कारित किया गया था । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियोजन साक्ष्य का परिशीलन करने पर एक जगह यह व्यक्त किया है कि आपराधिक दायित्व के बहाने विफल विवाह दर्शाने का प्रयास किया गया है । ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है कि पति द्वारा यातनापूर्ण व्यवहार किए जाने के कारण शिकायतकर्ता का स्वास्थ्य बिगड़ गया था । किसी भी साक्षी द्वारा प्रत्येक अभियुक्त के वैयक्तिक कृत्य का उल्लेख नहीं किया गया है । इन सभी तथ्यों को दृष्टिगत करते हुए विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अभियोजन पक्ष युक्तियुक्त संदेह के परे दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अभियुक्त के विरुद्ध पक्षकथन साबित करने में असफल रहा है । अभियुक्त व्यक्ति अर्थात् अपीलार्थी गौतम महन्ती, उसके माता-पिता (गोपाल प्रसाद महन्ती और उर्मिला महन्ती) और उसकी बहिन (रूपाली सन्निग्रही) को दंड संहिता की धारा 498क/34 के अधीन आरोप का दोषी नहीं पाया । उन्हें आरोपों से मुक्त किया गया । प्रत्यर्थियों की ओर से घरेलू हिंसा मामला संख्या 90/2013 में तारीख 12 मार्च, 2013 को पारित विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट-प्रथम, पुरूलिया का आदेश अभिलेख पर प्रस्तुत किया गया है । इसके परिशीलन से यह पता चलता है कि यद्यपि प्रत्यर्थी को इसकी जानकारी थी और वह वर्तमान अपील में तारीख 2 फरवरी, 2016 को पारित अंतरिम आदेश के अनुसरण में अपने लिए 10,000/- रुपए और अपनी पुत्री के लिए 5,000/- रुपए प्रतिमास भरणपोषण की अभिवृद्ध राशि के रूप में प्राप्त कर रही है, फिर भी उक्त तथ्य विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, पुरूलिया की जानकारी में, घरेलू हिंसा वाला मामला विनिश्चित किए जाने के समय, नहीं लाया गया । परिणामत: विद्वान् न्यायालय ने विरोधी पक्षकार अर्थात् इस मामले में के अपीलार्थी को यह निदेश दिया कि वह पत्नी के भरणपोषण के लिए 7,000/- रुपए प्रतिमास और उसके बच्चे

के लिए 3,000/- रुपए प्रतिमास अर्थात् कुल मिलाकर 10,000/- रुपए का संदाय अंग्रेजी कलेण्डर की प्रत्येक 10 तारीख को तारीख 12 मार्च, 2020 को पारित निर्णय (उपाबंध-एस/1) के अनुसरण में करेगा और इस निर्णय की प्रतिलिपि अभिलेख पर प्रत्यर्थी द्वारा तारीख 16 दिसंबर, 2020 के पूरक शपथपत्र के रूप में प्रस्तुत की गई है । यह भी प्रतीत होता है कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के अधीन भरणपोषण के मामले का निपटारा तारीख 21 जनवरी, 2015 के आदेश द्वारा किया गया था और इस तथ्य की जानकारी भी विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट-प्रथम, पुरूलिया को नहीं दी गई । विद्वान् न्यायालय ने अर्जीदार जो इस मामले में प्रत्यर्थी है, की ओर से दी गई दलीलों के आधार पर यह मत व्यक्त किया है कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के अधीन फाइल की गई अर्जी न्यायालय के समक्ष लंबित है और अर्जीदार तथा उसकी पुत्री 3,500/- रुपए प्रतिमाह जैसी तुच्छ धनराशि से अपना जीवन-निर्वाह नहीं कर सकते ।

19. यह तथ्य कि मिथ्या अभिकथनों के आधार पर संस्थित किया गया आपराधिक मामला मानसिक क्रूरता की कोटि में आता है, **के. श्रीनिवास राव** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा उद्धृत किए गए विनिश्चयों के आधार पर सुस्थापित हो गया है । उच्चतम न्यायालय ने इस निर्णय के पैरा 28, 29 और 38 में निम्न प्रकार अभिनिर्धारित किया है :–

"28. इस शिकायत के अनुसरण में पुलिस ने दंड संहिता की धारा 498क के अधीन मामला रजिस्ट्रीकृत किया है । अपीलार्थी-पति तथा उसके माता-पिता को अग्रिम जमानत के लिए आवेदन करना पड़ा और उन्हें अग्रिम जमानत मंजूर की गई । इसके पश्चात् प्रत्यर्थी-पत्नी ने अपनी शिकायत वापस ले ली । इस शिकायत के वापस लिए जाने के अनुसरण में पुलिस ने अंतिम रिपोर्ट फाइल की । इसके पश्चात्, प्रत्यर्थी-पत्नी ने प्रोटेस्ट अर्जी फाइल की । विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी-पति और उसके माता-पिता के विरुद्ध मामले (शिकायत मामला सं. 62/2002) में

संज्ञान लिया । यहां यह उल्लेखनीय है कि प्रत्यर्थी-पत्नी ने दहेज प्रतिषेध अधिनियम तथा दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपीलार्थी-पति और उसके माता-पिता की दोषमुक्ति को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय में दांडिक अपील फाइल की । प्रत्यर्थी-पत्नी ने उच्च न्यायालय के समक्ष दांडिक पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया जिसमें उसने दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के लिए अपीलार्थी-पति को अधिनिर्णीत दंड में अभिवृद्धि की ईप्सा की जो उच्च न्यायालय के समक्ष अभी तक लंबित है । चूंकि अपीलार्थी-पति द्वारा फाइल की गई दांडिक अपील, जिसमें दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के लिए अपीलार्थी की दोषसिद्धि को चुनौती दी गई थी, मंजूर की गई और उसे दोषमुक्त किया गया, इसलिए प्रत्यर्थी-पत्नी ने उक्त दोषमुक्ति को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय के समक्ष दांडिक अपील फाइल की । इस दौरान प्रत्यर्थी-पत्नी और उसके परिवार के सदस्यों ने अपीलार्थी-पति के विरुद्ध उच्च न्यायालय में शिकायतें फाइल कीं ताकि उसे उसकी नौकरी से बाहर कर दिया जाए । अपनी सास के विरुद्ध बेबुनियाद, अभद्र और अपमानजनक अभिकथन करने और अपीलार्थी-पति को अधिनिर्णीत दंडादेश में अभिवृद्धि किए जाने की ईप्सा करने और अपीलार्थी-पति तथा उसके माता-पिता की दोषमुक्ति को चुनौती देते हुए अपील फाइल करने संबंधी प्रत्यर्थी-पत्नी के आचरण से यह दर्शित होता है कि उसने यह साबित करने का भरपूर प्रयास किया है कि अपीलार्थी-पति और उसके माता-पिता को कारावास में डाल दिया जाए और उसके पति को उसकी नौकरी से भी निकाल दिया जाए । हमें तनिक भी संदेह नहीं है कि प्रत्यर्थी-पत्नी के इस आचरण से अपीलार्थी-पति को मानसिक क्रूरता कारित हुई है ।

29. हमारी राय में, उच्च न्यायालय ने यह गलत अभिनिर्धारित किया है कि चूंकि अपीलार्थी-पति और प्रत्यर्थी-पत्नी साथ-साथ नहीं रहते थे इसलिए एक-दूसरे को मानसिक क्रूरता कारित करने का प्रश्न नहीं उठता है । मानसिक क्रूरता कारित किए जाने के लिए

यह प्राथमिक शर्त नहीं है कि दंपत्ति एक छत के नीचे वास करें । पति-पत्नी एक-दूसरे को एक छत के नीचे न रहकर भी मानसिक क्रूरता कारित कर सकते हैं । दिए गए मामले में पति-पत्नी एक-दूसरे को अश्लील और अपमानजनक पत्थर अथवा नोटिस या अभद्र अभिकथन वाली शिकायतें फाइल करके या अनेक न्यायिक कार्यवाहियां संस्थित करके एक-दूसरे का जीवन कष्टदायक बना सकते हैं । इस मामले में ऐसा ही हुआ है ।

38. निपटारा करने से पूर्व हम पीड़ितों के वैवाहिक विवादों पर चर्चा करना आवश्यक समझते हैं । यद्यपि इस मामले में यह निष्कर्ष अभिलिखित किया है कि प्रत्यर्थी-पत्नी ने अपीलार्थी-पति के साथ मानसिक क्रूरता कारित की है, फिर भी हम यह नहीं कह सकते हैं कि प्रत्यर्थी-पत्नी ही गलती पर है । वैवाहिक विवाद में मुश्किल से ही कोई मामला ऐसा होता है जिसमें कोई एक दंपत्ति ही गलती पर हो । किंतु जब दोनों में से एक दंपत्ति की अत्यधिक गलती हो तब दूसरे दंपत्ति को उसकी गलती का अहसास अवश्य कराना चाहिए । इस मामले में, यदि आरंभ में ही अर्थात् पत्नी द्वारा अभद्र अभिकथनों के साथ अपनी सास के विरुद्ध शिकायत फाइल किए जाने के पूर्व किसी निष्पक्ष या समझदार व्यक्ति द्वारा उसे समझाया जाता या पति-पत्नी को मिडियेशन सेंटर भेजा जाता या मुकदमा फाइल करने के पूर्व बातचीत हो जाती तो दोनों पक्षों के बीच कड़वाहट कम हो सकती थी । परिस्थितियां इतनी गंभीर न हो पाती यदि आरंभ में ही किसी व्यक्ति द्वारा दोनों पक्षों के बीच मामला सुलझाने का प्रयास किया जाता । यह संभव है कि प्रत्यर्थी-पत्नी विवाह-बंधन से परेशान थी । संभवत: इस कारण उसने अपना मानसिक संतुलन खो दिया था और वह पति के विरुद्ध शिकायतें फाइल करने लगी । अपीलार्थी-पति को, पत्नी द्वारा फाइल की गई शिकायतों को लेकर, वैवाहिक हित के लिए माफ कर देना चाहिए था । किंतु जिस प्रकार प्रत्यर्थी-पत्नी ने समस्या को निपटाने का प्रयास किया था, वह गलत है । इससे दुर्भावना प्रतीत होती है । प्रत्यर्थी-पत्नी ने अपीलार्थी-पति के साथ गंभीर रूप से

मानसिक क्रूरता कारित की है। अब विवाह-बंधन में सुधार किया जाना सीमा के परे है ।”

20. **के. सुनीता** (उपरोक्त) वाले मामले के पैरा 1, 2, 5 और 6 में निम्न अभिनिर्धारित किया गया है :–

“1. इस अपील में अपीलार्थी के काउंसेल ने हमारा ध्यान उन सभी दलीलों की ओर दिलाया है जो हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(1)(i-क) के अधीन विवाह विघटन के लिए विवाह-विच्छेद की डिक्री पाने हेतु अपने दावे के समर्थन में अपीलार्थी की ओर से उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई थी । तथापि, हमने उसकी उन्हीं दलीलों पर विचार किया है जिनका संबंध प्रत्यर्थी द्वारा अपीलार्थी और उसके अनेक परिजनों के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 498क और 307 के अधीन फाइल की गई आपराधिक शिकायत से है जो इस मामले में अभिकथित क्रूरता है । हमने ऐसा इसलिए किया कि यदि याची द्वारा यह आधार साबित कर दिया जाता है तब हमें अन्य किसी आधार की आवश्यकता यह विनिश्चित करने के लिए नहीं पड़ेगी कि विवाह विचारण न्यायालय या उच्च न्यायालय द्वारा इस आधार पर विघटित किया जा सकता है या नहीं कि विवाह असाध्य रूप से समाप्त हो चुका है । क्रूरता की यह प्रकृति आपराधिक मिथ्या मामला किसी भी दंपत्ति द्वारा इस न्यायालय के समक्ष बार-बार प्रस्तुत किया गया है और इस पर सघन रूप से चर्चा की गई है कि अब अन्य किसी निर्णय-विधि पर चर्चा करना व्यर्थ होगा । इस मुद्दे पर के. श्रीनिवास राव **बनाम** डी. ए. दीपा, ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 2176 वाले मामले में गहराई से विश्लेषण किया गया है जिसमें कई अन्य निर्णय उद्धृत करते हुए चर्चा की गई थी । यह समझ से परे है कि यदि कोई मिथ्या आपराधिक शिकायत किसी भी पति या पत्नी द्वारा दर्ज कराई जाती है, तब निस्संदेह रूप से वैवाहिक-बंधन के बीच क्रूरता गठित मानी जाएगी जिसके आधार पर आहत पति या पत्नी विवाह-विच्छेद का दावा कर सकेगा/सकेगी ।

2. पक्षकारों का विवाह हिन्दू रीति-रिवाज के अनुसार तारीख

11 फरवरी, 1998 को हैदराबाद में अनुष्ठापित हुआ था । तारीख 8 मई, 1991 को पक्षकारों के यहां एक बालक ने जन्म लिया जिसके पश्चात् प्रत्यर्थी-पत्नी अभिकथित रूप से शीहहंस सिन्ड्रोम से ग्रसित हो गई । तारीख 29/30 जून, 1995 की रात्रि में प्रत्यर्थी अपना वैवाहिक गृह छोड़कर चली गई और तभी से अपने भाई के साथ रह रही है जो एक वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी है । तारीख 14 जुलाई, 1995 को अपीलार्थी ने क्रूरता तथा विवाह के असाध्य विघटन के आधार पर विवाह-विच्छेद की प्रार्थना करते हुए मूल अर्जी फाइल की । प्रत्यर्थी-पत्नी ने अपीलार्थी तथा उसके परिवार के सात सदस्यों के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 34, 148-क, 384, 324 के साथ पठित धारा 307 तथा दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 4 और 6 के अधीन आपराधिक शिकायत दर्ज कराई । इस शिकायत के अनुसरण में अपीलार्थी और उसके परिवार के सात सदस्यों को गिरफ्तार करके जेल भेजा गया । प्रत्यर्थी-पत्नी ने भी हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 9 के अधीन दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए अर्जी फाइल की । तारीख 3 जून, 2000 को विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश-पंचम, महिला न्यायालय, हैदराबाद ने अपीलार्थी और उसके परिजनों को दोषमुक्त कर दिया और यह आदेश अंतिम है । इसी दौरान कुटुंब न्यायालय, हैदराबाद ने तारीख 30 दिसंबर, 1999 के निर्णय द्वारा अपीलार्थी को विवाह-विच्छेद की डिक्री क्रूरता और असाध्य विवाह-बंधन के आधार पर प्रदान की ; विद्वान् न्यायालय ने हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 9 के अधीन प्रत्यर्थी की पत्नी की अर्जी खारिज कर दी । प्रत्यर्थी-पत्नी ने उच्च न्यायालय के समक्ष तारीख 7 नवंबर, 2005 के उक्त आक्षेपित निर्णय के विरुद्ध अपील फाइल की है जो हमारे समक्ष प्रस्तुत है ।

5. प्रत्यर्थी-पत्नी ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान यह स्वीकार किया है कि उसने अपनी शिकायत में जिन घटनाओं का उल्लेख किया था वे सभी बातें दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 161 के अधीन पुलिस द्वारा अभिलिखित बयान में नहीं लिखी गईं ।

प्रत्यर्थी-पत्नी का यह पक्षकथन नहीं है कि उसने वास्तव में ये सब बातें अन्वेषण अधिकारी को वास्तव में बताई थी किंतु और उसने उसके बयान में नहीं लिखा था । हमें ऐसा प्रतीत होता है कि तथ्यों से यह पता चलता है कि अपराध संबंधी शिकायत दर्ज कराना बाद में आया एक विचार है । हम उच्च न्यायालय के इस मत की पुष्टि करते हैं कि आपराधिक शिकायत दुर्भावनापूर्ण कराई गई थी । इसका एक कारण यह भी है कि उच्च न्यायालय को अपीलार्थी-पति और उसके परिजनों की दोषमुक्ति के संबंध में सूचना दे दी गई थी । इन परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय को यह निष्कर्ष निकालना चाहिए था कि प्रत्यर्थी-पत्नी ने जान-बूझकर और साशय मिथ्या शिकायत दर्ज कराई है ताकि अपीलार्थी और उसके परिवार के सात सदस्यों को परेशान करके जेल भेजा जा सके और प्रत्यर्थी-पत्नी के ऐसे आचरण से हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13(1)(i-क) के अधीन क्रूरता निर्विवादित रूप से कारित होती है ।

6. प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल की ओर से एक अन्य दलील यह दी गई है कि याचिका में यह अभिवाक् नहीं किया गया है कि आपराधिक शिकायत फाइल की गई थी । हमें यह दिखाई देता है कि पति द्वारा विवाह-विच्छेद अर्जी फाइल किए जाने के पश्चात् पत्नी की ओर से शिकायत फाइल की गई है और न्यायालय को इस पश्चात्वर्ती घटनाक्रम पर ध्यान देना चाहिए था । किसी भी स्थिति में दोनों पक्षकार इस क्रूरता से पूरी तरह अवगत थे जो अभिकथित रूप से पति से साथ कारित हुई । जब साक्ष्य प्रस्तुत किया गया और दलीलें दी गईं, उस समय प्रत्यर्थी-पत्नी की ओर से कोई भी आक्षेप इस संबंध में नहीं किया गया कि इस क्रूरता का उल्लेख न्यायालय में प्रस्तुत किए गए अभिवाक् में क्यों नहीं किया गया था । अत:, हम प्रत्यर्थी-पत्नी की ओर से दी गई दलील से सहमत नहीं हैं ।"

21. प्रत्यर्थी की ओर से **रवीन्दर कौर** (उपरोक्त) वाले मामले में किए गए उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब इस प्रतिपादना के

आधार पर लिया गया है कि पत्नी द्वारा अपनी संरक्षा और संपत्ति की सुरक्षा के लिए संस्थित की गई विधिक कार्यवाही को मानसिक क्रूरता नहीं माना जा सकता । ऐसे उदाहरणों से यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि विवाह असाध्य रूप से समाप्त हो गया है । वर्तमान मामले के तथ्यों को दृष्टिगत करते हुए प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा वर्ष 1999 में संस्थित की गई आपराधिक कार्यवाही में, जो वर्ष 2011 तक चली, अपीलार्थी और उसके परिजनों की दोषमुक्ति की गई क्योंकि अभियोजन पक्ष शिकायतकर्ता और उसके परिवार के सदस्यों सहित आठ अभियोजन साक्षियों की परीक्षा कराए जाने के बावजूद युक्तियुक्त संदेह के परे आरोप साबित करने में असफल रहा । मिथ्या अभिकथनों के कारण अभियुक्तों की दोषमुक्ति होना एक बात है और साथ ही ऐसे आरोपों के आधार पर, जिन्हें प्रत्यर्थी-पत्नी 12 वर्ष तक विचारण चलाए जाने के बाद भी साबित नहीं कर सकी, यह कहा जा सकता है कि यह कार्यवाही अपीलार्थी और उसके परिजनों के साथ मानसिक क्रूरता कारित किए जाने की कोटि में आएगी । ऐसे अभिकथनों के आधार पर अभियुक्तों को अनावश्यक गिरफ्तारी से बचने के लिए उच्चतर न्यायालयों के समक्ष गुहार लगानी पड़ी । **एम. युवराज** (उपरोक्त) वाले मामले में प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने इस निर्णय के पैरा 14 का अवलंब लिया है जो निम्न प्रकार है :–

> "14. इस पर संदेह नहीं किया जा सकता कि किसी समुचित मामले में दहेज की मांग का निराधार अभिकथन या ऐसा कोई अन्य अभिकथन किया जाता है और पति तथा उसके परिजनों को आपराधिक मुकदमों का सामना करना पड़ जाता है और परिणामस्वरूप यदि यह पाया जाता है कि लगाए गए सभी अभिकथन अवांछनीय और निराधार हैं और यदि पत्नी का ऐसा कृत्य है जिसके आधार पर पति को यह अभिकथन करना पड़े कि उसके साथ क्रूरता कारित की गई है और ऐसी स्थिति में विवाह-विच्छेद की याचिका निचले न्यायालय में पेश किए गए कारणों के आधार पर फाइल की जाती है तब उन आधारों पर विवाह-विच्छेद का आदेश किया जा सकता है । तथापि, ऊपर उपदर्शित वर्तमान

तथ्यों के आधार पर स्थिति ऐसी नहीं है । यद्यपि आपराधिक शिकायत पत्नी द्वारा दर्ज कराई गई है और पति को उक्त कार्यवाही में दोषमुक्त किया गया है, फिर भी, पति ने विचारण न्यायालय के समक्ष जिस आधार पर आवेदन किया है उस दृष्टि से वह अभिकथित मानसिक क्रूरता नहीं है बल्कि उसका असंयमी व्यवहार है जिसके संबंध में निचले दोनों न्यायालयों ने साक्ष्य के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला है कि मानसिक क्रूरता साबित नहीं हुई है । इस पृष्ठभूमि में, यदि उच्च न्यायालय के निर्णय पर विचार किया जाए तो हमारी यह राय है कि उच्च न्यायालय का निर्णय न्यायोचित नहीं है ।”

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

22. उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि एक समुचित मामले में दहेज की मांग का मिथ्या अभिकथन या इसी प्रकार का अन्य कोई अभिकथन पति और उसके परिजनों के विरुद्ध किया जाता है और उन्हें ऐसे आपराधिक मुकदमों का सामना करना पड़ता है जो अवांछनीय और निराधार पाए जाते हैं तब ऐसी कार्यवाही को उस समय मानसिक क्रूरता की कोटि में रखा जाएगा जब पति ने पत्नी के विरुद्ध विवाह विघटन के लिए आवेदन किया हो । वर्तमान मामले में वादी/अपीलार्थी ने न केवल अभिकथित क्रूरता कारित की है अपितु दहेज की मांग किए जाने का मिथ्या अभिकथन भी किया है और यह भी अभिकथन किया है कि दहेज की मांग पूरी न किए जाने के कारण उसके साथ यातनापूर्ण व्यवहार भी किया गया था । उसने यह भी अभिकथन किया है कि अपीलार्थी और उसके माता-पिता एवम् बहिन को पुरूलिया न्यायालय से कलकत्ता उच्च न्यायालय और वहां से माननीय उच्चतम न्यायालय का द्वार खटखटाना पड़ा ताकि अवांछनीय गिरफ्तारी से संरक्षा मिल सके । दहेज की मांग और यातनापूर्ण व्यवहार किए जाने के अभिकथन संपूर्ण विचारण प्रक्रिया के बावजूद भी साबित न हो सके । अतः, प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा किया गया कृत्य अपीलार्थी के साथ मानसिक क्रूरता कारित किए जाने की कोटि में आता है । **समर घोष** बनाम **जया**

घोष[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने इस निर्णय के पैरा 101 में मानसिक क्रूरता से संबंधित उदाहरण व्यक्त किए हैं :–

"101. मार्गदर्शन के लिए कोई भी समरूप सिद्धांत अधिकथित नहीं किया जा सकता फिर भी मानव आचरण से संबंधित कुछ ऐसे उदाहरण हैं जो मानसिक क्रूरता के मामलों में कार्यवाही किए जाने के लिए सुसंगत हैं । उत्तरवर्ती पैराओं में उपदर्शित उदाहरण केवल दृष्टांत ही हैं न कि परमसूत्र –

(i) पक्षकारों के पूरे वैवाहिक जीवन पर विचार करने पर ऐसी मानसिक पीड़ा, संताप और कष्ट जिनसे पक्षकारों का एक-दूसरे के साथ रहना संभव न हो सके, व्यापक रूप से मानसिक क्रूरता की कोटि में आ सकता है ।

(ii) पक्षकारों के वैवाहिक जीवन का संचयी रूप से परिशीलन करने पर यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि दोषी पक्षकार से युक्तियुक्त रूप से यह नहीं कहा जा सकता है कि वह ऐसा आचरण करना बंद कर दे और आहत पक्षकार के साथ रहना आरंभ कर दे ।

(iii) मात्र रूखापन या प्रेम भाव की कमी को क्रूरता की कोटि में नहीं रखा जा सकता, निरंतर अभद्र भाषा का प्रयोग, आचरण में विचलन, लापरवाही और अनदेखी जैसी बातें जब ऐसा गंभीर रूप ले लेती हैं कि एक दंपत्ति का दूसरे के साथ रहना पूर्णतया असहनीय हो जाए ।

(iv) मानसिक क्रूरता एक मन:स्थिति है । लंबे समय तक एक दंपत्ति द्वारा दूसरे दंपत्ति के मन में पीड़ा, निराशा और कुंठा का भाव कारित करना मानसिक क्रूरता गठित किए जाने की कोटि में आता है ।

(v) पति या पत्नी को प्रताड़ित करने, परेशान करने या

---

[1] (2007) 4 एस. सी. सी. 511 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2007 एस. सी. 347.

उनका जीवन दयनीय बनाने के लिए निरंतर अपमानजनक व्यवहार करना, मानसिक क्रूरता है ।

(vi) (मानसिक क्रूरता के लिए) एक पति या पत्नी का निरंतर अनुचित आचरण और व्यवहार वास्तव में ऐसा हो जो दूसरे पति या पत्नी के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करे । जिस उपचार की शिकायत की गई है और जो परिणामी खतरा या आशंका दिखाई देती है वह बहुत गंभीर, पर्याप्त और वजनदार होनी चाहिए ।

(vii) निरंतर निंदनीय आचरण, जानबूझकर की गई उपेक्षा, उदासीनता या सामान्य मानक से भी इतना कम दांपत्य सहयोग करना कि उससे मानसिक आघात पहुंचे या परपीड़क सुख प्राप्त करना भी मानसिक क्रूरता की श्रेणी में आ सकता है ।

(viii) दंपत्ति का आचरण ऐसा होना चाहिए जो ईर्ष्या, स्वार्थ और अधिकारात्मकता से इतनी अधिक हो कि वह दुख और असंतोष का कारण बने, किन्तु भावनात्मक परेशानी का प्रयोग विवाह विच्छेद के लिए मानसिक क्रूरता के रूप में नहीं किया जा सकता ।

(ix) मामूली चिड़चिड़ाहट, झगड़ा, वैवाहिक जीवन की सामान्य नोकझोक जो दैनिक जीवन में घटित होती रहती हैं, को विवाह विच्छेद के लिए मानसिक क्रूरता की कोटि में नहीं रखा जा सकता ।

(x) वैवाहिक जीवन की समग्र रूप से समीक्षा की जानी चाहिए और कई वर्षों के दौरान कभी कभी होने वाली घटनाएं क्रूरता की श्रेणी में नहीं आएंगी । दुर्व्यवहार काफी लंबी अवधि के लिए लगातार होना चाहिए, जहां रिश्ते इस सीमा तक बिगड़ गए हों कि पति या पत्नी के कार्यों और व्यवहार के

कारण, आहात पक्ष को दोषी पक्ष के साथ रहना अत्यंत कठिन लगता है, तब इसे मानसिक क्रूरता की कोटि में रखा जाएगा ।

(xi) यदि कोई पति चिकित्सकीय कारणों के बिना और अपनी पत्नी की सहमति या ज्ञान के बिना नसबंदी के आपरेशन के लिए स्वयं को प्रस्तुत करता है और इसी तरह, यदि पत्नी बिना चिकित्सकीय कारण के या अपने पति की सहमति या ज्ञान के बिना नसबंदी या गर्भपात करवाती है, तो ऐसे कृत्य से दूसरे जीवनसाथी को मानसिक प्रताड़ना हो सकती है ।

(xii) बिना किसी शारीरिक अक्षमता या वैध कारण के काफी समय तक संभोग करने से इनकार करने का एकतरफा निर्णय मानसिक क्रूरता की श्रेणी में आ सकता है ।

(xiii) विवाह के पश्चात्, विवाह से बच्चा न होने का पति या पत्नी में से किसी एक का एकतरफा फैसला भी क्रूरता की कोटि में आ सकता है ।

(xiv) जहां लंबे समय से दंपत्ति निरंतर रूप से अलग-अलग रह रहे हैं, वहां उचित रूप से निष्कर्ष यह निकाला जा सकता है कि वैवाहिक बंधन सुधार के परे है । विधिक बंधन होने के बावजूद विवाह एक कल्पना बन जाता है । उस बंधन को तोड़ने से इनकार करके, ऐसे मामलों में विधि से विवाह की पवित्रता का उद्देश्य पूरा नहीं होगा बल्कि इसमें दोनों पक्षकारों की भावनाओं और मर्यादायों के लिए बहुत कम सम्मान दिखाता है । ऐसी परिस्थितियों से मानसिक क्रूरता कारित हो सकती है ।”

यद्यपि उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि ये परिस्थितियां केवल उदाहरण मात्र हैं न कि कोई संपूर्ण सिद्धांत हैं किंतु जहां लंबे समय तक पति-पत्नी अलग रहते हैं वहां यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि विवाह-बंधन को कायम रखने में

सुधार किया जाना सीमा के परे ; ऐसी स्थिति में विवाह विधिक बंधन के बावजूद बनावटी प्रतीत होता है । ऐसे बंधन को समाप्त करने से इनकार करके विवाह की पवित्रता को कायम नहीं रखा जा सकता ; ऐसा करना पक्षकारों की भावनाओं को अनदेखा करने की कोटि में आएगा । ऐसी परिस्थितियों का परिणाम मानसिक क्रूरता हो सकता है । उक्त मामले में, पक्षकार 16 वर्ष और 6 महीने से अधिक समय से अलग-अलग रह रहे हैं और इन परिस्थितियों में उच्चतम न्यायालय ने यह अकाट्य निष्कर्ष निकाला कि विवाह-बंधन क्षीण हो गया है जिसमें प्रत्यर्थी द्वारा क्रूरता कारित किए जाने से सुधार की गुंजाइश नहीं है । **के. श्रीनिवास राव** वाले मामले में यह आवश्यक नहीं है कि मानसिक क्रूरता तभी कारित हो सकती है जब पति-पत्नी साथ-साथ रहते हों । अलग-अलग रहने पर भी एक दंपत्ति द्वारा दूसरे दंपत्ति के विरुद्ध मिथ्या शिकायत दर्ज कराना मानसिक क्रूरता की कोटि में आता है । एक छत के नीचे वास करना मानसिक क्रूरता किए जाने के लिए पुरोभाव्य शर्त नहीं है । ऐसा ही इस मामले में घटित हुआ है । इस प्रकार हमारी यह सुविचारित राय है कि हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13(1)(i-क) के अधीन क्रूरता का आरोप प्रत्यर्थी के विरुद्ध साबित होता है ।

23. यह वाद अभित्यजन के आरोप के आधार पर संस्थित किया गया है । अभित्यजन का आरोप साबित करने के लिए दो आवश्यक शर्तों का समाधान होना चाहिए, अर्थात् :–

(i) पृथक्करण का तथ्य ; और

(ii) सहवास की स्थायी रूप से समाप्ति करने का आशय (अभित्यजन का आशय)

इस संबंध में सावित्री पाण्डेय **बनाम** प्रेमचंद पाण्डेय [(2002) 2 एस. सी. सी. 73 = ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 591] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा किए गए विनिश्चय का अवलंब लिया गया है । अभित्यजन के अवयवों से संबंधित इस

निर्णय के पैरा 8 और 9 में निम्न प्रकार अभिनिर्धारित किया गया है –

> "8. "अभित्यजन" का अर्थ अधिनियम के अधीन विवाह-विच्छेद की ईप्सा के प्रयोजनार्थ एक पक्षकार का दूसरे पक्षकार की सम्मति और युक्तियुक्त कारण के बिना जानबूझकर उपेक्षा करना है । दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि विवाह की जिम्मेदारी से पूरी तरह परित्याग करना है । अभित्यजन किसी स्थान से किया जाना आवश्यक नहीं है बल्कि मानसिक रूप से पति-पत्नी का एक-दूसरे से अलग रहना भी अभित्यजन की कोटि में आता है । अत: अभित्यजन का अर्थ वैवाहिक बंधन से परित्याग है अर्थात् पक्षकारों के बीच सहवास को अनुज्ञात न करना अथवा सुकर न बनाना अभित्यजन कहलाता है । अभित्यजन कारित किए जाने के सबूत पर विचार विवाह के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए जिसके अधीन स्त्री और पुरुष के बीच लैंगिक संबंधों को समाज में विधिमान्य ठहराया गया है ताकि दुराचार को रोका जा सके और विधिपूर्ण रूप से संतान उत्पत्ति की जा सके । अभित्यजन स्वयं में कोई एकल कृत्य नहीं है और यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर आचरण की एक निरंतर प्रक्रिया है । अनेक नजीरों और लेखकों के मतों को निर्दिष्ट करते हुए इस न्यायालय ने बिपिनचन्द्र जयसिंहबाई शाह **बनाम** प्रभावती वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि यदि एक दंपत्ति दूसरे को अस्थायी मानसिक तनाव के कारण छोड़कर चला जाता है अर्थात् स्थायी रूप से अलग होने का आशय किए बिना खिन्न होकर दूर चला जाता है, तब ऐसी स्थिति को अभित्यजन की कोटि में नहीं रखा जाएगा । इस निर्णय के पृष्ठ 183-184 के पैरा 10 में यह भी अभिनिर्धारित किया गया है –
>
> "अभित्यजन के अपराध के लिए जहां एक दंपत्ति को

छोड़कर जाने का संबंध है, दो शर्तों का होना आवश्यक है अर्थात् (1) पृथक्करण (2) स्थायी रूप से सहवास की समाप्ति का आशय । इसी प्रकार जिस दंपत्ति के साथ अभित्यजन कारित किया गया है उसके लिए भी दो शर्त आवश्यक हैं – (1) सम्मति के बिना और (2) दंपत्ति द्वारा ऐसा आचरण न किया जाना जिसके कारण दूसरा दंपत्ति वैवाहिक गृह छोड़कर गया है । विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल करने वाले अर्जीदार पर इन दोनों शर्तों को साबित करने का भार होगा । यहां इंग्लिश विधि और बाम्बे विधानमंडल द्वारा अधिनियमित विधि के बीच अंतर को इंगित किया जा सकता है । इंग्लिश विधि के अधीन यह आवश्यक है कि अधिनियम के अतंर्गत वाद संस्थित किए जाने के पश्चात् दोनों शर्तें विवाह-विच्छेद के पश्चात् 4 वर्ष तक बनी रहनी चाहिएं जबकि बाम्बे विधानमंडल के अधीन यह अवधि 3 वर्ष है । क्या अंतिम उपखंड के लोप का कोई व्यावहारिक परिणाम है या नहीं, इस बात से वर्तमान मामले में विनिश्चय किए जाने के लिए कोई फर्क नहीं पड़ता है । प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए ही अभित्यजन सुनिश्चित किया जाना चाहिए । ऐसे तथ्यों से भी अभित्यजन का समान निष्कर्ष निकाला जा सकता है जो किसी अन्य मामले में भिन्न हो सकते हैं अर्थात् पक्षकारों के आचरण, आशय और एक-दूसरे से पृथक् होने के पश्चात्वर्ती कृत्यों के आधार पर तथ्यों का अर्थ लगाना चाहिए । यदि वास्तव में पति-पत्नी के बीच पृथक्करण हुआ है तब विचार के लिए आवश्यक प्रश्न यह रहता है कि क्या ऐसे कृत्य से अभित्यजन कारित होता है या नहीं । अभित्यजन का अपराध तभी आरंभ होता है जब दंपत्ति साथ-साथ रहना बंद कर देते हैं । लेकिन यह आवश्यक नहीं है कि अभित्यजन अलग-अलग रहने के साथ ही आरंभ हो । तथ्यत: पृथक्करण विरोधपूर्ण भावना के बिना भी और साथ-साथ भी कारित हो सकता है ; उदाहरणार्थ, जब

पृथक् होने वाला दंपत्ति साशय, सुव्यक्त और विवक्षित रूप से सहवास को स्थायी रूप से बंद करते हुए वैवाहिक गृह छोड़ता है । इंग्लिश विधि के अधीन 3 वर्ष की अवधि विहित की गई है और बाम्बे अधिनियम के अधीन यह अवधि 4 वर्ष है जिसके दौरान दोनों शर्तों का पूरा होना आवश्यक है । इस प्रकार, यदि अभित्यजन करने वाला दंपत्ति विधि के अधीन उपबंधित अपराध से मुंह मोड़ने के अवसर का फायदा उठाता है और सद्भावपूर्ण प्रस्ताव से दूसरे दंपत्ति के पास वापस आने का विनिश्चय कानूनी अवधि के पूरा होने के पूर्व या उसके समाप्ति के पश्चात् करता है, तब अभित्यजन समाप्त माना जाएगा परंतु ऐसा तब होगा जब विवाह-विच्छेद की कार्यवाही आरंभ हो गई होगी और यदि अभित्यजन का पीड़ित दंपत्ति अकारण ऐसे प्रस्ताव को अस्वीकार करता है, तब अभित्याजक दंपत्ति, अभित्यक्त समझा जाएगा । इसलिए यह आवश्यक है कि अभित्यजन की अवधि के दौरान अभित्यक्त दंपत्ति को विवाह की पुष्टि करनी चाहिए और वैवाहिक जीवन को पुनर्जीवित करने के लिए युक्तियुक्त शर्तों के आधार पर तैयार रहना चाहिए । यह भी सुस्थापित है कि विवाह-विच्छेद की कार्यवाही के दौरान वादी को अभित्यजन का अपराध विवाह संबंधी अन्य अपराधों की भांति युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करना चाहिए । इस प्रकार, यद्यपि विधि के परम नियम के रूप में संपुष्टि आवश्यक नहीं है फिर भी न्यायालयों को संपोषक साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने पर तब तक जोर देना चाहिए जब तक संपोषक साक्ष्य प्रस्तुत न किए जाने के लिए न्यायालय का समाधान न हो जाए ।

9. बिपिनचन्द्रा वाले मामले में किए गए विनिश्चय का अनुसरण करते हुए लक्ष्मण उत्तम चंद किरपलानी **बनाम** मीना, [1964] एस. सी. आर. (4) 331 वाले मामले में विधिक स्थिति को पुन: दोहराते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि अभित्यजन का अर्थ एक दंपत्ति द्वारा दूसरे दंपत्ति को बिना सम्मति और

> बिना युक्तियुक्त कारण के छोड़ देना है । अभित्यजन के अपराध के लिए, जहां तक अभित्याजक का संबंध है, दो शर्तें आवश्यक हैं : (1) पृथक्करण और (2) स्थायी रूप से सहवास समाप्त करने का आशय । इसी प्रकार जहां तक अभित्यक्त दंपत्ति का संबंध है, यहां भी दो शर्तें आवश्यक हैं अर्थात् (1) सम्मति न दिया जाना और (2) अभित्यक्त दंपत्ति द्वारा ऐसा कोई कृत्य न किया जाना जिससे अभित्याजक किसी युक्तियुक्त कारण का अवलंब वैवाहिक गृह को छोड़ने के लिए ले सके । अभित्यजन को साबित किया गया अभिनिर्धारित करने के लिए ऐसे कतिपय तथ्यों से निष्कर्ष निकाला जा सकता है जो अन्य किसी ऐसे मामले में भिन्न होने पर भी समान निष्कर्ष निकाला जा सकता है ; अर्थात् पृथक्करण के पूर्व और उसके पश्चात् दंपत्ति के आचरण और आशय को दृष्टिगत करते हुए ही तथ्यों पर विचार किया जाना चाहिए ।"

24. उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अभित्यजन का अपराध तब कारित होता है जब पृथक्करण और विद्वेष का तथ्य विद्यमान होता है । किंतु यह आवश्यक नहीं है कि ये दोनों अवयव एक साथ घटित हों । तथ्यत: पृथक्करण विद्वेष की भावना के बिना भी कारित हो सकता है और ऐसा भी हो सकता है कि पृथक्करण और शत्रुभाव एक साथ घटित हों ; उदाहरण के लिए जब अभित्याजक दंपत्ति वैवाहिक गृह ऐसे स्पष्ट या विवक्षित आशय के साथ छोड़कर जाता है कि वह अब स्थायी रूप से सहवास बंद कर देगा तब उपरोक्त स्थिति पाई जाती है । वर्तमान मामले में, यह देखना होगा कि क्या अभित्यक्त दंपत्ति अर्थात् अपीलार्थी द्वारा सम्मति नहीं दी गई है और उसके द्वारा ऐसा आचरण भी नहीं किया गया है जिसके आधार पर दूसरा दंपत्ति वैवाहिक गृह छोड़ने का आवश्यक रूप से आशय कर सके । अभित्याजक दंपत्ति के लिए दो शर्तों का समाधान किया जाना चाहिए अर्थात् पृथक्करण होना चाहिए और दूसरी शर्त यह कि सहवास को स्थायी रूप से बंद करने के लिए विद्वेष या शत्रुभाव होना चाहिए । दहेज की मांग किए जाने का अभिकथन और मांग पूरी न किए जाने के परिणामस्वरूप

यातनापूर्ण व्यवहार किए जाने से प्रत्यर्थी ने यह उपधारित किया कि जून, 1998 में वैवाहिक गृह छोड़कर जाने हेतु उसके पास युक्तियुक्त कारण था किंतु वर्ष 1999 में संस्थित किए गए आपराधिक मामले में अपीलार्थी और उसके परिजनों की जो दोषमुक्ति की गई थी उससे यह सिद्ध होता है कि अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को ऐसा कोई युक्तियुक्त कारण नहीं दिया जिसके आधार पर वह वैवाहिक गृह छोड़कर जाती, इस प्रकार संपूर्ण विचारण प्रक्रिया के उपरांत भी प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा आरोप सिद्ध नहीं किया जा सका । प्रत्यर्थी जून, 1998 में वैवाहिक गृह छोड़कर चले जाने के बाद अभी तक वापस नहीं आई है । इन परिस्थितियों में यह निष्कर्ष निकलता है कि यद्यपि प्रत्यर्थी-पत्नी के जून, 1998 में वैवाहिक गृह छोड़कर चले जाने से भौतिक पृथक्करण तो हुआ है किंतु इन वर्षों के दौरान दाम्पत्य जीवन का पुन: आरंभ न होने से प्रत्यर्थी-पति द्वारा शत्रुभाव रखे जाने का निष्कर्ष निकलता है अर्थात् यह पता चलता है कि प्रत्यर्थी-पत्नी स्थायी रूप से बंद करना चाहती थी । अत: प्रत्यर्थी पर लगाया गया अभित्यजन का आरोप सिद्ध होता है । वैवाहिक वाद की कार्यवाही आपराधिक विचारण और वर्तमान अपील जो 14 वर्ष से अधिक समय से लंबित है, से पक्षकारों के बीच ऐसी दूरी बन गई है जिससे यह अहसास होता है कि यह विवाह-बंधन असाध्य रूप से समाप्त हो गया है । यद्यपि हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 के अधीन विवाह का असाध्य विघटन विवाह-विच्छेद का कोई मान्य आधार नहीं है किंतु अन्य सुस्थापित आधारों पर संचयी रूप से विचार करने पर यह पता चलता है कि विवाह-विच्छेद के अभिवाक् को विनिश्चित करते समय ऐसे अतिरिक्त कारक को भी ध्यान में रखना चाहिए ।

यह सत्य है कि तारीख 5 नवंबर, 1998 को इस विवाह-बंधन से पुत्री ने जन्म लिया था जिसकी आयु अब 21 वर्ष है जो एम. टेक पाठ्यक्रम की छात्रा है जिसके भविष्य और विवाह संबंधी संभावनाओं पर ध्यान देना होगा किंतु केवल 13 मास के दाम्पत्य जीवन के पश्चात् लगभग 22 वर्ष के लंबे समय तक अलग-अलग रहने के तथ्य से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि पति-पत्नी के बीच ऐसा कोई भावनात्मक संबंध नहीं बचा है जिसे पुनर्जीवित किया जा सके । विवाह केवल एक

विधिक बंधन है । जब वैवाहिक बंधन सुधार के परे हो जाए तब ऐसे मामलों में विधि विवाह की पवित्रता को महत्व नहीं दे पाती है । इसके प्रतिकूल, पक्षकारों की भावनाओं को बहुत ही कम महत्व दिया जाता है । ऐसी परिस्थितियों से दोनों के साथ क्रूरता कारित हो सकती है, जैसाकि **समर घोष** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है जिसमें पति-पत्नी 16 वर्ष 6 महीने से भी अधिक समय से अलग-अलग रह रहे थे । वर्तमान मामले में, पति-पत्नी को अलग-अलग रहते हुए अब तक 22 वर्ष से अधिक समय बीत चुका है । अत: हमारी सुविचारित राय में प्रत्यर्थी-पत्नी के विरुद्ध क्रूरता और अभित्यजन जैसे दोनों ही आरोप सिद्ध होते हैं और चूंकि दोनों पक्षकार 22 वर्ष से अधिक समय से अलग-अलग रह रहे हैं इसलिए हमारा यह मत है कि यह विवाह विघटित किए जाने योग्य है । तद्नुसार, पक्षकारों के बीच विवाह विघटित किया जाता है ।

25. अपीलार्थी भारत कोकिंग कोल लिमिटेड क्षेत्र सं. 3, धनबाद में मुख्य अभियंता (विद्युत एवं यांत्रिक) है । एक प्रश्न के उत्तर में अपीलार्थी ने यह कथन किया है कि उसकी कुल आय 1,80,000/- रुपए है और उसमें से 80,000/- रुपए प्रतिमाह ही प्रत्यहृत करता है । अपीलार्थी ने यह कथन किया है कि उसकी अभी 5 वर्ष की सेवा शेष है । अपीलार्थी ने यह भी कथन किया है कि उसकी अपनी पुत्री के विवाह के लिए 3,00,000/- रुपए का भी निवेश किया है । तारीख 2 फरवरी, 2016 के आदेश के अनुसरण में प्रत्यर्थी और उसकी पुत्री क्रमश: 10,000/- रुपए और 5,000/- रुपए भरणपोषण के रूप में प्राप्त कर रहे हैं । प्रत्यर्थी की स्पष्ट रूप से अन्य किसी भी स्रोत से आमदनी नहीं है और उसकी पुत्री भी आश्रित के रूप में एम. टेक पाठ्यक्रम में पढ़ाई कर रही है । वास्तव में तारीख 17 सितंबर, 2020 के इस न्यायालय के पूर्ववर्ती आदेश द्वारा अपीलार्थी ने अपनी पुत्री की आधी फीस अर्थात् 70,500/- रुपए एम. टेक पाठ्यक्रम (वायरलैस टेक्नोलॉजी, टेली कम्युनिकेशन एण्ड इलेक्ट्रोनिक्स, बी.आई.टी. मेसरा) के प्रथम वर्ष में जमा किए थे ।

26. इन सभी बातों को दृष्टिगत करते हुए हमारी यह सुविचारित राय है कि अपीलार्थी 25,00,000/- (पच्चीस लाख) रुपए का संदाय स्थायी निर्वाहिका के रूप में करेगा । 25,00,000/- (पच्चीस लाख) रुपए में से 15,00,000/- (पन्द्रह लाख) रुपए प्रत्यर्थी पत्नी को और 10,00,000/- (दस लाख) रुपए पुत्री को दिए जाएंगे । पुत्री को दी गई 10,00,000/- रुपए की इस धन राशि में से 4,00,000/- रुपए का प्रयोग उसकी शिक्षा के लिए और 6,00,000/- रुपए उसके विवाह के प्रयोजनार्थ रखे जाएंगे । अपीलार्थी द्वारा पुत्री के नाम में जो निवेश किया गया है उस राशि का संवितरण भी उसके विवाह के समय किया जा सकता है । अपीलार्थी स्थायी निर्वाहिका की राशि का संदाय डिक्री की तारीख से 4 मास के भीतर करेगा । स्थायी निर्वाहिका का संदाय किए जाने पर अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी और उसकी पुत्री को संदाय किया जा रहा अंतरिम भरणपोषण समाप्त कर दिया जाएगा । विद्वान् मुख्य न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय बोकारो द्वारा 2003 के वाद सं. 13 में पारित तारीख 30 मार्च, 2007 का आक्षेपित निर्णय और तारीख 9 अप्रैल, 2007 को पारित डिक्री अपास्त किए जाते हैं । अपील मंजूर की जाती है । तद्नुसार डिक्री पारित की जाए ।

27. निचले न्यायालय का निर्णय सम्बंधित न्यायालय को वापस भेजा जाता है ।

28. अनंतरिम आवेदन बंद किए जाते हैं ।

अपील मंजूर की गई ।

अस.

अनिल कुमार तिवारी और एक अन्य

बनाम

झारखंड राज्य और एक अन्य

(2020 की सिविल रिट याचिका सं. 3950)

तारीख 10 मार्च, 2021

न्यायमूर्ति राजेश शंकर

माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण तथा कल्याण अधिनियम, 2007 (2007 का 56) – धारा 22(2) – वरिष्ठ नागरिकों के प्राण और संपत्ति की संरक्षा – पुत्र और पुत्रवधू अर्थात याचियों की बेदखली का आवेदन फाइल किया जाना – याचियों द्‌वारा प्रत्यर्थी/वरिष्ठ नागरिक के साथ दुर्व्यवहार किया जाना – पुत्र/याची की आर्थिक स्थिति का दुर्बल पाया जाना – प्रश्नगत क्वार्टर प्रत्यर्थी की स्व-अर्जित संपत्ति है जिसमें रहने के लिए पुत्र अपनी निर्धनता का अवलंब नहीं ले सकता, साथ ही पुत्रवधू के साथ दुर्व्यवहार किए जाने का भी कोई साक्ष्य नहीं है, अतः पुत्र और पुत्रवधू को संपत्ति से बेदखल किए जाने के निचले न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

वर्तमान रिट याचिका, 2020 के वरिष्ठ नागरिक मामला सं. 1 में उपखंड मजिस्ट्रेट, रांची द्‌वारा पारित तारीख 19 अक्तूबर, 2020 के उस आदेश (उपाबंध-3) को अपास्त कराने के लिए फाइल की गई है जिसके द्‌वारा प्रत्यर्थी सं. 1 के पिता (प्रत्यर्थी सं. 2) और प्रत्यर्थी सं. 2 के श्वसुर द्‌वारा माता-पिता और वरिष्ठ नागरिक का संरक्षण और कल्याण अधिनियम, 2007 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम, 2007" कहा गया है) की धारा 22(2) के अधीन फाइल किया गया आवेदन मंजूर किया गया है और याचियों को यह निदेश दिया गया है कि वे क्वार्टर सं. सीडी/589, ओएचसी, रशियन होस्टल, विधानसभा, पुलिस थाना-जगरनाथपुर, जिला रांची (जिसे इसमें इसके पश्चात् "उक्त क्वार्टर" कहा गया है) खाली करे ।

याचियों के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि प्रत्यर्थी सं. 2 हैवी इंजीनियरिंग कारपोरेशन (एच.ई.वी), रांची में कर्मचारी था और उसने उक्त क्वार्टर दीर्घकालिक पट्टे (एल.टी.एल) पर लिया हुआ था और वह याचियों और परिवार के अन्य सदस्यों के साथ उसी क्वार्टर में रहता है । यह भी दलील दी गई है कि वर्ष 2007 में जब उक्त क्वार्टर प्रत्यर्थी सं. 2 को आबंटित किया गया था तब वह वास करने योग्य नहीं था और याचियों ने अपने श्रमिकों की सहायता से इसे रहने योग्य बनाया । यह भी दलील दी गई है कि याचियों के एक चचेरे भाई शैलेश कुमार तिवारी ने उक्त क्वार्टर में शिक्षा ग्रहण करने हेतु निवास करना आरंभ कर दिया था किंतु बाद में वह प्रत्यर्थी सं. 2 पर याचियों को उक्त क्वार्टर खाली करने के लिए विवश करने लगा जिसके परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी सं. 2 याचियों पर उक्त क्वार्टर छोड़ने का दबाव बनाने लगा । यह भी दलील दी गई है कि याचियों के दो बच्चे हैं जो एक अच्छे स्कूल में पढ़ाई करते हैं । याची सं. 1 एच.ई.सी., रांची की बाह्य-स्रोत कंपनी में कर्मचारी है और उसकी मासिक आय मात्र 8,000/-रुपए है जो याचियों और उनके बच्चों के भरणपोषण के लिए पर्याप्त नहीं है । यह भी दलील दी गई है कि प्रत्यर्थी सं. 2 ने अधिनियम की धारा 22(2) के अधीन उपखंड मजिस्ट्रेट, रांची के समक्ष आवेदन फाइल किया कि जिसमें अन्य बातों के साथ याचियों को यह निदेश दिए जाने की प्रार्थना की कि वे उक्त क्वार्टर जो उसकी स्व-अर्जित संपत्ति है, खाली करें । उपखंड मजिस्ट्रेट, रांची ने अपने अधिकारियों के माध्यम से जांच कराने का आदेश किया जिन्होंने अपनी रिपोर्ट में यह प्रकट किया कि याचियों द्वारा प्रत्यर्थी सं. 2 के विरुद्ध कोई भी हिंसक कृत्य नहीं किया गया है । तथापि, विद्वान् उपखंड मजिस्ट्रेट, रांची ने तारीख 19 अक्तूबर, 2020 को आक्षेपित आदेश पारित किया जिसमें याचियों को उक्त आदेश के 15 दिनों के भीतर उक्त क्वार्टर खाली करने का निदेश दिया । इस आदेश से व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका फाइल की गई । याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – याचियों के विद्वान् काउंसेल को सुना गया है और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया गया है । आक्षेपित

आदेश का अवलोकन करने पर यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं. 2 एक वृद्ध पुरुष है जिसकी आयु 70 वर्ष है । वह एच.ई.सी., रांची का सेवानिवृत्त कर्मचारी भी है । उक्त क्वार्टर प्रत्यर्थी सं. 2 की स्व-अर्जित संपत्ति है । जांच में यह पाया गया है कि कोई भी हिंसक कृत्य कारित नहीं किया गया है, फिर भी इतना तो प्रकट हुआ है कि याची प्रत्यर्थी सं. 2 पर मानसिक दबाव बनाया करते थे । आक्षेपित आदेश में जिन तथ्यों का उल्लेख किया गया है उनका खंडन याचियों द्वारा इस न्यायालय के समक्ष प्रतिकूल सामग्री प्रस्तुत करके नहीं किया गया है । वर्तमान मामले में अर्जीदारों के बीच ऐसा कोई भी वैवाहिक विवाद नहीं है । इसके अतिरिक्त, उक्त क्वार्टर प्रत्यर्थी सं. 2 को मात्र इस कारण स्थानांतरित नहीं किया गया है कि अधिनियम, 2007 के उपबंधों का लाभ लेते हुए याची सं. 2 को उससे बाहर कर दिया जाए । बल्कि वास्तविकता यह है कि याची पति पत्नी होने के कारण एक साथ मिलकर प्रत्यर्थी सं. 2 से मुकदमा लड़ रहे हैं । यह ऐसा मामला भी नहीं है जिसमें याची सं. 2 को, घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 के अधीन उपलब्ध अधिकारों से वंचित करते हुए वैवाहिक गृह से बाहर किया जा रहा हो । इसके प्रतिकूल, प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा यह अभिकथन किया गया है कि याची, प्रत्यर्थी सं 2 को मानसिक यातना दे रहे हैं और इस प्रकार वह अपने पुत्र और पुत्रवधू दोनों को ही स्वार्जित क्वार्टर से बेदखल करना चाहता है । उपरोक्त तथ्यात्मक और विधिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि उपखंड मजिस्ट्रेट, रांची द्वारा पारित तारीख 19 अक्तूबर, 2020 के आदेश में ऐसी कोई कमी नहीं है कि इस न्यायालय को रिट अधिकारिता के अधीन हस्तक्षेप करना पड़े । (पैर 3, 6 और 7)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2020]	2020 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1023 = ए. आई. आर. 2021 एस. सी. 177 : **श्रीमती एस. वनीता** बनाम **उपायुक्त बंगलुरु नगर जिला और अन्य** ।	4

सिविल (रिट) अधिकारिता : 2020 की सिविल रिट याचिका सं. 3950.

विद्वान् उपखंड मजिस्ट्रेट, रांची के तारीख 19 अक्तूबर, 2020 को आक्षेपित आदेश के विरुद्ध रिट याचिका ।

याचियों की ओर से श्री संजय कुमार ठाकुर

प्रत्यर्थियों की ओर से सुश्री दर्शना पोद्दार मिश्रा

आदेश

इस रिट याचिका की सुनवाई वीडियो कान्फ्रेंसिंग के माध्यम से की जा रही है ।

वर्तमान रिट याचिका 2020 के मावो-पास्क मामला सं. 1 में उपखंड मजिस्ट्रेट, रांची द्वारा पारित तारीख 19 अक्तूबर, 2020 के उस आदेश (उपाबंध-3) को अपास्त कराने के लिए फाइल की गई है जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं. 1 के पिता (प्रत्यर्थी सं. 2) और प्रत्यर्थी सं. 2 के श्वसुर द्वारा माता-पिता और वरिष्ठ नागरिक का संरक्षण और कल्याण अधिनियम, 2007 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम, 2007" कहा गया है) की धारा 22(2) के अधीन फाइल किया गया आवेदन मंजूर किया गया है और याचियों को यह निदेश दिया गया है कि वे क्वार्टर सं. सीडी/589, ओएचसी, रशियन होस्टल, विधानसभा, पुलिस थाना-जगरनाथपुर, जिला रांची (जिसे इसमें इसके पश्चात् "उक्त क्वार्टर" कहा गया है) खाली करे ।

2. याचियों के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि प्रत्यर्थी सं. 2 हैवी इंजीनियरिंग कारपोरेशन (एच.ई.वी), रांची में कर्मचारी था और उसने उक्त क्वार्टर दीर्घकालिक पट्टे (एल.टी.एल) पर लिया हुआ था और वह याचियों और परिवार के अन्य सदस्यों के साथ उसी क्वार्टर में रहता है । यह भी दलील दी गई है कि वर्ष 2007 में जब उक्त क्वार्टर प्रत्यर्थी सं. 2 को आबंटित किया गया था तब वह वास करने योग्य नहीं था और याचियों ने अपने श्रमिकों की सहायता से इसे रहने योग्य बनाया । यह भी दलील दी गई है कि याचियों के एक चचेरे भाई शैलेश कुमार

तिवारी ने उक्त क्वार्टर में शिक्षा ग्रहण करने हेतु निवास करना आरंभ कर दिया था किंतु बाद में वह प्रत्यर्थी सं. 2 पर याचियों को उक्त क्वार्टर खाली करने के लिए विवश करने लगा जिसके परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी सं. 2 याचियों पर उक्त क्वार्टर छोड़ने का दबाव बनाने लगा । यह भी दलील दी गई है कि याचियों के दो बच्चे हैं जो एक अच्छे स्कूल में पढ़ाई करते हैं । याची सं. 1 एच.ई.सी, रांची की बाह्य-स्रोत कंपनी में कर्मचारी है और उसकी मासिक आय मात्र 8,000/-रुपए है जो याचियों और उनके बच्चों के भरणपोषण के लिए पर्याप्त नहीं है । यह भी दलील दी गई है कि प्रत्यर्थी सं. 2 ने अधिनियम की धारा 22(2) के अधीन उपखंड मजिस्ट्रेट, रांची के समक्ष आवेदन फाइल किया कि जिसमें अन्य बातों के साथ याचियों को यह निदेश दिए जाने की प्रार्थना की कि वे उक्त क्वार्टर जो उसकी स्व-अर्जित संपत्ति है, खाली करें । उपखंड मजिस्ट्रेट, रांची ने अपने अधिकारियों के माध्यम से जांच कराने का आदेश किया जिन्होंने अपनी रिपोर्ट में यह प्रकट किया कि याचियों द्वारा प्रत्यर्थी सं. 2 के विरुद्ध कोई भी हिंसक कृत्य नहीं किया गया है । तथापि, विद्वान् उपखंड मजिस्ट्रेट, रांची ने तारीख 19 अक्तूबर, 2020 को आक्षेपित आदेश पारित किया जिसमें याचियों को उक्त आदेश के 15 दिनों के भीतर उक्त क्वार्टर खाली करने का निदेश दिया । यह भी दलील दी गई है कि याची सं. 1 के पास उसके वेतन के अतिरिक्त जीविका का अन्य कोई भी साधन नहीं है और इस प्रकार वह अलग से किराए पर मकान लेने की स्थिति में नहीं है । यह भी दलील दी गई है कि याचियों को उक्त क्वार्टर में सम्मान और मर्यादा के साथ रहने का प्रत्येक अधिकार है ।

3. याचियों के विद्वान् काउंसेल को सुना गया है और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया गया है । आक्षेपित आदेश का अवलोकन करने पर यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं. 2 एक वृद्ध पुरुष है जिसकी आयु 70 वर्ष है । वह एच.ई.सी रांची का सेवानिवृत्त कर्मचारी भी है । उक्त क्वार्टर प्रत्यर्थी सं. 2 की स्व-अर्जित संपत्ति है । जांच में यह पाया गया है कि कोई भी हिंसक कृत्य कारित नहीं किया गया है,

फिर भी इतना तो प्रकट हुआ है कि याची प्रत्यर्थी सं. 2 पर मानसिक दबाव बनाया करते थे । आक्षेपित आदेश में जिन तथ्यों का उल्लेख किया गया है उनका खंडन याचियों द्वारा इस न्यायालय के समक्ष प्रतिकूल सामग्री प्रस्तुत करके नहीं किया गया है । तथापि, उक्त क्वार्टर में निवास करने के अधिकार करने का दावा इस आधार पर करते हुए कि याची सं. 1 की आय अलग से मकान किराए पर लेने के लिए पर्याप्त नहीं है और याची सं. 2 पुत्रवधू होने के नाते उक्त मकान में ससम्मान निवास करने की हकदार है ।

4. याचियों के विद्वान् काउंसेल ने **श्रीमती एस. वनीता** बनाम **उपायुक्त, बंगलुरु, नगर जिला और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का अवलंब लिया है । मैंने उक्त निर्णय का परिशीलन किया है । उक्त मामले में यह तथ्य है कि अपीलार्थी के पति ने विवाह के कुछ महीने पहले अपने नाम में एक भूखंड क्रय किया था किंतु उसे उसी मूल्य पर अपने पिता अर्थात् अपीलार्थी के श्वसुर को बेच दिया जिन्होंने उस भूखंड को अपीलार्थी के पति द्वारा विवाह-विच्छेद का मामला संस्थित किए जाने के पश्चात् अपनी पत्नी अर्थात् अपीलार्थी की सास को उपहार में दे दिया । इसके साथ-साथ अपीलार्थी ने अपनी सास और अपने पति के विरुद्ध दहेज प्रपीड़न का मामला दर्ज किया । अपीलार्थी ने अपने पति के विरुद्ध भरणपोषण का भी मामला फाइल किया । इसके पश्चात् सास और श्वसुर ने सहायक आयुक्त, उत्तरी उपखंड बंगलुरु के समक्ष अधिनियम, 2007 के उपबंधों के अधीन आवेदन फाइल किया । सहायक आयुक्त, उत्तरी उपखंड, बंगलुरु ने मूल प्राधिकारी की हैसियत से उक्त आवेदन अपीलार्थी के सास-श्वसुर के पक्ष में मंजूर किया । इसके पश्चात्, अपीलार्थी (पुत्रवधू) ने सहायक आयुक्त, उत्तरी उपखंड, बंगलुरु के आदेश के विरुद्ध अपील प्राधिकरण अर्थात् उपायुक्त जिला बंगलुरु के समक्ष अपील फाइल की जो खारिज कर दी गई । अपीलार्थी द्वारा विद्वान्

[1] 2020 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1023 = ए. आई. आर. 2021 एस. सी. 177.

एकल न्यायाधीश के समक्ष फाइल की गई रिट याचिका तथा उच्च न्यायालय की विद्वान् खंड न्यायपीठ के समक्ष फाइल की गई अपील भी खारिज हो गईं । इसके पश्चात् मामला माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया और माननीय न्यायाधीशों ने उक्त निर्णय के पैरा 9 में निम्न प्रकार अभिनिर्धारित किया :–

> "9. इस न्यायालय द्वारा यह संज्ञान लिया जाता है कि वरिष्ठ नागरिक अधिनियम, 2007 वरिष्ठ नागरिकों को त्वरित और सस्ता उपचार उपलब्ध कराने की दृष्टि से प्रख्यापित किया गया है । तद्नुसार, इस अधिनियम की धारा 7 के अधीन ट्रायब्युनल गठित किए गए हैं । अंत में इन ट्रायब्युनलों को अधिनियम की धारा 8 के अधीन सिविल न्यायालय की सभी शक्तियों के साथ संक्षिप्त जांच कराने की शक्ति भी प्राप्त है । सिविल न्यायालयों की अधिकारिता वरिष्ठ नागरिक अधिनियम, 2007 की धारा 27 के अधीन स्पष्ट रूप से वर्जित है । तथापि, अधिनियम, 2007 की धारा 3 के अधीन आवेदकों द्वारा ईप्सित उपचार का अधिभावी प्रभाव का अर्थ यह नहीं लगाया जा सकता कि पी.डब्ल्यू.डी.वी. अधिनियम, 2005 द्वारा प्रदत्त उपचार और संरक्षा न दी जाए । पी.डब्ल्यू.डी.वी. अधिनियम, 2005 की प्रकृति ऐसे विशेष विधान जैसी है जो लिंग भेद को समाप्त करने के प्रयोजनार्थ अधिनियमित की गई है ताकि पितृसत्तात्मक समाज में आर्थिक असमानता न रहे । दोनों विधानों के प्रभावी प्रयोजन के लिए वरिष्ठ नागरिक अधिनियम, 2007 के अधीन ट्रायब्युनल के लिए यह समुचित होगा कि वह इस अधिनियम की धारा 2(ख) के अधीन परिकल्पित भरणपोषण प्रदान करे जो पी.डब्ल्यू.डी.वी. अधिनियम, 2005 जैसे अन्य विशेष कानून के अन्तर्गत उपलब्ध नहीं है । पी.डब्ल्यू.डी.वी. अधिनियम की धारा 26 के अधीन विधिक कार्यवाहियों के दौरान किसी भी सिविल न्यायालय द्वारा निवास करने के अनुतोष सहित कतिपय अनुतोष प्रदान किए जा

सकते हैं । अतः, यदि ऐसा कोई समग्र विवाद अभिकथित है जैसाकि वर्तमान मामले में उल्लेख किया गया है जिसमें वाद परिसर दो समुदायों के बीच विधि द्वारा संरक्षित है, तब ऐसी स्थिति में वरिष्ठ नागरिक अधिनियम, 2007 के अधीन गठित ट्रायब्युनल के लिए यह समुचित होगा कि वह पी.डब्ल्यू.डी.वी. अधिनियम, 2005 और वरिष्ठ नागरिक अधिनियम, 2007 के अधीन दावा करने वाले पक्षकारों के दावों पर विचार करने के पश्चात् समुचित रूप से अनुतोषों में सुधार करे । वरिष्ठ नागरिक अधिनियम, 2007 की धारा 3 को अधिप्रभावी नहीं बनाया जा सकता और इसके अधीन विधि के अधीन उपलब्ध अन्य संरक्षा विशेषकर पी.डब्ल्यू.डी.वी. अधिनियम, 2005 की धारा 17 के अधीन गृहस्थी संबंधी महिला के अधिकार, को बातिल नहीं किया जा सकता । यदि व्यथित महिला वरिष्ठ नागरिक अधिनियम, 2007 के अधीन गठित ट्रायब्युनल से कोई अनुतोष प्राप्त करती है, तब वह महिला पी.डब्ल्यू.डी.वी. अधिनियम, 2005 की धारा 26 की उपधारा (3) के अधीन मजिस्ट्रेट को सूचित करने के लिए कर्तव्यबद्ध होगी । इस प्रक्रिया से यह सुनिश्चित हो जाएगा कि वरिष्ठ नागरिक अधिनियम, 2007 और पी.डब्ल्यू.डी.वी. अधिनियम, 2005 का सामान्य आशय ऐसे संरक्षित समुदायों को त्वरित अनुतोष दिया गया है जिनकी समाज में नाजुक स्थिति है । विधि के अधीन अधिकार जीवन का अधिकार तब बन सकता है जब साम्यपूर्ण वातावरण बना रहे ।

5. उक्त मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि यदि वरिष्ठ नागरिकों या माता पिताओं के भरणपोषण और संरक्षण को सुनिश्चित करना आवश्यक और समीचीन है तब अधिनियम, 2007 के अधीन गठित ट्रायब्युनल को बेदखली का आदेश करने का प्राधिकार है । तथापि, यह अनुतोष केवल विवाद में के पक्षकारों के दावों पर विचार करने के पश्चात् ही प्रदान किया जा सकता है । यह सत्य है

कि किसी को इस कानून के अधीन किसी भी उपबंध का लाभ इस आधार पर नहीं दिया जा सकता कि वह अन्य पक्षकार को किसी अन्य कानून के लाभ से वंचित करे । किसी अधिनियम विशेष के उपबंध, अन्य अधिनियम के उपबंधों के अनुसरण में लागू किए जाने चाहिए ।

6. वर्तमान मामले के तथ्य और परिस्थितियां, उपरोक्त मामले के तथ्यों से पूर्णतया भिन्न हैं । वर्तमान मामले में अर्जीदारों के बीच ऐसा कोई भी वैवाहिक विवाद नहीं है । इसके अतिरिक्त, उक्त क्वार्टर प्रत्यर्थी सं. 2 को मात्र इस कारण स्थानांतरित नहीं किया गया है कि अधिनियम, 2007 के उपबंधों का लाभ लेते हुए याची सं. 2 को उससे बाहर कर दिया जाए । बल्कि वास्तविकता यह है कि याची पति-पत्नी होने के कारण एक साथ मिलकर प्रत्यर्थी सं. 2 से मुकदमा लड़ रहे हैं । यह ऐसा मामला भी नहीं है जिसमें याची सं. 2 को, घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 के अधीन उपलब्ध अधिकारों से वंचित करते हुए वैवाहिक गृह से बाहर किया जा रहा हो । इसके प्रतिकूल, प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा यह अभिकथन किया गया है कि याची, प्रत्यर्थी सं. 2 को मानसिक यातना दे रहे हैं और इस प्रकार वह अपने पुत्र और पुत्रवधू दोनों को ही स्वार्जित क्वार्टर से बेदखल करना चाहता है ।

7. उपरोक्त तथ्यात्मक और विधिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए मेरा यह निष्कर्ष है कि उपखंड मजिस्ट्रेट, रांची द्वारा पारित तारीख 19 अक्तूबर, 2020 के आदेश में ऐसी कोई कमी नहीं है कि इस न्यायालय को रिट अधिकारिता के अधीन हस्तक्षेप करना पड़े ।

8. तद्नुसार, रिट याचिका में गुणता न होने के कारण वह ख़ारिज की जाती है ।

याचिका खारिज की गई ।

अस.

अमी रंजन

बनाम

हरियाणा राज्य

(2021 की लेटर्स पेटेंट अपील सं. 125)

तारीख 9 मार्च, 2021

न्यायमूर्ति ऋतु बाहरी और न्यायमूर्ति अर्चना पुरी

विशेष विवाह अधिनियम, 1954 (1954 का 43) – धारा 15, 16 और 47 – विवाह का रजिस्ट्रीकरण – विडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से विवाह अधिकारी के कार्यालय में पत्नी की उपस्थिति दर्ज कराए जाने का अभिवाक् – विवाह का गुरुग्राम हरियाणा में संपन्न होना – विवाहोपरांत पत्नी का अमेरिका में कार्यरत होना – पति ने पत्नी की उपस्थिति में पूर्ण छूट दिए जाने की ईप्सा नहीं की है अपितु विडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से उसकी उपस्थित स्वीकार किए जाने की प्रार्थना की है जिसे इस शर्त पर अनुज्ञात किया जा सकता है कि पति अपने साथ तीन साक्षी लेकर विवाह अधिकारी के कार्यालय में उपस्थित होगा और तथ्यों के सत्यापन के पश्चात् पति-पत्नी को विवाह प्रमाणपत्र जारी किया जा सकता है ; अतः, एकल न्यायाधीश का निर्णय न्यायोचित नहीं है ।

इस मामले के संक्षिप्त में तथ्य इस प्रकार हैं कि याची-अपीलार्थी सं. 1 (अमी रंजन) 2017 से पब्लिसिस्ट सैपिएंट (यूनाइटेड किंगडम) में आईटी सलाहकार के रूप में कार्य कर रहा था । याची-अपीलार्थी सं. 2 (मीशा वर्मा) भारतीय मूल की संयुक्त राज्य अमेरिका की नागरिक है और संयुक्त राज्य अमेरिका में रह रही है । वह वर्जीनिया यूनिवर्सिटी स्कूल ऑफ मेडिसिन में रेजीडेन्ट चिकित्सक के रूप में कार्यरत है । अपीलार्थियों ने तारीख 7 दिसंबर, 2019 को गुरुग्राम (हरियाणा) में अपने-अपने कुटुंबों की उपस्थिति में हिन्दू रीति-रिवाजों के अनुसार विवाह अनुष्ठापित किया । विवाह के पश्चात् दोनों क्रमश: तारीख 10 दिसंबर, 2019 और 15 दिसंबर, 2019 को यूनाइटेड किंगडम और संयुक्त राज्य

अमेरिका में अपने-अपने कार्यस्थल पर वापस आ गए । उनके विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन उपायुक्त-सह-विवाह अधिकारी, गुरुग्राम के समक्ष 27 जनवरी, 2020 को फाइल किया गया था । अपीलार्थी-याची सं. 2 ने विवाह अधिकारी से निवेदन किया कि उसे विवाह रजिस्ट्रीकरण के समावेदन को प्रस्तुत करने के उद्देश्य से उसे वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से हाजिर होने की अनुज्ञा दी जाए । विवाह अधिकारी ने अपीलार्थियों को तारीख 3 अप्रैल, 2020 को अपने समक्ष उपस्थित होने के लिए बुलाया । इसी बीच, कोविड-19 महामारी फैलने के कारण अपीलार्थी भारत वापस नहीं आ सके । यहां तक कि भारत सरकार ने तारीख 24 मार्च, 2020 को देशव्यापी लॉकडाउन अधिरोपित कर दिया था । इसी कारण से अपीलार्थी सं. 1 ने तारीख 7 अगस्त, 2020 को विवाह अधिकारी को आवेदन देकर निवेदन किया कि द्वितीय समावेदन की सुनवाई भी विडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से संचालित की जाए । यह अनुरोध तारीख 11 सितंबर, 2020 को पत्र/आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था । यह अभिवाक् किया गया कि अपीलार्थी सं. 2 एक चिकित्सा व्यवसायी है और उसे संयुक्त राज्य अमेरिका में कोविड-19 की आपातकालीन ड्यूटी पर लगाया गया है । अपीलार्थी सं. 1 अपनी पत्नी से मिलने संयुक्त राज्य अमेरिका जा सकता है, लेकिन इस प्रयोजन के लिए उसे वीजा प्राप्त करने के लिए वीजा आवेदन पत्र के साथ विवाह प्रमाणपत्र संलग्न करना होगा । यह भी अभिवाक् किया गया कि इस पृष्ठभूमि में विवाह प्रमाणपत्र नहीं होने के कारण पक्षकारों को अभूतपूर्व कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है । विद्वान् एकल न्यायाधीश के समक्ष याचियों के काउंसेल ने निवेदन किया कि पक्षकारों को अपनी पहचान को अधिप्रमाणित करने के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका और यूनाइटेड किंगडम में भारत के दूतावास/वाणिज्य दूतावास के समक्ष उपस्थित होने के लिए कहा जा सकता है । इसके पश्चात् अपीलार्थी की पहचान को संबंधी देशों में सरकारी अधिकारियों के माध्यम से सत्यापित किया जा सकता है । ऐसा करते समय अधिनियम की धारा 15 और 16 का पर्याप्त अनुपालन करना होगा और विवाह अधिकारी द्वारा वर्चुअल सुनवाई का संचालन करके उनके विवाह का रजिस्ट्रीकरण किया जा

सकेगा । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने याचिका खारिज करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि पूर्वोक्त अधिनियम के अनुबंधों के अनुसार, विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए विहित प्रक्रिया यह अपेक्षा करती है कि पक्षकारों को दो साक्षियों के साथ व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होना चाहिए । विवाह अधिकारी के समाधान के लिए पक्षकारों के रूप में उनकी उपस्थिति तथा लोक अभिलेख अर्थात् अधिनियम की धारा 47 के अधीन तैयार किए गए विवाह प्रमाणपत्र के रखरखाव के लिए किसी नई प्रक्रिया को नहीं अपनाया जा सकता । विडियो कॉन्फ्रेंस की प्रक्रिया को अधिक से अधिक विवाह अधिकारी द्वारा की जाने वाली पूछताछ में मध्यवर्ती प्रक्रिया के दौरान अपनाया जा सकता है । विवाह अधिकारी ने वर्तमान मामले के प्रारंभिक चरण में पक्षकारों को समायोजित किया था और प्रथम समावेदन तथा आवेदन प्रस्तुत करने के चरण में अपीलार्थी सं. 1 को स्वयं के समक्ष विडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से उपस्थित होने की अनुज्ञा दी थी । इसके पश्चात् विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए पक्षकारों को पूर्वोक्त अधिनियम के अनुसार व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होना होगा । वहां पक्षकारों को साक्षियों की उपस्थिति में विवाह प्रमाणपत्र पुस्तक पर हस्ताक्षर करने होंगे । कोई पक्षकार दूर रह कर विवाह प्रमाणपत्र पुस्तक पर हस्ताक्षर नहीं कर सकता । विवाह प्रमाणपत्र पुस्तक पर हस्ताक्षर करने का अर्थ यह नहीं है कि उस पुस्तक पर किसी भी पक्षकार का अधिप्रमाणित हस्ताक्षर चिपका दिया जाए या कॉपी पेस्ट कर दिया जाए । आगे यह देखा गया कि विवाह प्रमाणपत्र पुस्तक एक लोक दस्तावेज है, जिसे जिला विवाह अधिकारी के विशेष कार्यालय में रखा जाता है । इस प्रक्रिया को अपनाना ही होगा । विवाह प्रमाणपत्र पुस्तक की विश्वसनीयता और अधिप्रमाणिकता में कोई भी परिवर्तित नहीं किया जा सकता । एकल न्यायाधीश के इस आदेश से व्यथित होकर लेटर्स पेटेंट अपील फाइल की गई । अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अपीलार्थी सं. 1 (पति) वर्तमान मामले में विवाह रजिस्ट्रार के समक्ष अपनी पत्नी-अपीलार्थी सं. 2 (जो संयुक्त राज्य अमेरिका में कार्य कर रही है) की उपस्थिति में पूर्ण छूट की ईप्सा नहीं कर रहा है । वह यह ईप्सा कर रहा है कि उसकी पत्नी को वीडियो

कॉन्फ्रेंस के माध्यम से पेश होने के लिए अनुज्ञात किया जाए, जिससे विवाह का रजिस्ट्रीकरण किया जा सके । अपीलार्थी सं. 2 (मीशा वर्मा), अपीलार्थी सं. 1 की पत्नी वर्जीनिया यूनिवर्सिटी स्कूल ऑफ मेडिसिन में रेजिडेन्ट चिकित्सक के पद पर कार्यरत थी । अब वह 1, मेडिकल सेन्टर ड्राइव, मॉर्गन टाउन, वेस्ट वर्जीनिया-26505, संयुक्त राज्य के जे. डब्ल्यू. रूबी मेमोरियल अस्पताल में कार्य कर रही है । अपीलार्थियों ने तारीख 7 दिसंबर, 2019 को गुरुग्राम (हरियाणा) में अपने-अपने कुटुंब के सदस्यों की उपस्थिति में हिन्दू रीति-रिवाजों के अनुसार विवाह अनुष्ठापित किया । इस मामले में वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से मीशा वर्मा की हाजिरी को सुनिश्चित किया जा सकता है और विवाह रजिस्ट्रार के कार्यालय में पति-अमी रंजन और तीन साक्षियों को विवाह रजिस्ट्रार के कार्यालय में उपस्थित कराया जा सकता है । फिर तथ्यों का सत्यापन करके जैसाकि विशेष विवाह अधिनियम की धारा 15 और 16 में अनुध्यात है, विवाह प्रमाणपत्र जारी किया जा सकता है । जब एक बार विवाह प्रमाणपत्र जारी कर दिया जाता है तब इसे विवाह प्रमाणपत्र पुस्तक में प्रविष्ट करके अधिनियम की धारा 47 के अधीन लोक अभिलेख का भाग बनाया जा सकता है । इससे अधिनियम की धारा 47 का कोई अतिक्रमण नहीं होगा । अपीलार्थी सं. 1 अमी रंजन की पत्नी मीशा वर्मा की उपस्थिति वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से करके संपूर्ण कार्यवाही पूरी की जा सकती है । सभी आशयों और प्रयोजनों के लिए यह एक वैध प्रमाणपत्र होगा । (पैरा 20)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2021]	2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन केरल 202 : **कार्तिका सलिनकुमार** बनाम **सचिव चेम्पू ग्राम पंचायत और अन्य** ;	12
[2018]	(2018) 1 आई. एल. आर. केरल 377 = (2018) 1 के. एल. टी. 292 : **परदीप कोडिवीडु क्लेटस** बनाम **स्थानीय विवाह रजिस्ट्रार (सामान्य)** ;	4, 11, 18

[2013]	(2013) 1 ए. आई. आर. झारखंड आर. 741 : **उपासना बाली और एक अन्य** बनाम **झारखंड राज्य और अन्य** ;	6, 19
[2010]	ए. आई. आर. 2010 केरल 143 = (2010) 24 आर. सी. आर. (सिविल) 43 : **सरला बेबी** बनाम **केरल राज्य** ;	7, 10
[2007]	ए. आई. आर. 2007 केरल 257 : **दीपक कृष्णन और एक अन्य** बनाम **जिला रजिस्ट्रार एर्णाकुलम और अन्य** ;	7, 9
[2007]	(2007) 42 आर. सी. आर. (सिविल) 222 : **चरणजीत कौर नेगी** बनाम **राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली** ;	4
[2003]	(2003) 4 एस. एस. सी. 601 = ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 2053 : **महाराष्ट्र राज्य** बनाम **डा. प्रफुल्ल बी. देसाई** ।	6, 11, 19

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2021 की लेटर्स पेटेंट अपील सं. 125.

2020 की सिविल रिट याचिका सं. 20480 में उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के तारीख 14 दिसंबर, 2020 के निर्णय के विरुद्ध लेटर्स पेटेन्ट अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री नवनीति प्रसाद सिंह (ज्येष्ठ अधिवक्ता) और श्री नितिन कान्त सेटिया

प्रत्यर्थी की ओर से श्री हितेश पंडित, अपर महाधिवक्ता

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति ऋतु बाहरी ने दिया ।

न्या. बाहरी – वर्तमान लेटर्स पेटेंट अपील इस न्यायालय के विद्‌वान् एकल न्यायाधीश द्‌वारा तारीख 14 सितंबर, 2020 को पारित उस निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है, जिसमें उपकलक्टर-सह-विवाह अधिकारी गुरुग्राम के तारीख 11 सितंबर, 2020 के द्‌वारा जारी

आदेश/पत्र (उपाबंध पी-12) के अभिखंडन की ईप्सा करते हुए याचिका 2020 सिविल रिट सं. 20480 को फाइल किया गया था जिसको खारिज कर दिया गया और यह अभिनिर्धारित किया गया कि बिना विवाह अधिकारी के समक्ष व्यक्तिगत रूप से हाजिर हुए, विशेष विवाह अधिनियम, 1954 (इसमें इसके पश्चात् 'अधिनयिम' निर्दिष्ट किया जाए) के अधीन विवाह के रजिस्ट्रीकरण का कोई उपबंध नहीं है ।

2. मामले के संक्षिप्त में तथ्य इस प्रकार हैं कि याची-अपीलार्थी सं. 1 (अमी रंजन) 2017 से पब्लिसिस्ट सैपिएंट (यूनाइटेड किंगडम) में आईटी सलाहकार के रूप में कार्य कर रहा था । याची-अपीलार्थी सं. 2 (मीशा वर्मा) भारतीय मूल की संयुक्त राज्य अमेरिका की नागरिक है और संयुक्त राज्य अमेरिका में रह रही है । वह वर्जीनिया यूनिवर्सिटी स्कूल ऑफ मेडिसिन में स्थानीय चिकित्सक के रूप में कार्यरत है । अपीलार्थियों ने तारीख 7 दिसंबर, 2019 को गुरुग्राम (हरियाणा) में अपने-अपने कुटुंबों की उपस्थिति में हिन्दू रीति-रिवाजों के अनुसार विवाह अनुष्ठापित किया । विवाह के पश्चात् दोनों क्रमश: तारीख 10 दिसंबर, 2019 और 15 दिसंबर, 2019 को यूनाइटेड किंगडम और संयुक्त राज्य अमेरिका में अपने-अपने कार्यस्थल पर वापस आ गए । उनके विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन उपायुक्त-सह-विवाह अधिकारी, गुरुग्राम के समक्ष 27 जनवरी, 2020 को फाइल किया गया था । अपीलार्थी-याची सं. 2 ने विवाह अधिकारी से निवेदन किया कि उसे विवाह रजिस्ट्रीकरण के समावेदन को प्रस्तुत करने के उद्देश्य से उसे वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से हाजिर होने की अनुज्ञा दी जाए । विवाह अधिकारी ने अपीलार्थियों को तारीख 3 अप्रैल, 2020 को अपने समक्ष उपस्थित होने के लिए बुलाया । इसी बीच, कोविड-19 महामारी फैलने के कारण अपीलार्थी भारत वापस नहीं आ सके । यहां तक कि भारत सरकार ने तारीख 24 मार्च, 2020 को देशव्यापी लॉकडाउन अधिरोपित कर दिया था । इसी कारण से अपीलार्थी सं. 1 ने तारीख 7 अगस्त, 2020 को विवाह अधिकारी को आवेदन देकर निवेदन किया कि द्वितीय समावेदन की सुनवाई भी विडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से संचालित की जाए । यह

अनुरोध तारीख 11 सितंबर, 2020 को पत्र/आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था । (उपाबंध पी-12)

3. यह अभिवाक् किया गया कि अपीलार्थी सं. 2 एक चिकित्सा व्यवसायी है और उसे संयुक्त राज्य अमेरिका में कोविड-19 की आपातकालीन ड्यूटी पर लगाया गया है । अपीलार्थी सं. 1 अपनी पत्नी से मिलने संयुक्त राज्य अमेरिका जा सकता है, लेकिन इस प्रयोजन के लिए उसे वीजा प्राप्त करने के लिए वीजा आवेदन पत्र के साथ विवाह प्रमाणपत्र संलग्न करना होगा । यह भी अभिवाक् किया गया कि इस पृष्ठभूमि में विवाह प्रमाणपत्र नहीं होने के कारण पक्षकारों को अभूतपूर्व कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है ।

4. विद्वान् एकल न्यायाधीश के समक्ष याचियों के काउंसेल ने केरल उच्च न्यायालय के द्वारा **परदीप कोडिवीडु क्लेटस** बनाम **स्थानीय विवाह रजिस्ट्रार**[1] और **चरणजीत कौर नेगी** बनाम **राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली**[2] वाले मामलों में दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय को इस प्रतिपादना के लिए निर्दिष्ट किया है कि पक्षकारों को अपनी पहचान को अधिप्रमाणित करने के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका और यूनाइटेड किंगडम में भारत के दूतावास/वाणिज्य दूतावास के समक्ष उपस्थित होने के लिए कहा जा सकता है । इसके पश्चात् अपीलार्थी की पहचान को संबंधी देशों में सरकारी अधिकारियों के माध्यम से सत्यापित किया जा सकता है । ऐसा करते समय अधिनियम की धारा 15 और 16 का पर्याप्त अनुपालन करना होगा और विवाह अधिकारी द्वारा वर्चुअल सुनवाई का संचालन करके उनके विवाह का रजिस्ट्रीकरण किया जा सकेगा ।

5. विद्वान् एकल न्यायाधीश ने याचिका खारिज करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि पूर्वोक्त अधिनियम के अनुबंधों के अनुसार, विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए विहित प्रक्रिया यह अपेक्षा करती है कि पक्षकारों को दो साक्षियों के साथ व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होना

---

[1] (2018) 1 के. एल. टी. 292.

[2] (2007) 42 आर. सी. आर. (सिविल) 222.

चाहिए । विवाह अधिकारी के समाधान के लिए पक्षकारों के रूप में उनकी उपस्थिति तथा लोक अभिलेख अर्थात् अधिनियम की धारा 47 के अधीन तैयार किए गए विवाह प्रमाणपत्र के रखरखाव के लिए किसी नई प्रक्रिया को नहीं अपनाया जा सकता । विडियो कॉन्फ्रेंस की प्रक्रिया को अधिक से अधिक विवाह अधिकारी द्वारा की जाने वाली पूछताछ में मध्यवर्ती प्रक्रिया के दौरान अपनाया जा सकता है । विवाह अधिकारी ने वर्तमान मामले के प्रारंभिक चरण में पक्षकारों को समायोजित किया था और प्रथम समावेदन तथा आवेदन प्रस्तुत करने के चरण में अपीलार्थी सं. 1 को स्वयं के समक्ष विडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से उपस्थित होने की अनुज्ञा दी थी । इसके पश्चात् विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए पक्षकारों को पूर्वोक्त अधिनियम के अनुसार व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होना होगा । वहां पक्षकारों को साक्षियों की उपस्थिति में विवाह प्रमाणपत्र पुस्तक पर हस्ताक्षर करने होंगे । कोई पक्षकार दूर रह कर विवाह प्रमाणपत्र पुस्तक पर हस्ताक्षर नहीं कर सकता । विवाह प्रमाणपत्र पुस्तक पर हस्ताक्षर करने का अर्थ यह नहीं है कि उस पुस्तक पर किसी भी पक्षकार का अधिप्रमाणित हस्ताक्षर चिपका दिया जाए या कॉपी पेस्ट कर दिया जाए । आगे यह देखा गया कि विवाह प्रमाणपत्र पुस्तक एक लोक दस्तावेज है, जिसे जिला विवाह अधिकारी के विशेष कार्यालय में रखा जाता है । इस प्रक्रिया को अपनाना ही होगा । विवाह प्रमाणपत्र पुस्तक की विश्वसनीयता और अधिप्रमाणिकता में कोई भी परिवर्तित नहीं किया जा सकता ।

6. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने **उपासना बाली और अन्य** बनाम **झारखंड राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में झारखंड उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पारित निर्णय को निर्दिष्ट किया है, जिसमें पति स्वीडन का नागरिक था और पत्नी आस्ट्रेलिया में निवास कर रही थी । वे दोनों लंदन (यूनाइटेड किंगडम) में निवास कर रहे थे और उनका विवाह रांची (झारखंड) में अनुष्ठापित हुआ था । उनके आठ माह का एक छोटा पुत्र था । याचियों के विवाह प्रमाणपत्र के बिना उनके पुत्र का

---

[1] (2013) 1 ए. आई. आर. झारखंड आर. 741.

पासपोर्ट जारी नहीं किया जा सकता था । याची अपने आठ माह के पुत्र को लंदन में अकेला छोड़कर भारत नहीं आ सकते थे । खंडपीठ ने रिट याचिका मंजूर करते हुए कहा कि झारखंड हिन्दू विवाह रजिस्ट्रीकरण नियम, 2002 के अधीन विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन उनके मुख्तारनामा धारक के माध्यम से किया जा सकता है और रजिस्ट्री प्राधिकारी को विडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से याचियों के विवाह के बारे में स्वयं का समाधान करना था । यह देखा गया है कि विशिष्ट मामलों में वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से पक्षकारों की उपस्थिति सुरक्षित की जा सकती है, क्योंकि ऐसे मामलों के तथ्य असाधारण होने के कारण ऐसी ही प्रक्रिया की आवश्यकता होती है । याचिका मंजूर करते समय माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **महाराष्ट्र राज्य** बनाम **डा. प्रफुल्ल बी. देसाई**[1] वाले मामले में पारित निर्णय निर्दिष्ट किया गया था ।

7. श्री हितेश पंडित, अपर महाधिवक्ता, हरियाणा ने दृढ़तापूर्वक दलील दी कि विशेष विवाह अधिनियम, 1954 की धारा 15, 16, 18 और 47 के अनुसार विवाह के रजिस्ट्रीकरण के आवेदन पर दोनों पक्षकारों के द्वारा हस्ताक्षर किए जाने चाहिएं और इसके पश्चात् विवाह अधिकारी को सार्वजनिक नोटिस देना होता है । धारा 15 की सभी शर्तों को पूर्ण करने के पश्चात् विवाह अधिकारी को विवाह रजिस्टर में विवाह प्रमाणपत्र को दर्ज करना होगा । इसे अधिप्रमाणिक दस्तावेज बनाने के लिए संपूर्ण प्रक्रिया को विवाह अधिकारी की उपस्थिति में पूर्ण करना होगा । अधिनियम के अनुसार, विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए किए गए आवेदन में दोनों पक्षकारों के हस्ताक्षर होने चाहिएं और उसके पश्चात् ही अधिनियम की धारा 16 के अनुसार जांच प्रारंभ होती है । केवल इसलिए कि अपीलार्थी विदेश में कार्य कर रहे हैं और उनकी कार्य की परिस्थितियों या उनकी निजी मजबूरियों के कारण उनका विवाह अधिकारी के समक्ष उपस्थित होना कठिन है, तो इस आधार पर विधि के उपबंधों की अनदेखी नहीं की जा सकती । उनकी उपस्थिति विवाह प्रमाणपत्र पुस्तक में और हस्ताक्षर किया जाना आज्ञापक है । राज्य के

---

[1] (2003) 4 एस. सी. सी. 601 = ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 2053.

विद्वान् काउंसेल ने आगे यह दलील दी है कि केवल मध्यवर्ती प्रक्रिया के लिए वीडियो कॉन्फ्रेंस का सहारा लिया जा सकता है । विवाह अधिकारी ने याची-अपीलार्थी सं. 1 को प्रथम समावेदन और विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन करते समय वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से उपस्थित होने की अनुज्ञा देकर प्रारंभिक चरण में ही पक्षकारों को समायोजित कर दिया था । अंतिम चरण में विवाह रजिस्टर पर हस्ताक्षर करने के लिए उनकी उपस्थिति अनिवार्य है और इसलिए अपील खारिज किए जाने योग्य है । राज्य के विद्वान् काउंसेल ने इस प्रतिपादना के लिए **दीपक कृष्णन और अन्य** बनाम **जिला रजिस्ट्रार, एर्णाकुलम और अन्य**[1] वाले मामले में केरल उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट करते हुए कहा है कि विशेष विवाह अधिनियम, 1954 की धारा 15 और 16 की प्रकृति आज्ञापक है । जिला विवाह अधिकारी धारा 15 और 16 के अधीन अनुध्यात 30 दिनों की अवधि को कम करके विवाह का रजिस्ट्रीकरण नहीं किया जा सकता । उन्होंने **सरला बेबी** बनाम **केरल राज्य**[2] वाले मामले में केरल उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय निर्दिष्ट किया है, जिसमें केरल विवाह रजिस्ट्रीकरण (सामान्य) नियम, 2008 के नियम 11 पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए पति-पत्नी की व्यक्तिगत उपस्थिति आज्ञापक है । यदि व्यक्तिगत उपस्थिति के बिना विवाह के रजिस्ट्रीकरण की अनुज्ञा दी जाती है, तो इस सुविधा का अत्यधिक दुरुपयोग किया जा सकता है ।

8. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना ।

9. **दीपक कृष्णन** (उपरोक्त) वाले मामले में, पक्षकार 30 दिन की अवधि को कम करने की ईप्सा कर रहे थे जो अधिनियम की धारा 15 के अनुसार तब अपेक्षित था जब रजिस्ट्रार द्वारा विवाह के संबंध में आक्षेपों को आमंत्रित करते हुए 30 दिनों की सूचना भेजी जाती है । यह अभिनिर्धारित किया गया कि धारा 15 के उपबंध आज्ञापक हैं और इस अवधि को कम नहीं किया जा सकता है ।

---

[1] ए. आई. आर. 2007 केरल 257.

[2] (2010) 24 आर. सी. आर. (सिविल) 43 = ए. आई. आर. 2010 केरल 143.

10. लेकिन वर्तमान मामले में यह प्रार्थना नहीं की गई है । वर्तमान मामले के तथ्यों के अनुसार अपीलार्थी अधिनियम की धारा 15 के अधीन 30 दिनों की अवधि को कम करने की ईप्सा नहीं कर रहे हैं जब विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन फाइल करने के पश्चात् आक्षेपों को आमंत्रित किया गया था । तथापि, 30 दिनों की अवधि के उपबंध के संबंध में, जैसाकि अधिनियम की धारा 15 के अधीन अनुध्यात है, खंड न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया है कि यह उपबंध आज्ञापक नहीं बल्कि निदेशात्मक था । इसलिए इस उपबंध का अननुपालन न करने पर विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए प्रस्तुत आवेदन अधिनियम की धारा 15 के विरुद्ध नहीं होगा । यह निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों को लागू नहीं होता है । **सरला बेबी** (उपरोक्त) वाले मामले में विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए की गई प्रार्थना यह थी कि विवाह अधिकारी के समक्ष पक्षकारों की उपस्थिति में पूर्णत: छूट दी जानी चाहिए । यहां तक कि यह निर्णय भी यहां लागू नहीं होगा, क्योंकि वर्तमान मामले में पक्षकार उपस्थिति में छूट की ईप्सा नहीं कर रहे हैं, बल्कि उनकी प्रार्थना यह है कि अपीलार्थी सं. 2 पत्नी की उपस्थिति को वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से स्वीकार किया जाना चाहिए क्योंकि वह संयुक्त राज्य अमेरिका में हैं और कोविड-19 की प्राधान्य स्थिति के कारण भारत आने में असमर्थ हैं ।

11. **परदीप कोडिवीडु क्लेटस** (उपरोक्त) वाले मामले में केरल उच्च न्यायालय वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से पक्षकारों की उपस्थिति के एक मामले में विचार किया । दोनों पक्षकारों का विवाह वर्ष 2000 में हुआ था और याचियों में से एक 2001 से आयरलैंड में था । परिणामिक रूप से वर्ष 2016 से वे एल-1 और एल-2 वीजा के बल पर संयुक्त राज्य अमेरिका में रहने लगे थे । संयुक्त राज्य अमेरिका में स्थायी निवासी होने के आवेदन के लिए उन्हें अपने देश के सक्षम प्राधिकारी द्वारा जारी विवाह प्रमाणपत्र का उपबंध करने की आवश्यकता हुई । इसलिए, उन्होंने अपने विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए मुख्तारनामा धारक (याचियों में से एक के पिता) के माध्यम से आवेदन किया । इस पृष्ठभूमि में, उन्हें विवाह के स्थानीय रजिस्ट्रार (सामान्य) द्वारा नियमों के अधीन बनाए

गए विवाह के रजिस्टर में अपने हस्ताक्षर करने हेतु उनके समक्ष उपस्थित होने के लिए बुलाया गया था । यह देखा गया है कि आवेदन को फाइल करने के पश्चात् स्थानीय रजिस्ट्रार को ज्ञापन में प्रविष्टियों की शुद्धता और पूर्णत: को सत्यापित करना था और उनके द्वारा बनाए गए विवाह रजिस्टर में उसके विवरणों को तुरंत प्रविष्ट करना था । उक्त नियम के अधीन यह उपबंध किया गया है कि विवाह के पक्षकारों को रजिस्ट्रार के समक्ष उपस्थित होना चाहिए । केरल विवाह पंजीकरण (सामान्य) नियम, 2008 के नियम 11 के अनुसार पक्षकारों को विवाह के रजिस्ट्रीकरण से पूर्व कम से कम एक बार रजिस्ट्रार के समक्ष स्वयं उपस्थित होना चाहिए था । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने **महाराष्ट्र राज्य** बनाम **डा. प्रफुल्ल बी. देसाई**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय को निर्दिष्ट करते हुए अभिनिर्धारित किया कि नियम 11 में अंतर्विष्ट उपबंधों का निर्वचन स्थानीय रजिस्ट्रार को वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से भी स्वीय उपसंजाति को प्राप्त करने में सामर्थ्यकारी बनाना है । रिट याचिका को अनुज्ञात किया गया था और प्रत्यर्थी को निदेश दिया गया था कि वे याचियों के मुख्तारनामा धारक द्वारा किए गए आवेदन पर वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से पक्षकारों की उपस्थिति की ईप्सा करे और पूर्वोक्त (मुख्तारनामा धारक) याचियों की ओर से विवाह रजिस्टर पर हस्ताक्षर कर सकता है ।

12. हाल ही में, **कार्तिका सलिनकुमार** बनाम **सचिव चेम्पू ग्राम पंचायत और अन्य**[2] वाले मामले में केरल उच्च न्यायालय ने एक रिट याचिका को अनुज्ञात किया था, जहां याची का पति कोविड-19 के निर्बंधनों के कारण भारत आने में असमर्थ था और वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से उसके पति की उपस्थिति सुनिश्चित करके याची के विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए और उसके पश्चात् याची और उसके पति के प्राधिकृत प्रतिनिधि के हस्ताक्षर प्राप्त करने के पश्चात् याची को विवाह प्रमाणपत्र जारी करने का निदेश दिया था । दिल्ली उच्च न्यायालय ने

[1] (2003) 4 एस. सी. सी. 601 = ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 2053.

[2] 2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन केरल 202.

चरनजीत कौर नेगी (उपरोक्त) वाले मामले में विवाह के रजिस्ट्रीकरण के मामले पर विचार किया है, जिसमें याची का पति भारत से बाहर रह रहा था । रिट याचिका को मंजूर करते हुए, यह देखा गया कि विवाह के रजिस्ट्रीकरण के उद्देश्य से याची के पति को उसके साथ समसामयिक रूप से पेश होने के लिए मजबूर करने में समय की हानि के अतिरिक्त धन भी खर्च होगा । रजिस्ट्रार के समक्ष किए गए आवेदन के आधार पर यह प्रमाणपत्र दिया जाना चाहिए कि पक्षकारों का विवाह इस विशिष्ट तारीख को हुआ था । अब, विकास ने दुनिया को बदल दिया है और दिल्ली से हजारों किलोमीटर दूर या भारत में अन्य किसी भी स्थान पर रहने वाले व्यक्ति के लिए समसामयिक रूप से किसी अन्य पक्षकार के साथ संवाद करना संभव हो गया है । प्रौद्योगिकी ने पक्षकारों को दस्तावेजों को डिजिटल रूप से सत्यापित करने और इंटरनेट के माध्यम से डिजिटल रूप से सुरक्षित संचारण को सुनिश्चित करने में समर्थ बना दिया है । सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम का उद्देश्य और सिद्धांत इन्हीं विकासों पर आधारित हैं । इस पृष्ठभूमि में, दूरी से पृथक् हुए पति-पत्नी के विवाह का रजिस्ट्रीकरण बदलते हुए समय को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए । दूतावास वीडियो कॉन्फ्रेंस, पहचान का अधिप्रमाणीकरण और समरूप रीति से हस्ताक्षरों का सत्यापन प्रौद्योगिकी के माध्यम से, एक यथोचित तंत्र को विकसित करने के लिए स्वतंत्र है । उक्त निर्णय के पैरा 16 में निम्नलिखित निदेश दिए गए थे :–

> "16. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए चूंकि याची का पति अब संयुक्त राज्य अमेरिका में है और रजिस्ट्रार के समक्ष प्रस्तुत होने के लिए उससे भारत वापस आने की अवेक्षा करना समय की हानि के अलावा धन का भी नुकसान होगा । मामले को यथोचित निदेशों के द्वारा समुचित रूप से निपटाया जा सकता है ।
>
> तदनुसार यह निदेशित किया जाता है –
>
> (1) याची प्रपत्र 'क' भरेगी और इसे अपने पति द्वारा सम्यक् रूप से हस्ताक्षरित करवाकर प्रपत्र 'क' के साथ दूसरे

प्रत्यर्थी के समक्ष प्रस्तुत करेगी । पति के हस्ताक्षर उसके पासपोर्ट के विवरण के साथ संयुक्त राज्य अमेरिका में निकटतम शहर में उपलब्ध काउंसेल जनरल द्वारा अनुप्रमाणित किए जाएंगे । काउंसेल जनरल द्वारा अनुप्रमाणित उसका शपथपत्र और उसके फोटोचित्र की अनुप्रमाणित प्रति को भी दूसरे प्रत्यर्थी को देना होगा ।

(2) याची और उसके पति के पासपोर्ट की एक अनुप्रमाणित प्रति 'प्रपत्र क' के साथ फाइल की जाएगी । इस प्रकार से दिल्ली नगर निगम द्वारा जारी किए गए याची के पुत्र के जन्म को प्रमाणित करने वाले जन्म प्रमाणपत्र की प्रतियां और उसकी जन्मतिथि तथा निवास स्थान का प्रमाण देने वाले ऐसे अन्य दस्तावेज भी उसके द्वारा प्रस्तुत किए जाएंगे ।

(3) याची नियम के अनुसार अपने साक्षी प्रस्तुत करेगी । याची के साथ एक साक्षी पैन कार्ड और/या राशन कार्ड/पासपोर्ट, जैसा भी मामला हो, की प्रति साथ लेकर उपस्थित रहेगा । उक्त साक्षी यह सत्यापित करेगा कि उसने याची और श्री जसपाल सिंह के मध्य हुए विवाह को देखा है । याची अन्य दस्तावेजी साक्ष्य जैसे फोटोग्राफ, आमंत्रण पत्र आदि भी प्रस्तुत करेगा ।

(4) संतुष्ट होने पर कि उपरोक्त सभी अपेक्षाओं को पूर्ण कर दिया गया है, दूसरा प्रत्यर्थी एक आदेश जारी करेगा और 'प्रपत्र ख' में आवश्यक प्रविष्टियां पूरी करेगा ।

(5) ऊपर बताई गई प्रक्रिया के पूर्ण होने पर प्रत्यर्थी सं. 2 यह सुनिश्चित करेगा कि याची और उसके पति को विहित प्रपत्र में दो प्रमाणपत्र जारी किए गए हैं ।"

13. उक्त निर्णय के अनुसार पक्षकारों की पहचान वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से सत्यापित की जा सकती है और उन्हें विवाह प्रमाणपत्र जारी किया जा सकता है ।

14. विद्वान् एकल न्यायाधीश ने आवेदन के चरण से ही वीडियो कॉन्फ्रेंस की प्रक्रिया को स्वीकार कर लिया है । इसलिए अधिनियम की धारा 15 और 16 के अधीन अनुध्यात प्रक्रिया को पूरा करने के उद्देश्य से विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से विवाह अधिकारी के द्वारा स्वीकार किया जा सकता है । तथापि, अगला प्रश्न यह होगा कि क्या विवाह प्रमाणपत्र पुस्तक में विवाह प्रमाणपत्र पर जैसाकि पंचम अनुसूची में विहित है, विवाह के दोनों पक्षकारों के साथ तीन साक्षियों के हस्ताक्षर किए जाने चाहिएं और क्या इस प्रक्रिया को वीडियो कॉन्फ्रेंस के द्वारा कराया जा सकता है या नहीं ।

15. निर्देश के लिए विशेष विवाह अधिनियम, 1954 की सुसंगत धाराएं 15, 16, 18 और 47 को नीचे उद्धृत किया गया है :–

"15. **अन्य रूपों में अनुष्ठापित विवाहों का रजिस्ट्रीकरण** – विशेष विवाह अधिनियम, 1872 (1872 का 38) के अधीन या इस अधिनियम के अधीन अनुष्ठापित विवाह से भिन्न विवाह, चाहे वह इस अधिनियम के प्रारंभ के पूर्व अनुष्ठापित किया गया हो या उसके पश्चात् उन राज्यक्षेत्रों में, जिन पर इस अधिनियम का विस्तार है विवाह अधिकारी द्वारा इस अध्याय के अधीन रजिस्ट्रीकृत किया जा सकेगा यदि निम्नलिखित शर्तें पूरी हो जाएं, अर्थात् –

(क) पक्षकारों का परस्पर विवाह हो चुका है और वे तब से बराबर पति-पत्नी के रूप में साथ रह रहे हैं ;

(ख) किसी पक्षकार का एक से अधिक पति या पत्नी रजिस्ट्रीकरण के समय जीवित नहीं है ;

(ग) कोई पक्षकार रजिस्ट्रीकरण के समय जड़ या पागल नहीं है ;

(घ) पक्षकार रजिस्ट्रीकरण के समय इक्कीस वर्ष की आयु प्राप्त कर चुके हैं ;

(ङ) पक्षकारों में प्रतिषिद्ध डिग्री की नातेदारी नहीं है :

परन्तु इस अधिनियम के प्रारंभ के पूर्व अनुष्ठापित विवाह की दशा में यह शर्त पक्षकारों में से प्रत्येक को शासित करने वाली किसी ऐसी विधि के या विधि का बल रखने वाली रूढ़ि या प्रथा के अध्यधीन होगी जिससे उन दोनों में विवाह अनुज्ञात हो ; तथा

(च) पक्षकार उस विवाह अधिकारी के जिले के भीतर उस तारीख के ठीक पहले, जब विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन विवाह अधिकारी से किया गया हो, कम से कम तीस दिन की कालावधि तक निवास करते रहे हैं ।

16. **रजिस्ट्रीकरण के लिए प्रक्रिया** – इस अध्याय के अधीन विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए विवाह के दोनों पक्षकारों द्वारा हस्ताक्षरित आवेदन की प्राप्ति पर विवाह अधिकारी उसकी लोक सूचना ऐसी रीति से देगा जैसी विहित की जाए और आक्षेपों के लिए तीस दिन की कालावधि अनुज्ञात करने के पश्चात् तथा उस कालावधि के भीतर प्राप्त किसी आक्षेप को सुनने के पश्चात्, यदि उसका समाधान हो जाए कि धारा 15 में वर्णित सब शर्तें पूरी हो जाती हैं, तो वह विवाह-प्रमाणपत्र पुस्तक में विवाह का प्रमाणपत्र, उस प्ररूप में जो पंचम अनुसूची में विनिर्दिष्ट है प्रविष्ट करेगा और ऐसे प्रमाणपत्र पर विवाह के पक्षकार और तीनों साक्षी हस्ताक्षर करेंगे ।

18. **इस अध्याय के अधीन विवाह के रजिस्ट्रीकरण का प्रभाव** – धारा 24 की उपधारा (2) के उपबंधों के अध्यधीन रहते हुए, जहां विवाह का प्रमाणपत्र, विवाह-प्रमाणपत्र पुस्तक में इस अध्याय के अधीन अन्तिम रूप से प्रविष्ट कर लिया गया हो वहां उस विवाह के बारे में ऐसी प्रविष्टि की तारीख से यह समझा जाएगा कि वह इस अधिनियम के अधीन अनुष्ठापित विवाह है और विवाह की तारीख के पश्चात् जन्म लेने वाली सभी संतानों (जिनके नाम भी विवाह-प्रमाणपत्र पुस्तक में दर्ज किए जाएंगे) के बारे में यह समझा जाएगा कि वे अपने माता-पिता की धर्मज संतान हैं और सदैव रही हैं :

परन्तु इस धारा की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह किसी ऐसी संतान को अपने माता-पिता से भिन्न किसी व्यक्ति की सम्पत्ति में या उस पर कोई अधिकार किसी ऐसी दशा में प्रदान करती है जब ऐसी संतान ऐसा कोई अधिकार रखने या अर्जित करने के लिए इस अधिनियम के पारित न होने की दशा में इस कारण अयोग्य होती कि वह अपने माता-पिता की धर्मज संतान नहीं है ।

47. **विवाह-प्रमाणपत्र पुस्तक का निरीक्षण के लिए उपलब्ध रहना** – (1) इस अधिनियम के अधीन रखी जाने वाली विवाह-प्रमाणपत्र पुस्तक सभी उचित समयों पर निरीक्षण के लिए उपलब्ध रहेगी और उसमें अंतर्विष्ट कथनों के साक्ष्य के रूप में ग्राह्य होगी ।

(2) विवाह-प्रमाणपत्र पुस्तक में से प्रमाणित उद्धरण विवाह अधिकारी, आवेदन किए जाने पर और आवेदक द्‌वारा विहित फीस दिए जाने पर उसे देगा ।"

पंचम अनुसूची (धारा 16 देखिए) – अन्य रूपों में अनुष्ठापित विवाह का प्रमाणपत्र

मैं, एतद्‌द्वारा प्रमाणित करता हूं कि क, ख, और ग, घ वर्ष, 2020 के मास.............. के .... दिन मेरे समक्ष हाजिर हुए और उनमें से प्रत्येक ने मेरी उपस्थिति में, जिन्होंने इसमें नीचे हस्ताक्षर किए हैं, घोषणा की है कि उनका परस्पर विवाह हो चुका है और वे अपने विवाह के समय से पति और पत्नी के रूप में साथ रह रहे हैं और इस अधिनियम के अधीन अपना विवाह रजिस्ट्रीकृत कराने की उनकी इच्छा के अनुसार उक्त विवाह आज वर्ष 2020 के ....मास के ....दिन इस अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत किया गया है और ....से प्रभावी है ।

16. **उपासना बाली** (उपरोक्त) वाले मामले में झारखंड उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ के समक्ष वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से विवाह के रजिस्ट्रीकरण के संबंध में विचार करने के लिए एक मामला आया जिसमें झारखंड हिन्दू विवाह रजिस्ट्रीकरण नियम, 2002 के

अधीन यह अभिनिर्धारित किया गया कि विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन संयुक्त या पृथक् रूप से प्राधिकृत पक्षकारों के सम्यक् रूप से प्राधिकृत मुख्तारनामा प्रस्तुत करने के साथ उन व्यक्तियों की, जो अपने विवाह के रजिस्ट्रीकरण की ईप्सा कर रहे हैं, उनकी वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से उपस्थिति दर्ज करने के संबंध में रजिस्ट्रीकरण प्राधिकारी की संतुष्टि के पश्चात्, किया जा सकता है । खंड न्यायपीठ ऐसे मामले पर विचार कर रहा था जिसमें पति स्वीडिश था और पत्नी आस्ट्रेलियाई थी तथा दोनों हिन्दू थे । पत्नी के माता-पिता रांची (झारखंड) के निवासी थे और (उस मामले में के) याचियों का विवाह झारखंड राज्य के रांची शहर में अनुष्ठापित हुआ था । उनका आठ माह का एक छोटा पुत्र था और पति/पत्नी तथा छोटे बच्चे से मिलकर उनका ऐकिक कुटुंब था । वे लंदन, यूनाईटेड किंगडम में निवास कर रहे थे । याचियों के विवाह प्रमाणपत्र के बिना पुत्र का पासपोर्ट जारी नहीं किया जा सकता था और याची अपने आठ माह के बच्चे को लंदन में छोड़कर भारत नहीं आ सकते थे । खंड न्यायपीठ ने **डा. प्रफुल्ल बी. देसाई** (उपरोक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को निर्दिष्ट करते हुए याचियों को अनुज्ञा दी और रजिस्ट्रीकरण अधिकारी को निदेश दिया कि वे याचियों के विवाह के रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन को उनकी मुख्तारनामा धारक श्रीमती नंदिनी गुप्ता पत्नी दिलीप कुमार गुप्ता की ओर से स्वीकार करे और याचियों के विवाह के संबंध में वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से समाधान होने पर 10 दिनों के भीतर विवाह रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र जारी करने के लिए एक अंतिम आदेश पारित करें । उपरोक्त मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से साक्ष्य को अभिलिखित करने की प्रक्रिया की जांच कर रहा था । उस मामले में साक्षी अमेरिका में रह रहा था और भारत आने में इच्छुक नहीं था । लेकिन, वह वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से साक्ष्य देने को तैयार था । माननीय उच्चतम न्यायालय ने पैरा 11, 12 और 19 में निम्नानुसार मत व्यक्त किया :-

> "11. इस तर्क को उच्च न्यायालय का समर्थन मिला है । उच्च न्यायालय ने विभिन्न उच्च न्यायालय के निर्णयों का अवलंब

लिया है । जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि धारा 273 आज्ञापक है और अभियुक्त की उपस्थिति में साक्ष्य अभिलिखित किया जाना चाहिए । इस स्थिति तक उच्च न्यायालय के निर्णय में कोई दोष दिखाई नहीं देता है । उच्च न्यायालय ने तब विचार किया कि संयुक्त राज्य अमेरिका के न्यायालयों सहित विदेशों में न्यायालयों ने क्या किया है । उच्च न्यायालय ने तब विभिन्न शब्दकोशों में 'उपस्थिति' शब्द के अर्थ के आधार पर विनिश्चय किया और अभिनिर्धारित किया कि धारा 273 में 'उपस्थिति' शब्द का अर्थ न्यायालय में वास्तविक रूप से की गई शारीरिक उपस्थिति है । हम इससे सहमत होने में असमर्थ हैं । हमें इस पर विचार करना होगा कि क्या दंड प्रक्रिया संहिता और साक्ष्य अधिनियम के उपबंधों में वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से साक्ष्य दिए जा सकते हैं । इसलिए, अन्य देशों में न्यायालयों द्वारा क्या दृष्टिकोण अपनाया गया है, यह असंगत है । तथापि, यह केवल उल्लिखित किया जा सकता है कि मैरीलैंड **बनाम** संतरा सन क्रेग [836 का. 497] वाले मामले में संयुक्त राज्य अमेरिका सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग द्वारा साक्ष्यों को अभिलिखित करना छठे संशोधन (विरोधाभासी खंड) का अतिक्रमण नहीं था ।

12. दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत प्रश्न पर विचार करते हुए हमारा यह मत है कि उच्च न्यायालय धारा 273 का परिशीलन ठीक से करने में असफल रहा है । किसी को ऐसी स्थिति में शब्दकोश के अर्थों पर विचार करने की आवश्यकता नहीं होगी जब उपबंध का पठन करने से यह पता चल जाता है कि क्या आशयित है । धारा 273 निम्न प्रकार है –

> "धारा 273 : **साक्ष्य का अभियुक्त की उपस्थिति में लिया जाना** – अभिव्यक्त रूप से जैसा उपबंधित उसके सिवाय, विचारण या अन्य कार्यवाही के अनुक्रम में लिया गया सब साक्ष्य अभियुक्त की उपस्थिति में या जब उसे वैयक्तिक हाजिरी से अभिमुक्त कर दिया गया है तब उसके प्लीडर की उपस्थिति में लिया जाएगा :

स्पष्टीकरण – इस धारा में "अभियुक्त" के अंतर्गत ऐसा व्यक्ति भी है जिसकी बाबत अध्याय 8 के अधीन कोई कार्यवाही इस संहिता के अधीन प्रारंभ की जा चुकी है ।

इस प्रकार धारा 273 वैयक्तिक हाजिरी से अभिमुक्त करती है । ऐसे मामलों में प्लीडर की उपस्थिति में साक्ष्य को अभिलिखित किया जा सकता है । इस प्रकार प्लीडर की उपस्थिति को अभियुक्त की उपस्थिति माना जाता है । इस प्रकार धारा 273 आन्वयिक उपस्थिति को अनुध्यात करती है । इससे यह दर्शित होता है कि वास्तविक भौतिक उपस्थिति अनिवार्य नहीं है । इससे यह उपदर्शित होता है कि शब्द 'उपस्थिति', जैसाकि इस धारा में उपयोग किया गया है, को वास्तविक भौतिक उपस्थिति के अर्थ में उपयोग नहीं किया गया है । धारा 273 का पठन करने से ही यह पता चलता है कि 'उपस्थिति' शब्द का ऐसा निर्बंधनात्मक अर्थ नहीं लगाया जा सकता है जिसकी ईप्सा की गई है । यहां भारतीय साक्ष्य अधिनियम में परिभाषित शब्द 'साक्ष्य' की परिभाषा पर भी ध्यान देना अनिवार्य है । भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 3 निम्न प्रकार है –

"साक्ष्य" : "साक्ष्य" से अभिप्रेत है और उसके अंतर्गत आते हैं –

(1) वे सभी कथन जिनके, जांचाधीन तथ्य के विषयों के संबंध में न्यायालय अपने सामने साक्षियों द्वारा किए जाने की अनुज्ञा देता है ; या अपेक्षा करता है । ऐसे कथन मौखिक साक्ष्य कहलाते हैं ;

(2) न्यायालय के निरीक्षण के लिए पेश किए गए सब दस्तावेज, जिनके अंतर्गत इलैक्ट्रानिक अभिलेख भी हैं ; ऐसे दस्तावेज, दस्तावेजी साक्ष्य कहलाते हैं ।"

इस प्रकार साक्ष्य मौखिक और दस्तावेजी दोनों हो सकते हैं और साक्ष्य के रूप में इलैक्ट्रानिक अभिलेखों को पेश किया जा

सकता है । इसका अर्थ यह है कि दांडिक मामलों में भी साक्ष्य को इलैक्ट्रानिक्स के माध्यम से पेश किया जा सकता है । इसमें वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग भी सम्मिलित हैं ।

19. इस प्रक्रम पर हमें श्री सुंदरम द्वारा दी गई दलील पर विचार करना चाहिए । यह दलील दी गई कि वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग को भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन अभियुक्त के अधिकारों के रूप में अनुज्ञात नहीं किया जा सकता है और इसे ऐसी प्रक्रिया के अध्यधीन नहीं किया जा सकता है जहां 'आभासी वास्तविकता' एक ऐसी अवस्था है जिसमें किसी व्यक्ति को ऐसी अनुभूति कराई जाती है या कोई भी बात सुनायी जाती है या ऐसी कोई कल्पना कराई जाती है जो वास्तव में विद्यमान नहीं है । 'आभासी वास्तविकता' में जब कोई व्यक्ति गर्म कमरे में बैठा हो तो उसे ठंडक की अनुभूति कराई जा सकती है, जब कोई व्यक्ति पहाड़ों में बैठा हो तो उसे समुद्र की आवाज सुनायी जा सकती है । किसी व्यक्ति को यह कल्पना भी कराई जा सकती है कि वह ग्रांड प्रिक्स रेस में भाग ले रहा है, जबकि वह व्यक्ति किसी सोफे आदि पर बैठकर आराम कर रहा होता है । वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग का आभासी वास्तविकता से कोई लेना-देना नहीं है । विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हुई प्रगति ने अब, दुनिया को कहने के लिए, छोटा कर दिया है । वह अब किसी व्यक्ति को दूर की घटनाओं को इस प्रकार देखने और सुनने में समर्थ बनाता है, जैसेकि वह सब वास्तव में हो रहा है । उदाहरणार्थ आज विश्व कप के मैचों को देखने के लिए दक्षिण अफ्रीका जाने की जरूरत नहीं है । कोई भी व्यक्ति अपने टीवी पर इस खेल को इस प्रकार (लाइव) देख सकता है मानो उसकी आंखों के सामने चल रहा हो । यदि कोई व्यक्ति स्टेडियम में बैठकर मैच देख रहा है तो उसकी उपस्थिति में उसकी आंखों के सामने मैच खेला जा रहा है और वह भी खिलाड़ियों की उपस्थिति में स्टेडियम में बैठा हुआ है । जब कोई व्यक्ति अपने दर्शन-गृह में बैठकर टीवी पर खेल देख रहा हो, तो यह नहीं कहा जा सकता कि वह खिलाड़ियों की उपस्थिति में है

लेकिन साथ ही एक व्यापक अर्थ में यह कहा जा सकता है कि मैच उसकी उपस्थिति में खेला जा रहा है । दोनों व्यक्ति जो व्यक्ति स्टेडियम में बैठा है और जो व्यक्ति दर्शन-गृह में बैठा है वे वह देख रहे हैं, जो वास्तव में जैसे घटित हो रहा है उसे वैसे ही देख रहे हैं । यह आभासी वास्तविकता नहीं है । यह यथार्थ वास्तविकता है । एक व्यक्ति वास्तव में वह देख और सुन रहा है जो घटित हो रहा है । वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग विज्ञान और प्रौद्योगिकी में एक ऐसी उन्नति है, जो किसी व्यक्ति को उसी सुविधा और सहजता के साथ दूर के व्यक्ति को स्क्रीन पर देखने, सुनने और बात करने की अनुज्ञा इस प्रकार देती है जैसे वास्तव में मौजूद हो । स्पर्श करने के अलावा कोई भी देख, सुन और संप्रेक्षण इस प्रकार कर सकता है, जैसेकि पक्षकार एक ही कमरे में हो । वीडियो कॉन्फ्रेंस में दोनों पक्षकार एक-दूसरे की उपस्थिति में होते हैं । प्रत्यर्थियों के काउंसेल ने दलीलें उस तर्क के समान दी हैं जिसमें दूरबीन या दूरवीक्षण यंत्र के माध्यम से देखने वाला व्यक्ति वास्तव में यह नहीं देख रहा है कि क्या हो रहा है । यह ऐसी दलील देने के समान है कि जिस व्यक्ति को दूरबीन या दूरवीक्षण यंत्र के माध्यम से देखा गया है वह व्यक्ति अवलोकन करने वाले व्यक्ति की 'उपस्थिति' में नहीं है । इस प्रकार यह सुस्पष्ट है कि जब अभियुक्त और/या उसका प्लीडर वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग द्‌वारा साक्ष्य अभिलिखित करते समय उपस्थित हो तो वह साक्ष्य अभियुक्त की 'उपस्थिति' में अभिलिखित किया जा रहा है और वह दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 273 की अपेक्षा को पूर्ण रूप से समाधान करेगा । ऐसे साक्ष्य को 'विधि द्‌वारा स्थापित प्रक्रिया' के अनुसार अभिलिखित किया जाएगा ।

वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग द्‌वारा साक्ष्य अभिलिखित करने पर धारा 273 में उपबंधित इस उद्देश्य का भी समाधान हो जाता है कि साक्ष्य अभियुक्त की उपस्थिति में अभिलिखित किया जाना चाहिए । अभियुक्त और उसका प्लीडर साक्षी को इतने स्पष्ट रूप से देख सकते हों जैसे कि साक्षी वास्तव में उनके समक्ष बैठा हो । वास्तव में अभियुक्त, लोगों से खचाखच भरे न्यायालय कक्ष के कटघरे की

तुलना वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से साक्षी बेहतर तरीके से पहचान सकता है । वे उसके हावभाव को भी देख सकते हैं । वास्तव में दोबारा प्ले किए जाने की सुविधा साक्षी के व्यवहार को समझने में सहायता करती है । वे साक्षी के कथन को एक बार से अधिक भी सुन सकते हैं । अभियुक्त अपने प्लीडर को तुरंत अनुदेश देने में सक्षम होगा और इस प्रकार साक्षी की प्रतिपरीक्षा बेहतर नहीं हो तो उतनी प्रभावी अवश्य होगी । दोबारा सुनने की सुविधा साक्षी की प्रतिपरीक्षा के दौरान एक अतिरिक्त लाभ देगी । साक्षी का दस्तावेजों या अन्य सामग्री या कथन से उसी प्रकार से सामना कराया जा सकता है जैसेकि वह न्यायालय में ही था । वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग द्वारा साक्ष्य अभिलिखित किए जाने पर इन सभी उद्देश्यों की पूर्ति पूर्ण रूप से हो जाएगी । इस प्रकार अभियुक्त पर किसी भी प्रकार का कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा है । निस्संदेह, जैसाकि इसमें इसके पश्चात् आगे उपवर्णित किया गया है, साक्ष्य वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग द्वारा कुछ शर्तों पर अभिलिखित किया जाना चाहिए ।

तब दांडिक प्रक्रिया संहिता की धारा 274 और 275 का अवलंब लिया गया जिसके अधीन यह अपेक्षा की गई है कि साक्ष्य को लिखित रूप में मजिस्ट्रेट द्वारा या खुले न्यायालय में उनके श्रुतलेख द्वारा लिया जाए । यह दलील दी गई कि वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग विदेश संचार निगम लिमिटेड के स्टूडियो में होनी थी । यह भी दलील दी गई कि इससे मजिस्ट्रेट द्वारा या उसके श्रुतलेख के द्वारा खुले न्यायालय में साक्ष्य नि:संकोच अभिलिखित करने के हेतु अभियुक्त के अधिकार का अतिक्रमण होगा । विज्ञान और प्रौद्योगिकी की उन्नति ऐसी है कि अब न्यायालय में ही वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के उपकरण को स्थापित करना संभव है । ऐसे मामले में साक्ष्य को मजिस्ट्रेट या उसके श्रुतलेख द्वारा न्यायालय में नि:संकोच अभिलिखित किया जाएगा । यदि ऐसा किया जाता है तो इन धाराओं की अपेक्षा का पूर्ण समाधान हो जाएगा । तथापि, इस रीति में एक कमी है । जैसेकि साक्षी अब न्यायालय में है यदि वह

न्यायालय का अवमान करता है या स्वयं सशपथ मिथ्या साक्ष्य देता है और तुरंत अवेक्षा की जाती है कि उसने स्वयं शपथ पर मिथ्या साक्ष्य दिया है तो वहां पर कठिनाई हो सकती है । अत: प्रज्ञा की दृष्टि से खुले न्यायालय में वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग द्वारा साक्ष्य केवल तब दिया जाना चाहिए यदि साक्षी ऐसे देश में है, जिसकी भारत के साथ प्रत्यर्पण संधि है और जिसकी विधि के अधीन न्यायालय का अवमान करना और सशपथ मिथ्या साक्ष्य देना दंडनीय हो ।

17. माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 284 और 285 के अधीन कमीशन पर साक्ष्य का परीक्षण किया जा सकता है और सामान्यत: कमीशन में साक्षी जहां है वहां साक्ष्य अभिलिखित करना सम्मिलित है । तथापि, विज्ञान और प्रौद्योगिकी की उन्नति ने अब उस नगर/शहर में, जहां न्यायालय है, वहां वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से ऐसा साक्ष्य अभिलिखित करना संभव बना दिया है । इस प्रकार ऐसे मामलों में जहां किसी साक्षी की उपस्थिति विलंब, व्यय या असुविधा के बिना उपाप्त नहीं की जा सकती है, तब वहां न्यायालय वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से साक्ष्य अभिलिखित करने के लिए एक कमीशन नियुक्त करने पर विचार कर सकता है । भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 3 के अनुसार साक्ष्य मौखिक और दस्तावेजी दोनों हो सकते हैं और साक्ष्य के रूप में इलैक्ट्रानिक अभिलेख भी प्रस्तुत किए जा सकते हैं और इसमें वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग सम्मिलित है । पूर्वोक्त निर्णय में माननीय उच्चतम न्यायालय ने विभिन्न स्तरों पर वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग को विधिमान्य ठहराते हुए वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के उपयोग में अपनायी जाने वाली रीति से सम्बंधित निदेश भी जारी किए हैं । न्यायालय के पीठासीन अधिकारी को शक्ति प्रदान की गई है कि वह साक्ष्य अभिलिखित किए जाने के दौरान पर्याप्त दूरी बनाए रखने और अपने न्यायालय में ऐसे व्यक्तियों के प्रवेश और उन बातों को निर्बाधित करे जिनसे तर्क देने में सहायता मिले ।

18. **परदीप कोडिवीडु क्लेटस** बनाम **स्थानीय विवाह रजिस्ट्रार**

(सामान्य)[1] वाले मामले में केरल उच्च न्यायालय ने केरल विवाह रजिस्ट्रीकरण (सामान्य) नियम, 2008 के अधीन विवाह के रजिस्ट्रीकरण से सम्बंधित मामले पर विचार करते समय यह अभिनिर्धारित किया कि विवाह के पक्षकारों की निजी उपस्थिति को स्थानीय रजिस्ट्रार द्वारा माफ किया जा सकता है । आगे यह पाया गया है कि स्थानीय रजिस्ट्रार वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से पक्षकारों की निजी उपस्थिति अभिप्राप्त करने के लिए सशक्त है । निर्णय के पैरा 9 में यह मत व्यक्त किया गया है :-

> "9. यह सत्य है कि किसी नियम के कारण होने वाली असुविधा कभी भी उसे बातिल करने या नियम को भिन्न रूप से पढ़ने का आधार नहीं हो सकता है । लेकिन, अगर नियम के उद्देश्य को अन्यथा सुनिश्चित किया जा सकता है, तो क्या पक्षकारों को असुविधा में डाल देना चाहिए ? मेरा निष्कर्ष यह है कि यदि नियम के उद्देश्य को अन्यथा सुनिश्चित किया जा सकता है, तो न्यायालयों द्वारा विधि के उपबंध का निर्वचन इस प्रकार किया जा सकता है, जिससे पक्षकारों को कोई असुविधा न हो । मेरे इस मत की पुष्टि 'क्वॉड एस्ट इनकनवेनीएस आट कॉन्ट्रा रेशनम नॉन परमिसम एस्ट इन लेगे' (जो असुविधाजनक है, या कारण के विरुद्ध है, विधि में अनुज्ञात नहीं है) के सिद्धांत द्वारा होती है । मेरे इस मत की पुष्टि फ्रांसिस बेनियम द्वारा रचित कानूनी निर्वचन की व्याख्या पर की गई टिप्पणी में निम्नलिखित रूप से व्यक्त किए गए मत से होती है –
>
> > 'न्यायालय ऐसे अर्थान्वयन की ईप्सा करने से बचता है जो अधिनियम के अध्यधीन व्यक्तियों के लिए न्यायोचित असुविधा का कारण बनता है, क्योंकि संसद् द्वारा इस प्रकार का भिन्न आशय नहीं हो सकता है । तथापि, कभी-कभी ऐसे अर्थान्वयन को लागू करने के अभिभावी कारण होते हैं, उदाहरणार्थ जहां ऐसा प्रतीत होता हो कि संसद् का वास्तव में

[1] (2018) 1 आई. एल. आर. केरल 377.

ऐसा ही आशय था या इसका अक्षरश: अर्थ इतना ही प्रभावशाली है ।'

मैं इस मामले में इस न्यायालय के लिए ऐसा कोई अध्यारोही कारण नहीं पाता हूं कि वह नियम 11 में अंतर्विष्ट उपबंध का निर्वचन ऐसी रीति से करे कि पक्षकारों को उनके विवाह के प्रयोजनार्थ विवाह अधिकारी के समक्ष व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होने के लिए बाध्य होना पड़े ।"

19. **डा. प्रफुल्ल बी. देसाई** (उपरोक्त) वाले मामले में पारित निर्णय का अनुपात यह है कि साक्षी या अभियुक्त के कथन को वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 273 के अधीन उसके प्लीडर/काउंसेल की उपस्थिति में अभिलिखित किया जा सकता है । इस दृष्टिकोण को यह ध्यान में रखते हुए अपनाया गया था कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 284 और 285 के अधीन एक कमीशन नियुक्त करके साक्षी को हाजिरी में छूट दी जा सकती है, कमीशन उस स्थान पर जा सकता है जहां साक्षी या अभियुक्त उपस्थित है और न्याय की पूर्ति के लिए उसका कथन अभिलिखित कर सकता है । इसलिए आपराधिक विधि के अधीन आशयों और प्रयोजनों के लिए न्यायालय के समक्ष साक्ष्य अभिलिखित करने के लिए साक्षी की उपस्थिति आवश्यक नहीं है । उसी प्रकार विवाह रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र जारी करने के प्रयोजन से, जैसाकि **उपासना बाली** (उपरोक्त) वाले मामले में झारखंड उच्च न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया था कि विवाह के पक्षकार वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से रजिस्ट्रीकरण अधिकारी के समक्ष उपस्थित हो सकते हैं ।

20. अपीलार्थी सं. 1 (पति) वर्तमान मामले में विवाह रजिस्ट्रार के समक्ष अपनी पत्नी-अपीलार्थी सं. 2 (जो संयुक्त राज्य अमेरिका में कार्य कर रही है) की उपस्थिति में पूर्ण छूट की ईप्सा नहीं कर रहा है । वह यह ईप्सा कर रहा है कि उसकी पत्नी को वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से पेश होने के लिए अनुज्ञात किया जाए, जिससे विवाह का रजिस्ट्रीकरण किया जा सके । अपीलार्थी सं. 2 (मीशा वर्मा), अपीलार्थी सं. 1 की पत्नी वर्जीनिया यूनिवर्सिटी स्कूल ऑफ मेडिसन में रेजिडेन्ट चिकित्सक

के पद पर कार्यरत थी । अब वह 1, मेडिकल सेंटर ड्राइव, मॉर्गन टाउन, वेस्ट वर्जीनिया-26505, संयुक्त राज्य के जे. डब्ल्यू. रूबी मेमोरियल अस्पताल में कार्य कर रही है । अपीलार्थियों ने तारीख 7 दिसंबर, 2019 को गुरुग्राम (हरियाणा) में अपने-अपने कुटुंब के सदस्यों की उपस्थिति में हिन्दू रीति-रिवाजों के अनुसार विवाह अनुष्ठापित किया । इस मामले में वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से मीशा वर्मा की हाजिरी को सुनिश्चित किया जा सकता है और विवाह रजिस्ट्रार के कार्यालय में पति-अमी रंजन और तीन साक्षियों को विवाह रजिस्ट्रार के कार्यालय में उपस्थित कराया जा सकता है । फिर तथ्यों का सत्यापन करके जैसाकि विशेष विवाह अधिनियम की धारा 15 और 16 में अनुध्यात है, विवाह प्रमाणपत्र जारी किया जा सकता है । जब एक बार विवाह प्रमाणपत्र जारी कर दिया जाता है तब इसे विवाह प्रमाणपत्र पुस्तक में प्रविष्ट करके अधिनियम की धारा 47 के अधीन लोक अभिलेख का भाग बनाया जा सकता है । इससे अधिनियम की धारा 47 का कोई अतिक्रमण नहीं होगा । अपीलार्थी सं. 1 अमी रंजन की पत्नी मीशा वर्मा की उपस्थिति वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से करके संपूर्ण कार्यवाही पूरी की जा सकती है । सभी आशयों और प्रयोजनों के लिए यह एक वैध प्रमाणपत्र होगा ।

21. उपरोक्त चर्चा को दृष्टिगत करते हुए यह अपील मंजूर की जाती है और उप-कलक्टर-सह-विवाह अधिकारी, गुरुग्राम द्वारा जारी तारीख 10 सितंबर, 2020 को जारी आदेश/पत्र [उपाबंध बी-(12)] के साथ तारीख 14 दिसंबर, 2020 का आक्षेपित निर्णय अपास्त किया जाता है । निम्नलिखित निदेश दिए जा रहे हैं :–

(i) चूंकि विवाह अधिकारी ने अपीलार्थी सं. 1 अमी रंजन को समावेदन के प्रथम चरण में वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से आवेदन फाइल करने की अनुज्ञा दी थी इसलिए अब वह विशेष विवाह अधिनियम, 1954 की धारा 16 के अनुसार 30 दिनों के बाद विवाह के रजिस्ट्रीकरण की कार्यवाही में आगे बढ़ सकता है ।

(ii) अपीलार्थी सं. 2 मीशा वर्मा की उपस्थिति वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से सुनिश्चित की जा सकती है और वह 1, मेडिकल सेंटर ड्राइव, मॉर्गन टाउन, वेस्ट वर्जीनिया-26505 संयुक्त

राज्य के जे. डब्ल्यू. रूबी मेमोरियल अस्पताल के समक्ष और उप-आयुक्त-सह-विवाह अधिकारी और जे. डब्ल्यू. रूबी मेमोरियल अस्पताल या 2107 मैसाचुसेट्स एवेन्यू एनडब्ल्यूच्. वाशिंगटन डीसी 2008, संयुक्त राज्य में स्थित भारतीय दूतावास/उच्चायोग पर नियत तारीख और समय पर दोनों के परामर्श के पश्चात् उपस्थित हो सकती है ।

(iii) तीन साक्षियों अर्थात्, (i) विश्व विजय रंजन प्रसाद पुत्र स्वर्गीय दिनेश्वर प्रसाद (अपीलार्थी सं. 1 का पिता), (ii) श्री विभव भूषण पुत्र कुल भूषण (अपीलार्थी सं. 1 का चचेरा भाई) या अनुकल्प में श्री कुमार सम्भाव पुत्र एम. एन. प्रसाद (अपीलार्थी सं. 3 के मामा) और श्री विनय गोपाल पुत्र मदन गोपाल प्रसाद (अपीलार्थी सं. 2 की पत्नी के मामा) विवाह रजिस्ट्रार/विवाह अधिकारी के समक्ष वस्तुत: हाजिर हो सकते हैं । सभी साक्षी अपने पैन कार्ड/राशन कार्ड/पासपोर्ट की प्रतियां, जैसा भी मामला हो, प्रस्तुत कर सकते हैं और विवाह के रजिस्ट्रीकरण की तारीख को अपीलार्थी सं. 1 पति के साथ विवाह अधिकारी के समक्ष हाजिर होंगे । उक्त साक्षी अपीलार्थी के विवाह में अपनी हाजिरी के संबंध में सत्यापन करेंगे । अपीलार्थी सं. 1 विवाह रजिस्ट्रार/विवाह अधिकारी के समक्ष अन्य दस्तावेजी साक्ष्य जैसे फोटोग्राफ, आमंत्रण पत्र आदि प्रस्तुत करेगा ।

(iv) इस बात से संतुष्ट होने पर कि उपरोक्त सभी आवश्यकताओं की पूर्ति हो गई है उप-कलक्टर-सह-विवाह अधिकारी गुरुग्राम/प्रत्यर्थी सं. 2 एक आदेश जारी करेगा तथा आवश्यक प्रविष्टियां करेगा और अपीलार्थी सं. 1 (अमी रंजन) और अपीलार्थी सं. 2 उनकी पत्नी मीशा वर्मा को विहित प्रपत्र पर विवाह प्रमाणपत्र जारी करेगा ।

अपील मंजूर की जाती है ।

अम./अस.

चमन लाल

बनाम

द्रोपदी और अन्य

(2020 की सिविल प्रकीर्ण याचिका सं. 400)

तारीख 21 मई, 2021

न्यायमूर्ति विवेक सिंह ठाकुर

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – आदेश 39, नियम 1 और 2 – अस्थायी व्यादेश/आज्ञापक व्यादेश – प्रतिवादी को वाद भूमि पर निर्माण कार्य करने से रोकना – वादी और प्रतिवादी का संयुक्त स्वामी/सह-स्वामी होना – वादी द्वारा संपूर्ण तथ्य प्रकट न किया जाना – अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री नहीं है जिससे यह प्रकट होता हो कि संयुक्त भूमि पर निर्माण कार्य से संबंधित प्रतिवादी के कृत्य से वादी को सारभूत हानि या क्षति पहुंची है, अत: मात्र इस आधार पर कि पक्षकार संयुक्त स्वामी या सह-स्वामी हैं, व्यादेश मंजूर या खारिज नहीं किया जा सकता ।

इस मामले में के याची (पूर्ववर्ती मामले में वादी) ने प्रत्यर्थी (पूर्ववर्ती मामले में प्रतिवादी) के विरुद्ध स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश की प्रार्थना के साथ वाद फाइल किया था जिसमें प्रतिवादी सं. 1 अर्थात् द्रोपदी को संयुक्त संपत्ति के मूल्यवान भाग पर अतिक्रमण करने और वादी को बेदखल करने और खसरा सं. 1525, 1526 और 1527 से संबंधित वाद भूमि जो मोहल, हाटी और कोठी जगतसुख, तहसील मनाली, जिला कुल्लू, हिमाचल प्रदेश में स्थित है और वादी, प्रतिवादी सं. 1 तथा अन्य भागीदार इसके संयुक्त स्वामी हैं, पर निर्माण कार्य करने से तब तक रोके जाने की प्रार्थना की जब तक कि संपत्ति का विभाजन न हो जाए और साथ ही इसके अनुकल्प में आज्ञापक व्यादेश के लिए यह प्रार्थना भी की गई कि यदि प्रतिवादी सं. 1, वाद के लंबित

रहने के दौरान होटल का निर्माण कार्य करने में सफल हो जाता है तो उस निर्माण को ध्वस्त कराया जाए और उस वाद भूमि को उसकी मूल स्थिति में लाया जाए जिसकी लागत प्रतिवादी सं. 1 को वहन करनी होगी । इसके अतिरिक्त यह भी प्रार्थना की गई है कि प्रतिवादी सं. 2 और 3 को अवैध मौका ततिमा के आधार पर प्रतिवादी सं. 1 को कारण बताओ नोटिस जारी करने से वाद भूमि के विभाजन होने तक रोका जाए । विचारण न्यायालय रोक आदेश मंजूर करने या खारिज करने के लिए अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री और तथ्यों का मूल्यांकन सही परिप्रेक्ष्य में नहीं किया जबकि विद्वान् जिला न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का मूल्यांकन करते हुए विचारण न्यायालय के द्वारा मंजूर किए गए रोक आदेश को अपास्त कर दिया । इस आदेश के व्यथित होकर वादी चमन लाल ने उच्च न्यायालय के समक्ष प्रकीर्ण रिट याचिका फाइल की । याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामले में वादी ने उस संपूर्ण संपत्ति के तथ्य और ब्यौरे प्रकट नहीं किए हैं जिसका स्वामित्व वादी सहित संयुक्त रूप से प्रतिवादी सं. 1 और अन्य भागीदारों के पास है किंतु वादी ने 3 खसरा सं. चुनी हैं जिसके एकमात्र कब्जे के संबंध में प्रतिवादी सं. 1 ने अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री प्रस्तुत की है और केवल नाम के लिए यह कथन किया है कि प्रतिवादी सं. 1 वाद भूमि पर होटल का निर्माण करने के लिए आतुर है ताकि वह उस भूमि के मूल्यवान फ्रंट भाग का अधिभोग कर सके, अभिलेख पर ऐसा प्रकथन या ऐसी कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं की गई है जिससे यह सिद्ध हो सके कि प्रतिवादी सं. 1 द्वारा अधिभोग की गई भूमि फ्रंट साइड पर होने के कारण वादी द्वारा अधिभोग की गई भूमि (जो अन्य खसरा के अन्तर्गत पक्षकारों के संयुक्त स्वामित्व के अधीन आती है) की अपेक्षाकृत अधिक मूल्यवान है । प्रतिवादी सं. 1 द्वारा किए जा रहे निर्माण कार्य से वादी के हित पर किस प्रकार और किस रीति में प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है, वादपत्र से प्रतिबिम्बित नहीं होता है और न ही वादी द्वारा अवलंब लिए गए दस्तावेजों से स्पष्ट होता है । अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री नहीं है

जिससे यह पता चलता हो कि प्रतिवादी सं. 1 के कृत्य से अर्थात् उसके द्वारा किए जा रहे निर्माण कार्य से किसी को कोई हानि या क्षति कारित हुई है या किसी प्रकार का कोई सारभूत नुकसान पहुंचा है । वादी का पक्षकथन बस इतना है कि प्रतिवादी सं. 1 ने वाद भूमि पर निर्माण कार्य किया है वह भी होटल बनाने का और संयुक्त स्वामियों की सम्मति के बिना । संयुक्त स्वामित्व और सह-स्वामियों की सम्मति निश्चित रूप से एक सुसंगत तथ्य है जिस पर सह-स्वामियों द्वारा फाइल किए गए वाद में रोक आदेश मंजूर किए जाने के लिए सुसंगत है किंतु यह कोई सार्वभौमिक सूत्र नहीं है जिसके आधार पर प्रत्येक मामले में रोक आदेश मंजूर किया जा सके और साथ ही संयुक्त भूमि पर वादी द्वारा पहले से किया गया निर्माण कार्य सह-स्वामियों/सह-भागीदारों में से किसी एक या अधिक स्वामी/भागीदारों द्वारा किए गए निर्माण कार्य पर रोक आदेश प्राप्त करने से वादी को निरर्हित करने के लिए नियम नहीं हो सकता किंतु ऐसी स्थिति में वादी (सह-स्वामी) को अभिलेख पर यह साबित करना होगा कि सह-भागीदारों/सह-स्वामियों द्वारा किए गए इस निर्माण कार्य से सारभूत हानि हुई है या क्षति पहुंची है ताकि अंतरिम रोक आदेश मंजूर करने के लिए वादी के पक्ष में सुविधा संतुलन बन सके । वर्तमान मामले में विचारण न्यायालय रोक आदेश मंजूर करने या खारिज करने के लिए अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री और तथ्यों का मूल्यांकन सही परिप्रेक्ष्य में नहीं कर सका है जबकि विद्वान् जिला न्यायालय ने, मेरी राय में, अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का मूल्यांकन ठीक प्रकार किया है । यह स्पष्ट किया जाता है कि इस न्यायालय तथा विद्वान् जिला न्यायाधीश द्वारा व्यक्त किए गए मत का अर्थ वादी द्वारा अंतरिम रोक आदेश के लिए की गई प्रार्थना के न्यायनिर्णयन के प्रयोजनार्थ लगाना चाहिए जिसका इस मामले के गुणागुण से कोई लेना-देना नहीं होगा जिन पर अभी साक्ष्य का मूल्यांकन किए जाने के पश्चात् विचारण न्यायालय द्वारा विधि के अनुसरण में आंकलन किया जाना है और यदि विचारण पूरा होने पर वादी का मामला अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर सारवान् पाया जाता है, तब प्रतिवादी सं. 1 को

वाद भूमि पर वाद के लंबित रहने के दौरान कोई भी साम्य अधिकार नहीं होगा और इस परिस्थिति में विचारण न्यायालय समुचित आदेश पारित करेगा । (पैरा 19, 20 और 21)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2019]	(2019) 1 सी. सी. सी. 793 (हिमाचल प्रदेश) = ए. आई. आर. 2019 हिमाचल प्रदेश 17 : **चंचल कुमार** बनाम **प्रेम प्रकाश और एक अन्य** ;	14
[2018]	एच. एल. जे. 2018 (हिमाचल प्रदेश) 430 : **सरला देवी** बनाम **मदन सिंह और अन्य** ;	14
[2016]	(2016) 1 शिमला (एल. सी.) 207 : **अशोक कपूर** बनाम **मुर्तू देवी** ;	6, 17
[2016]	ए. आई. आर. 2016 (हिमाचल प्रदेश) 85 : **श्रीमती कलावती** बनाम **नेतर सिंह और अन्य** ;	13
[2008]	सी. एम. पी. एम. ओ. सं. 117/2008 : **परमेश्वरी दास** बनाम **इच्छा राम** ।	12

सिविल रिट अधिकारिता : 2020 की सिविल प्रकीर्ण याचिका सं. 400.

निचले न्यायालय के रोक आदेश के विरुद्ध रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री दिबेन्दर घोष और श्री राजू राम राही

प्रत्यर्थी की ओर से उप महाधिवक्ता

आदेश

इस मामले में के याची (पूर्ववर्ती मामले में वादी) ने प्रत्यर्थी (पूर्ववर्ती मामले में प्रतिवादी) के विरुद्ध स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश की प्रार्थना के साथ वाद फाइल किया था जिसमें प्रतिवादी सं. 1 अर्थात् द्रोपदी को संयुक्त संपत्ति के मूल्यवान भाग पर अतिक्रमण करने और

वादी को बेदखल करने और खसरा सं. 1525, 1526 और 1527 से संबंधित वाद भूमि जो मोहल, हाटी और कोठी जगतसुख, तहसील मनाली, जिला कुल्लू, हिमाचल प्रदेश में स्थित है और वादी, प्रतिवादी सं. 1 तथा अन्य भागीदार इसके संयुक्त स्वामी हैं, पर निर्माण कार्य करने से तब तक रोके जाने की प्रार्थना की जब तक कि संपत्ति का विभाजन न हो जाए और साथ ही इसके अनुकल्प में आज्ञापक व्यादेश के लिए यह प्रार्थना भी की गई कि यदि प्रतिवादी सं. 1, वाद के लंबित रहने के दौरान होटल का निर्माण कार्य करने में सफल हो जाता है तो उस निर्माण को ध्वस्त कराया जाए और उस वाद भूमि को उसकी मूल स्थिति में लाया जाए जिसकी लागत प्रतिवादी सं. 1 को वहन करनी होगी । इसके अतिरिक्त यह भी प्रार्थना की गई है कि प्रतिवादी सं. 2 और 3 को अवैध मौका ततिमा के आधार पर प्रतिवादी सं. 1 को कारण बताओ नोटिस जारी करने से वाद भूमि के विभाजन होने तक रोका जाए ।

2. जैसाकि वाद में प्रकथन किया गया है वाद फाइल करने का आधार यह है कि वादी (चमन लाल) और प्रतिवादी सं. 1 (द्रोपदी) के पास ऊपर निर्दिष्ट वाद भूमि का कब्जा है और वे अन्य स्वामियों और भागीदारों के साथ संयुक्त स्वामी हैं और इस भूमि का विभाजन विधिक रूप से भागीदारों और स्वामियों के बीच नहीं हुआ है और प्रतिवादी सं. 1 ने वादी की सम्मति के बिना मूल्यवान भूखंड और वाद भूमि की फ्रंट साइड पर होटल निर्माण कार्य वाद भूमि से बलपूर्वक वादी को कब्जा रहित करते हुए राजस्व प्राधिकारी द्वारा जारी किए गए अवैध मौका ततिमा के आधार पर आरंभ कर दिया है और इस ततिमे में प्रतिवादी सं. 1 को वाद भूमि का एकमात्र कब्जाधारी दर्शाया है किंतु यह सब अभिलेख के प्रतिकूल है ।

3. वादी ने वाद के साथ सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 39, नियम 1 और 2 के अधीन आवेदन भी फाइल किया था जिसमें प्रतिवादी सं. 1 को, वादी को वाद भूमि में उसके हिस्से से कब्जा रहित करते हुए, वाद भूमि पर होटल का अवैध निर्माण करने से और मूल्यवान

भूखंड का अधिभोग करने और उसकी फ्रंट साइड का अधिभोग करने से रोकने हेतु अस्थायी व्यादेश की ईप्सा की और यह भी ईप्सा की गई कि प्रतिवादी सं. 2 और 3 को वाद के अंतिम निपटारे तक अवैध मौका ततिमा के आधार पर कारण बताओ नोटिस जारी करने से रोका जाए ।

4. प्रतिवादी सं. 1 ने संक्षेप में यह प्रतिरक्षा ली कि वादी और प्रतिवादी सं. 1 तथा अन्य हिस्सेदारों का नाम खसरा सं. 1525, 1526 और 1527 में हिस्सेदारों के रूप में उल्लिखित नहीं हैं और खसरा सं. 1499, 1500, 1501, 1504, 1505 तथा 1511 में भी नहीं हैं और इन सभी खसरा संख्याओं से संबंधित भूमि अलग-अलग चकों में विभाजित है जो कुटुंब व्यवस्था के अनुसार प्रत्येक हिस्सेदार/हिस्सेदारों के परिजनों के कब्जे में बहुत पहले से है और प्रतिवादी सं. 1 के पास खसरा सं. 1525, 1526 और 1527 का एकमात्र कब्जा है और वादी ने पहले ही दो-मंजिला लिंटल वाला निर्माण कर लिया था और साथ ही मवेशियों के लिए खसरा सं. 1525, 1526 और 1527 को छोड़कर पूर्वोक्त खसराओं में छप्पर बना लिए थे और केवल वादी ही नहीं अपितु अन्य हिस्सेदारों अर्थात् ऋषि कुमार और टिक्की देवी ने भी लिंटल वाले एक-मंजिला मकान का निर्माण किया है जो अभी अभिकथित संयुक्त भूमि पर निर्माणाधीन है और यह भी कथन किया है कि प्रतिवादी सं. 1 के स्वर्गीय पिता भोला राम के पास भी खसरा सं. 1525 के अन्तर्गत वाद भूमि पर पुराना मकान था और प्रतिवादी सं. 1 ने वहां बगीचा बना रखा था और खसरा सं. 1525, 1526 और 1527 वाली वाद भूमि पर उसके हितपूर्वाधिकारी और प्रतिवादी सं. 1 ने फसल के विक्रय का लिखित करार एक ठेकेदार के साथ वर्ष 2009 से 2013 के लिए निष्पादित किया जिससे वाद भूमि पर प्रतिवादी सं. 1 का एकमात्र कब्जा उपदर्शित होता है ।

5. प्रतिवादी सं. 1 का यह भी पक्षकथन है कि खसरा सं. 1525 में स्थित पुराने मकान के विध्वंस के पश्चात् उसने मई, 2018 में अपने हिस्से में आने वाली भूमि में टिन की चादर की छत डालकर एक-मंजिला

आवासीय मकान बनाया जो वादी तथा अन्य हिस्सेदारों की जानकारी में लाया गया और इसके पश्चात् वाद भूमि पर उसने नवंबर, 2018 में होटल का निर्माण आरंभ कर दिया और वाद फाइल करने के पूर्व ही उसने लिंटल डालकर होटल की एक मंजिल का निर्माण टाउन एंड कंट्री प्लानिंग डिपार्टमेंट (टी.सी.पी.) से आवश्यक अनुमोदन और ग्राम पंचायत से अनापत्ति प्रमाणपत्र तथा राजस्व प्राधिकारियों से मौका ततिमा प्राप्त करने के पश्चात् पूर्ण कर लिया और इसकी जानकारी वादी सहित अन्य भागीदारों को भी दी गई । प्रतिवादी सं. 1 ने अभिलेख पर टी.सी.पी. विभाग से प्राप्त पत्र, जमाबंदी की प्रतिलिपि, अनुमोदित निर्माण नक्शा, वादी तथा प्रतिवादी के निर्माण किए गए भवनों के फोटो, प्रतिवादी के पुराने मकान के बिजली के बिल और ऋषि कुमार तथा टिक्की देवी के मकानों के फोटो और ग्राम पंचायत, जगतसुख द्वारा जारी अनापत्ति प्रमाणपत्र और राजस्व प्राधिकारी द्वारा जारी मौका ततिमा जैसे सभी दस्तावेज अभिलेख पर प्रस्तुत किए । प्रतिवादी सं. 1 ने तारीख 14 जनवरी, 2009 और 23 मार्च, 2017 के करार अभिलेख पर प्रस्तुत किए हैं जो खसरा सं. 1525, 1526 और 1527 में स्थित बगीचे की फसल के विक्रय के संबंध में क्रमश: मोहन लाल और निशांत ठाकुर के साथ निष्पादित किए गए थे ।

6. वादी के विद्वान् काउंसेल श्री मानसिंह ने **अशोक कपूर** बनाम **मुर्तू देवी**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की समन्वित न्यायपीठ के निर्णय का अवलंब लेते हुए यह दलील दी है कि प्रतिवादी सं. 1 वाद भूमि में से वादी और अन्य भागीदारों को बाहर किए जाने का दावा इसके बावजूद कर रहा है कि उसने यह स्वीकार किया है कि द्रोपदी का नाम राजस्व अभिलेख में संपत्ति के सह-स्वामी के रूप में दर्ज है और प्रतिवादी सं. 1 का यह दावा अन्य सह-स्वामियों के अधिकारों के असंगत है जो उनके विधिक अधिकारों से इनकार किए जाने की कोटि में आता है अत: प्रतिवादी सं. 1 वाद भूमि पर वादी और अन्य सह-स्वामियों की

---

[1] (2016) 1 शिमला एल. सी. 207.

सम्मति के बिना निर्माण करने का दावा नहीं कर सकता जो कि अन्य सह-स्वामियों के लिए अहितकर है । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि प्रतिवादी सं. 1 ने अपने मकान का निर्माण नहीं किया है बल्कि उसने होटल बनाया है, अत: यह अभिवाक् कि वादी और अन्य सह-स्वामियों ने वाद भूमि पर अपने मकानों का निर्माण पहले ही कर लिया था, प्रतिवादी सं. 1 द्वारा नहीं किया जा सकता क्योंकि वह अपने मकान के निर्माण के अतिरिक्त वाद भूमि पर होटल का निर्माण भी करवा रही है जबकि अभी वाद भूमि का विभाजन किया जाना शेष है ।

7. प्रतिवादी सं. 1 के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि इस तथ्य के बावजूद कि वादी और प्रतिवादी सं. 1 खसरा सं. 1499 से 1527 तक कई भूखंडों में संयुक्त स्वामी हैं जैसाकि ऊपर निर्दिष्ट है, फिर भी वाद केवल खसरा सं. 1525, 1526 और 1527 से संबंधित भूमि को लेकर ही बिना यह प्रकट किए फाइल किया गया है कि वादी और प्रतिवादी सं. 1 इन खसराओं में ही संयुक्त स्वामी नहीं हैं जिसे वाद भूमि के रूप में दर्शाया गया है अपितु अन्य खसराओं में भी संयुक्त स्वामी हैं जिनमें वादी सहित अन्य सह-स्वामियों और भागीदारों ने अपने-अपने मकानों का निर्माण पहले ही कर लिया है ।

8. प्रतिवादी सं. 1 का यह भी पक्षकथन है कि उसने वाद भूमि के विभाजन की कार्यवाही के लिए पहले ही वाद फाइल कर दिया था जिसमें आरंभ के प्रक्रम पर वादी की ओर से कोई भी पेश नहीं हुआ था और उसमें एकपक्षीय कार्यवाही भी की गई थी और इसके पश्चात् उसने उपखंड कलक्टर के समक्ष अपील फाइल की जो खारिज हो गई और इस अपील के खारिज होने के आदेश को उपखंड कमिश्नर के समक्ष वादी द्वारा चुनौती दी गई है जिसमें वादी के पक्ष में कोई भी रोक आदेश पारित नहीं किया गया और विभाजन की कार्यवाही संक्षिप्त किए जाने के बजाय वादी इस मामले को अनावश्यक विलंबित करने का प्रयास कर रहा है ताकि प्रतिवादी सं. 1 का विधिक अधिकार निष्फल हो जाए ।

9. प्रतिवादी सं. 1 के विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि

वह घटनास्थल पर कोई भी नया निर्माण कार्य नहीं कर रहा है बल्कि उसने अपने पिता से विरासत में लिए पुराने मकान को तोड़कर अपना नया मकान बनवाया है और होटल का निर्माण खाली भूखंड पर किया जा रहा है जो वाद भूमि में मकान के निर्माण के पश्चात् बचा है और संपूर्ण वाद भूमि खसरा सं. 1525, 1526 और 1527 के अन्तर्गत आती है जिस पर उसका एकमात्र कब्जा है जबकि वादी और अन्य भागीदार/सह-स्वामियों के पास अन्य खसराओं का एकमात्र कब्जा है जो राजस्व अभिलेख में संयुक्त रूप से दर्ज हैं किंतु वादी ने न्यायालय से महत्वपूर्ण तथ्य छिपाए हैं और न्यायालय में सद्भावपूर्ण आवेदन नहीं किया है और संपूर्ण तथ्यों का उल्लेख इसीलिए नहीं किया है ताकि प्रतिवादी सं. 1 द्वारा किए गए निर्माण कार्य को अवैध और अप्राधिकृत गलत दिखाया जा सके और उसे अनावश्यक हानि पहुंच सके ।

10. प्रतिवादी सं. 1 के विद्वान् काउंसेल ने अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए फोटो निर्दिष्ट किए हैं जिनमें प्रतिवादी सं. 1 का मकान और उस पर उसका कब्जा और स्वामित्व दर्शाया गया है जिसके चारों ओर चहारदीवारी बनी हुई है और इसके पश्चात्वर्ती फोटो भी प्रस्तुत किए गए हैं जिनमें चहारदीवारी के भीतर पुराना मकान ढाहकर दिखाया गया है । विद्वान् काउंसेल ने वे फोटो निर्दिष्ट किए हैं जिनमें प्रत्यर्थी सं. 1 का मकान, सह-स्वामी ऋषि कुमार और वादी के मकान दिखाए गए हैं ।

11. प्रतिवादी सं. 1 के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि वर्ष 2018 में निर्माण कार्य आरंभ हुआ था और प्रथम तल पर लिंटल का निर्माण वाद फाइल किए जाने के पूर्व ही हो गया था और जब द्वितीय तल पर निर्माण कार्य चल रहा था, तब वादी ने वाद फाइल किया किंतु संपूर्ण तथ्य प्रकट नहीं किए और विचारण न्यायालय से अंतरिम रोक आदेश प्राप्त कर लिया जिसे प्रतिवादी सं. 1 की ओर से फाइल की गई अपील में विद्वान् जिला न्यायाधीश द्वारा ठीक ही अपास्त किया गया है ।

12. प्रतिवादी सं. 1 के विद्वान् काउंसेल ने **परमेश्वरी दास** बनाम

इच्छा राम[1] वाले मामले में तारीख 23 मई, 2008 को पारित निर्णय में निम्न अभिनिर्धारित किया :–

> "आम तौर पर यदि सह-भागीदारों का संयुक्त कब्जा अभिलिखित किया जाता है तब यह न्यायालय रोक आदेश प्रदान करता किंतु वर्तमान मामले के तथ्यों से यह दर्शित होता है कि राजस्व अभिलेख में भूमि संयुक्त रूप से दर्शायी गई है और लगभग सभी भागीदारों ने वाद भूमि के विशिष्ट भाग में अपना-अपना निर्माण कार्य किया है । अब वादी खाली स्थान को इस आधार पर संरक्षित रखना चाहता है कि उसने वहां पर बगीचा बना लिया है । ऐसा करने की अनुमति नहीं दी जा सकती । वादी को निर्माण कार्य आरंभ करने के पूर्व संपूर्ण भूमि का विभाजन कराना चाहिए था । जब उसने एक बार विभाजन कराए जाने के बिना निर्माण कार्य आरंभ कर दिया है तब वह यह दावा नहीं कर सकता कि अन्य सह-भागीदारों को भूखंड के खाली स्थान पर निर्माण कार्य करने से रोका जाए ।

13. प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से **श्रीमती कलावती** बनाम **नेतर सिंह और अन्य**[2] वाले मामले का अवलंब लिया गया है जिसमें इस न्यायालय ने निम्न मत व्यक्त किया है :–

> "10. विनिश्चय से यह स्पष्ट होता है कि मात्र यह तथ्य कि पक्षकार सह-स्वामी और संयुक्त स्वामी आदि हैं, व्यादेश मंजूर किए जाने या रद्द किए जाने का एकमात्र मापदंड नहीं हो सकता, इसलिए पक्षकारों के आचरण की ऐसे मामलों में महत्वपूर्ण भूमिका है, वादी का आचरण आरोप से मुक्त होना चाहिए ताकि न्यायालय यह निष्कर्ष निकाल सके कि वादी ने न्यायालय में सद्भावपूर्ण आवेदन किया है । किंतु यहां ऐसा मामला है जिसमें याची ने स्वयं को प्रत्यर्थी के साथ संयुक्त स्वामी होने का दावा किया है जो पहले ही

---

[1] सी. एम. पी. ओ. सं. 117/2008.

[2] ए. आई. आर. 2016 हिमाचल प्रदेश 85.

वाद भूमि पर निर्माण कार्य कर चुकी है और अब इस तथ्य को प्रकट किए बिना प्रत्यर्थियों के विरुद्ध व्यादेश दिए जाने की ईप्सा कर रही है ।

11. व्यादेश न्यायसंगत अनुतोष होता है, इसलिए व्यादेश की ईप्सा करने वाले व्यक्ति को न्यायालय में सद्भावपूर्ण आवेदन करना चाहिए । ऐसे मामले में प्रचलित सिद्धांत "जो न्याय चाहता है उसे न्याय भी करना चाहिए" लागू होगा । चूंकि याची ने वाद भूमि के एक भाग में अपने मकान का निर्माण स्वीकृत रूप से किया है, इसलिए उसे रोका जाता है इसलिए प्रत्यर्थियों द्वारा किए गए निर्माण कार्य का विरोध करने या उस पर कोई प्रश्न करने का अधिकार समाप्त हो जाता है । यह तथ्य कि याची ने न्यायालय में सद्भावपूर्ण आवेदन नहीं किया है, स्वयं में ऐसा पर्याप्त आधार है जिसके कारण व्यादेश का अनुतोष प्रदान नहीं किया जा सकता ।"

14. **सरला देवी** बनाम **मदन सिंह और अन्य**[1] और **चंचल कुमार** बनाम **प्रेम प्रकाश और एक अन्य**[2] वाले मामलों का अवलंब लिया गया है जिनमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जहां वादी ने स्वयं संयुक्त भूमि के एक हिस्से में मकान का निर्माण किया है वहां वह वादी, प्रतिवादी द्वारा उस भूमि के अन्य किसी हिस्से में निर्माण कार्य किए जाने पर आपत्ति करने का हकदार नहीं होता है ।

15. यद्यपि वादी और सह-स्वामियों द्वारा अन्य खसरा वाली भूमि (जिसका स्वामित्व वादी, प्रतिवादी सं. 1 और एक अन्य सह-स्वामियों के पास है) में किए गए निर्माण कार्य पर विवाद नहीं है, फिर भी यह दलील दी गई है कि वर्तमान मामले के तथ्य उस मामले के तथ्यों से पूर्णतया भिन्न हैं जो प्रतिवादी सं. 1 की ओर से निर्दिष्ट किया गया है क्योंकि वादी लंबे समय से वाद भूमि पर रहता है जबकि प्रतिवादी सं. 1 उस ग्राम की स्थायी निवासी नहीं है किंतु उसने अपने पिता की संपत्ति

---

[1] एच. एल. जे. 2018 (हिमाचल प्रदेश) 430.

[2] (2019) 1 सी. सी. सी. (हिमाचल प्रदेश) 793 = ए. आई. आर. 2019 हिमाचल प्रदेश 17.

विरासत में प्राप्त की है और वह आवासीय मकान का निर्माण नहीं कर रही है बल्कि अन्य सह-स्वामियों की सम्मति से संयुक्त भूमि पर होटल का निर्माण कर रही है यद्यपि उसने यह निर्माण कार्य अपने पुराने मकान को तोड़कर किया है किंतु उसने भूमि का कुछ रिक्त भाग पर भी निर्माण कार्य कर लिया है जो पुराने मकान के क्षेत्रफल से अधिक है, अत: सह-स्वामियों की सम्मति के बिना कराया गया ऐसा निर्माण कार्य अनुज्ञेय नहीं है ।

16. वादी की ओर से यह दलील दी गई है कि प्रतिवादी सं. 1 द्वारा फाइल की गई विभाजन कार्यवाही विवादित नहीं है किंतु यह कार्यवाही उस वाद के फाइल किए जाने के पश्चात् फाइल की गई है जिसमें वादी ने एकपक्षीय कार्यवाही अनुचित रूप से कराई है, अत: उसने सहायक कलक्टर द्वारा अपनाए गए विभाजन के तरीके को चुनौती दी है और इसके अतिरिक्त किसी भी स्थिति में विभाजन की कार्यवाही के फाइल किए जाने से यह भी पता चलता है कि वाद भूमि का विभाजन अभी तक नहीं किया गया है ।

17. वादी द्वारा अवलंब लिए गए **अशोक कपूर** (उपरोक्त) के मामले में न्यायालय ने कई निर्णयों पर विचार करने के पश्चात् कतिपय सिद्धांत संक्षिप्त किए हैं जो इस मामले में सुसंगत हैं । ये सिद्धांत निम्न प्रकार हैं :–

"46...

(i) एक सह-स्वामी, दूसरे सह-स्वामी को संयुक्त संपत्ति में अपने अधिकार से अधिक प्राप्त करने से पूरी तरह रोकने के लिए व्यादेश का हकदार मात्र इस आधार पर नहीं हो सकता कि वह सह-स्वामी है और वह तब हकदार हो सकता है जब संपत्ति पर कब्जा रखने वाले सह-स्वामी का कृत्य, दूसरे सह-स्वामी (जिसके पास भूमि का कब्जा नहीं है) के हित के प्रतिकूल हो ।

(ii) संयुक्त संपत्ति में निर्माण कार्य करने या उसमें संशोधन

करना, अन्य सह-स्वामी को बेदखल करने की कोटि में नहीं आता है ।

(iii) यदि कब्जाधारी सह-स्वामी के कृत्य से संपत्ति का मूल्य या उसकी उपयोगिता दुष्प्रभावित होती है, तब कब्जाधारी सह-स्वामी निश्चित रूप से संपत्ति के मूल्य और उपयोगिता में होने वाली कमी को रोकने के लिए व्यादेश की ईप्सा कर सकता है ।

(iv) यदि कब्जाधारी सह-स्वामी का कृत्य अन्य सह-स्वामियों के हित में घातक है तब वह सह-स्वामी (जिनके पास भूमि का कब्जा नहीं है) ऐसे कृत्य को रोकने के लिए व्यादेश की ईप्सा कर सकता है ।

(v) व्यादेश जारी किए जाने के पूर्व, वादी को यह सिद्ध करना चाहिए कि जिस कृत्य की वह शिकायत कर रहा है उस कृत्य से उसकी स्थिति या उसकी सुविधाएं दुष्प्रभावित हो रही हैं या संयुक्त संपत्ति का स्वतंत्र रूप से प्रयोग किया जाना बाधित हो रहा है ।

(vi) सुविधा के संतुलन के आधार पर सुसंगत परिस्थितियों में न्यायालय का यह विवेकाधिकार है कि वह यह सुनिश्चित करे कि अनुतोष कितना प्रदान किया जाए और न्यायालय को न्याय, समता और निष्पक्ष अंतश्चेतना को ध्यान में रखते हुए अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करना चाहिए ।

47...

(i) प्रथमदृष्ट्या मामला, जैसाकि अभिवाक् किया गया है, ऐसा होना चाहिए कि अस्थायी व्यादेश जारी किए जाने से वादी के अधिकारों की संरक्षा हो ।

(ii) जब वादी के अधिकारों की संरक्षा से संबंधित आवश्यकता की तुलना, प्रतिवादी के अधिकारों की संरक्षा से संबंधित आवश्यकता से की जाती है या प्रतिवादी के अधिकारों के अतिक्रमण से की जाती है तब सुविधा का संतुलन वादी के पक्ष में होता है ; और

(iii) यदि अस्थायी व्यादेश प्रदान न किया जाए तो वादी को अपरिहार्य क्षति पहुंचने की स्पष्ट संभावना होनी चाहिए । इसके अतिरिक्त, अस्थायी व्यादेश एक साम्यापूर्ण अनुतोष है इसलिए इसे प्रदान किए जाने का विवेकाधिकार का प्रयोग केवल तब किया जाएगा जब वादी का आचरण आरोप से मुक्त हो और उसने पूरी सत्यनिष्ठा से न्यायालय में आवेदन किया हो ।"

18. मात्र यह तथ्य कि पक्षकार सह-स्वामी और संयुक्त स्वामी आदि हैं, व्यादेश मंजूर किए जाने या खारिज किए जाने के लिए एकमात्र सिद्धांत नहीं हैं । यह कई सिद्धांतों में से एक सिद्धांत हो सकता है किंतु अन्य तथ्यों को ध्यान में रखते हुए इस पर विचार किया जाना चाहिए और प्रत्येक मामले को उसके अपने तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर उन मापदंडों को लागू करते हुए विनिश्चित किया जाना चाहिए जो अस्थायी व्यादेश मंजूर किए जाने के लिए आवश्यक होते हैं ।

19. वर्तमान मामले में वादी ने उस संपूर्ण संपत्ति के तथ्य और ब्यौरे प्रकट नहीं किए हैं जिसका स्वामित्व वादी सहित संयुक्त रूप से प्रतिवादी सं. 1 और अन्य भागीदारों के पास है किंतु वादी ने 3 खसरा संख्या चुनी हैं जिसके एकमात्र कब्जे के संबंध में प्रतिवादी सं. 1 ने अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री प्रस्तुत की है और केवल नाम के लिए यह कथन किया है कि प्रतिवादी सं. 1 वाद भूमि पर होटल का निर्माण करने के लिए आतुर है ताकि वह उस भूमि के मूल्यवान फ्रंट भाग का अधिभोग कर सके, अभिलेख पर ऐसा प्रकथन या ऐसी कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं की गई है जिससे यह सिद्ध हो सके कि प्रतिवादी सं. 1 द्वारा अधिभोग की गई भूमि फ्रंट साइड पर होने के कारण वादी द्वारा अधिभोग की गई भूमि (जो अन्य खसरा के अन्तर्गत पक्षकारों के संयुक्त स्वामित्व के अधीन आती है) की अपेक्षाकृत अधिक मूल्यवान है । प्रतिवादी सं. 1 द्वारा किए जा रहे निर्माण कार्य से वादी के हित पर किस प्रकार और किस रीति में प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है, वादपत्र से प्रतिबिम्बित नहीं होता है और न ही वादी द्वारा अवलंब लिए गए

दस्तावेजों से स्पष्ट होता है । अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री नहीं है जिससे यह पता चलता हो कि प्रतिवादी सं. 1 के कृत्य से अर्थात् उसके द्वारा किए जा रहे निर्माण कार्य से किसी को कोई हानि या क्षति कारित हुई है या किसी प्रकार का कोई सारभूत नुकसान पहुंचा है । वादी का पक्षकथन बस इतना है कि प्रतिवादी सं. 1 ने वाद भूमि पर निर्माण कार्य किया है वह भी होटल बनाने का और संयुक्त स्वामियों की सम्मति के बिना । संयुक्त स्वामित्व और सह-स्वामियों की सम्मति निश्चित रूप से एक सुसंगत तथ्य है जिस पर सह-स्वामियों द्वारा फाइल किए गए वाद में रोक आदेश मंजूर किए जाने के लिए सुसंगत है किंतु यह कोई सार्वभौमिक सूत्र नहीं है जिसके आधार पर प्रत्येक मामले में रोक आदेश मंजूर किया जा सके और साथ ही संयुक्त भूमि पर वादी द्वारा पहले से किया गया निर्माण कार्य सह-स्वामियों/सह-भागीदारों में से किसी एक या अधिक स्वामी/भागीदारों द्वारा किए गए निर्माण कार्य पर रोक आदेश प्राप्त करने से वादी को निरर्हित करने के लिए नियम नहीं हो सकता किंतु ऐसी स्थिति में वादी (सह-स्वामी) को अभिलेख पर यह साबित करना होगा कि सह-भागीदारों/सह-स्वामियों द्वारा किए गए इस निर्माण कार्य से सारभूत हानि हुई है या क्षति पहुंची है ताकि अंतरिम रोक आदेश मंजूर करने के लिए वादी के पक्ष में सुविधा संतुलन बन सके ।

20. वर्तमान मामले में विचारण न्यायालय रोक आदेश मंजूर करने या खारिज करने के लिए अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री और तथ्यों का मूल्यांकन सही परिप्रेक्ष्य में नहीं कर सका है जबकि विद्वान् जिला न्यायालय ने, मेरी राय में, अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का मूल्यांकन ठीक प्रकार किया है ।

21. यह स्पष्ट किया जाता है कि इस न्यायालय तथा विद्वान् जिला न्यायाधीश द्वारा व्यक्त किए गए मत का अर्थ वादी द्वारा अंतरिम रोक आदेश के लिए की गई प्रार्थना के न्यायनिर्णयन के प्रयोजनार्थ लगाना चाहिए जिसका इस मामले के गुणागुण से कोई लेना-

देना नहीं होगा जिन पर अभी साक्ष्य का मूल्यांकन किए जाने के पश्चात् विचारण न्यायालय द्‌वारा विधि के अनुसरण में आंकलन किया जाना है और यदि विचारण पूरा होने पर वादी का मामला अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर सारवान् पाया जाता है, तब प्रतिवादी सं. 1 को वाद भूमि पर वाद के लंबित रहने के दौरान कोई भी साम्य अधिकार नहीं होगा और इस परिस्थिति में विचारण न्यायालय समुचित आदेश पारित करेगा ।

उपरोक्त चर्चा को दृष्टिगत करते हुए और पक्षकारों द्‌वारा अवलंब लिए गए निर्णयज विधि पर विचार करने पर वर्तमान याचिका सारहीन होने के कारण खारिज की जाती है । अंतरिम रोक आदेश अपास्त किया जाता है । सभी लंबित आवेदन, यदि कोई हैं, खारिज किए जाते हैं ।

याचिका खारिज की गई ।

अस.

<u>संसद् के अधिनियम</u>

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986

(1986 का अधिनियम संख्यांक 29)

[23 मई, 1986]

पर्यावरण के संरक्षण और सुधार का और उनसे संबंधित विषयों का उपबंध करने के लिए अधिनियम

संयुक्त राष्ट्र के मानवीय पर्यावरण सम्मेलन में, जो जून, 1972 में स्टाकहोम में हुआ था और जिसमें भारत ने भाग लिया था, यह विनिश्चय किया गया था कि मानवीय पर्यावरण के संरक्षण और सुधार के लिए समुचित कदम उठाए जाएं ;

यह आवश्यक समझा गया है कि पूर्वोक्त निर्णयों को, जहां तक उनका संबंध पर्यावरण संरक्षण और सुधार से तथा मानवों, अन्य जीवित प्राणियों, पादपों और संपत्ति को होने वाले परिसंकट के निवारण से है, लागू किया जाए ;

भारत गणराज्य के सैंतीसवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :-

अध्याय 1

प्रारंभिक

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ - (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 है ।

(2) इसका विस्तार सम्पूर्ण भारत पर है ।

(3) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा, जो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे और इस अधिनियम के भिन्न-भिन्न उपबंधों के लिए और भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के लिए भिन्न-भिन्न तारीखें नियत की जा सकेंगी ।

2. परिभाषाएं – इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "पर्यावरण" के अंतर्गत जल, वायु और भूमि हैं और वह अंतर-संबंध है जो जल, वायु और भूमि तथा मानवों, अन्य जीवित प्राणियों, पादपों और सूक्ष्मजीव और संपत्ति के बीच विद्‌यमान है ;

(ख) "पर्यावरण प्रदूषक" से ऐसा ठोस, द्रव या गैसीय पदार्थ अभिप्रेत है जो ऐसी सांद्रता में विद्‌यमान है जो पर्यावरण के लिए क्षतिकर हो सकता है या जिसका क्षतिकर होना संभाव्य है ;

(ग) "पर्यावरण प्रदूषण" से पर्यावरण में पर्यावरण प्रदूषकों का विद्‌यमान होना अभिप्रेत है ;

(घ) किसी पदार्थ के संबंध में, "हथालना" से ऐसे पदार्थ का विनिर्माण, प्रसंस्करण, अभिक्रियान्वयन, पैकेज, भंडारकरण, परिवहन, उपयोग, संग्रहण, विनाश, संपरिवर्तन, विक्रय के लिए प्रस्थापना, अंतरण या वैसी ही संक्रिया अभिप्रेत है ;

(ङ) "परिसंकटमय पदार्थ" से ऐसा पदार्थ या निर्मिति अभिप्रेत है जो अपने रासायनिक या भौतिक-रासायनिक गुणों के या हथालने के कारण मानवों, अन्य जीवित प्राणियों, पादपों, सूक्ष्मजीव, संपत्ति या पर्यावरण को अपहानि कारित कर सकती है ;

(च) किसी कारखाने या परिसर के संबंध में, "अधिष्ठाता" से कोई ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जिसका कारखाने या परिसर के कामकाज पर नियंत्रण है और किसी पदार्थ के संबंध में ऐसा व्यक्ति इसके अंतर्गत है जिसके कब्जे में वह पदार्थ भी है ;

(छ) "विहित" से इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्‌वारा विहित अभिप्रेत है ।

अध्याय 2

केन्द्रीय सरकार की साधारण शक्तियां

3. केन्द्रीय सरकार की पर्यावरण के संरक्षण और सुधार के लिए उपाय करने की शक्ति – (1) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते

हुए, केन्द्रीय सरकार को ऐसे सभी उपाय करने की शक्ति होगी जो वह पर्यावरण के संरक्षण और उसकी क्वालिटी में सुधार करने तथा पर्यावरण प्रदूषण के निवारण, नियंत्रण और उपशमन के लिए आवश्यक समझे ।

(2) विशिष्टतया और उपधारा (1) के उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे उपायों के अंतर्गत निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के संबंध में उपाय हो सकेंगे, अर्थात् :–

(i) राज्य सरकारों, अधिकारियों और अन्य प्राधिकरणों की, –

(क) इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियमों के अधीन ; या

(ख) इस अधिनियम के उद्देश्यों से संबंधित तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन,

कार्रवाइयों का समन्वय ;

(ii) पर्यावरण प्रदूषण के निवारण, नियंत्रण और उपशमन के लिए राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम की योजना बनाना और उसको निष्पादित करना ;

(iii) पर्यावरण के विभिन्न आयामों के संबंध में उसकी क्वालिटी के लिए मानक अधिकथित करना ;

(iv) विभिन्न स्रोतों से पर्यावरण प्रदूषकों के उत्सर्जन या निस्सारण के मानक अधिकथित करना :

परन्तु ऐसे स्रोतों से पर्यावरण प्रदूषकों के उत्सर्जन या निस्सारण की क्वालिटी या सम्मिश्रण को ध्यान में रखते हुए, भिन्न-भिन्न स्रोतों से उत्सर्जन या निस्सारण के लिए इस खंड के अधीन भिन्न-भिन्न मानक अधिकथित किए जा सकेंगे ;

(v) उन क्षेत्रों का निर्बन्धन जिनमें कोई उद्‌योग संक्रियाएं या प्रसंस्करण या किसी वर्ग के उद्‌योग, संक्रियाएं या प्रसंस्करण नहीं चलाए जाएंगे या कुछ रक्षोपायों के अधीन रहते हुए चलाए जाएंगे ;

(vi) ऐसी दुर्घटनाओं के निवारण के लिए प्रक्रिया और रक्षोपाय अधिकथित करना जिनसे पर्यावरण प्रदूषण हो सकता है और ऐसी दुर्घटनाओं के लिए उपचारी उपाय अधिकथित करना ;

(vii) परिसंकटमय पदार्थों को हथालने के लिए प्रक्रिया और रक्षोपाय अधिकथित करना ;

(viii) ऐसी विनिर्माण प्रक्रियाओं, सामग्री और पदार्थों की परीक्षा करना जिनसे पर्यावरण प्रदूषण होने की संभावना है ;

(ix) पर्यावरण प्रदूषण की समस्याओं के संबंध में अन्वेषण और अनुसंधान करना और प्रायोजित करना ;

(x) किसी परिसर, संयंत्र, उपस्कर, मशीनरी, विनिर्माण या अन्य प्रक्रिया सामग्री या पदार्थों का निरीक्षण करना और ऐसे प्राधिकरणों, अधिकारियों या व्यक्तियों को, आदेश द्वारा, ऐसे निदेश देना जो वह पर्यावरण प्रदूषण के निवारण, नियंत्रण और उपशमन के लिए कार्यवाही करने के लिए आवश्यक समझे ;

(xi) ऐसे कृत्यों को कार्यान्वित करने के लिए पर्यावरण प्रयोगशालाओं और संस्थाओं की स्थापना करना या उन्हें मान्यता देना, जो इस अधिनियम के अधीन ऐसी पर्यावरण प्रयोगशालाओं और संस्थाओं को सौंपे जाएं ;

(xii) पर्यावरण प्रदूषण से संबंधित विषयों की बाबत जानकारी एकत्र करना और उसका प्रसार करना ;

(xiii) पर्यावरण प्रदूषण के निवारण, नियंत्रण और उपशमन से संबंधित निर्देशिकाएं, संहिताएं या पथप्रदर्शिकाएं तैयार करना ;

(xiv) ऐसे अन्य विषय जो केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के उपबंधों का प्रभावपूर्ण कार्यान्वयन सुनिश्चित करने के प्रयोजन के लिए आवश्यक या समीचीन समझे ।

(3) यदि केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए ऐसा करना आवश्यक या समीचीन समझती है तो वह, राजपत्र में प्रकाशित

आदेश द्वारा, इस अधिनियम के अधीन केन्द्रीय सरकार को ऐसी शक्तियों और कृत्यों के (जिनके अंतर्गत धारा 5 के अधीन निदेश देने की शक्ति भी है) प्रयोग और निर्वहन के प्रयोजनों के लिए और उपधारा (2) में निर्दिष्ट ऐसे विषयों की बाबत उपाय करने के लिए जो आदेश में उल्लिखित किए जाएं, प्राधिकरण या प्राधिकरणों का ऐसे नाम या नामों से गठन कर सकेगी जो आदेश में विनिर्दिष्ट किए जाएं और केन्द्रीय सरकार के अधीक्षण और नियंत्रण तथा ऐसे आदेश के उपबंधों के अधीन रहते हुए, ऐसा प्राधिकरण या ऐसे प्राधिकरण ऐसी शक्तियों का प्रयोग या ऐसे कृत्यों का निर्वहन कर सकेंगे या ऐसे आदेश में इस प्रकार उल्लिखित उपाय ऐसे कर सकेंगे मानों ऐसा प्राधिकरण या ऐसे प्राधिकरण उन शक्तियों का प्रयोग या उन कृत्यों का निर्वहन करने या ऐसे उपाय करने के लिए इस अधिनियम द्वारा सशक्त किए गए हों ।

4. अधिकारियों की नियुक्ति तथा उनकी शक्तियां और कृत्य – (1) धारा 3 की उपधारा (3) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए, ऐसे पदाभिधानों सहित ऐसे अधिकारियों की नियुक्ति कर सकेगी और उन्हें इस अधिनियम के अधीन ऐसी शक्तियां और कृत्य सौंप सकेगी जो वह ठीक समझे ।

(2) उपधारा (1) के अधीन नियुक्त अधिकारी, केन्द्रीय सरकार के या यदि उस सरकार द्वारा इस प्रकार निदेश दिया जाए तो, धारा 3 की उपधारा (3) के अधीन गठित प्राधिकरण या प्राधिकरणों, यदि कोई हों, के अथवा किसी अन्य प्राधिकरण या अधिकारी के भी साधारण नियंत्रण और निदेशन के अधीन होंगे ।

5. निदेश देने की शक्ति – केन्द्रीय सरकार, किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, किन्तु इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, इस अधिनियम के अधीन अपनी शक्तियों के प्रयोग और अपने कृत्यों के निर्वहन में किसी व्यक्ति, अधिकारी या प्राधिकरण को निदेश दे सकेगी और ऐसा व्यक्ति, अधिकारी या प्राधिकरण ऐसे निदेशों का अनुपालन करने के लिए आबद्ध होगा ।

स्पष्टीकरण – शंकाओं को दूर करने के लिए यह घोषित किया जाता है कि इस धारा के अधीन निदेश देने की शक्ति के अंतर्गत, –

(क) किसी उद्योग, संक्रिया या प्रक्रिया को बन्द करने, उसका प्रतिषेध या विनियमन करने का निदेश देने की शक्ति है ; या

(ख) विद्युत या जल या किसी अन्य सेवा के प्रदाय को रोकने या विनियमन करने का निदेश देने की शक्ति है ।

[1][**5क. राष्ट्रीय हरित अधिकरण को अपील** – कोई व्यक्ति जो, राष्ट्रीय हरित अधिकरण अधिनियम, 2010 (2010 का 19) के प्रारंभ होने पर या उसके पश्चात् धारा 5 के अधीन जारी किन्हीं निदेशों से व्यथित है, वह राष्ट्रीय हरित अधिकरण अधिनियम, 2010 की धारा 3 के अधीन स्थापित राष्ट्रीय हरित अधिकरण को, उस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार, अपील फाइल कर सकेगा ।]

6. पर्यावरण प्रदूषण का विनियमन करने के लिए नियम – (1) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, धारा 3 में निर्दिष्ट सभी या किन्हीं विषयों की बाबत नियम बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियमों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात् :–

(क) विभिन्न क्षेत्रों और प्रयोजनों के लिए वायु, जल या मृदा की क्वालिटी के मानक ;

(ख) भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के लिए विभिन्न पर्यावरण प्रदूषकों की (जिनके अंतर्गत शोर भी है) सांद्रता की अधिकतम अनुज्ञेय सीमा ;

(ग) परिसंकटमय पदार्थों के हथालने के लिए प्रक्रिया और रक्षोपाय ;

---

[1] 2010 के अधिनियम सं. 19 की धारा 36 और अनुसूची 3 द्वारा अंत:स्थापित ।

(घ) भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में परिसंकटमय पदार्थों के हथालने पर प्रतिषेध और निर्बन्धन ;

(ङ) भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में प्रक्रिया और संक्रियाएं चलाने वाले उद्योगों के अवस्थान पर प्रतिषेध और निर्बन्धन ;

(च) ऐसी दुर्घटनाओं के निवारण के लिए जिससे पर्यावरण प्रदूषण हो सकता है और ऐसी दुर्घटनाओं के लिए उपचार उपायों का उपबंध करने के लिए प्रक्रिया और रक्षोपाय ।

अध्याय 3

पर्यावरण प्रदूषण का निवारण, नियंत्रण और उपशमन

7. उद्योग चलाने, संक्रिया, आदि करने वाले व्यक्तियों द्वारा मानकों से अधिक पर्यावरण प्रदूषकों का उत्सर्जन या निस्सारण न होने देना – कोई ऐसा व्यक्ति, जो कोई उद्योग चलाता है या कोई संक्रिया या प्रक्रिया करता है, ऐसे मानकों से अधिक जो विहित किए जाएं, किसी पर्यावरण प्रदूषक का निस्सारण या उत्सर्जन नहीं करेगा अथवा निस्सारण या उत्सर्जन करने की अनुज्ञा नहीं देगा ।

8. परिसंकटमय पदार्थों को हथालने वाले व्यक्तियों द्वारा प्रक्रिया संबंधी रक्षोपायों का पालन किया जाना – कोई व्यक्ति किसी परिसंकटमय पदार्थ को ऐसी प्रक्रिया के अनुसार और ऐसे रक्षोपायों का अनुपालन करने के पश्चात् ही, जो विहित किए जाएं, हथालेगा या हथालने देगा, अन्यथा नहीं ।

9. कुछ मामलों में प्राधिकरणों और अभिकरणों को जानकारी का दिया जाना – (1) जहां किसी दुर्घटना या अन्य अप्रत्याशित कार्य या घटना के कारण किसी पर्यावरण प्रदूषक का निस्सारण विहित मानकों से अधिक होता है या होने की आशंका है वहां ऐसे निस्सारण के लिए उत्तरदायी व्यक्ति और उस स्थान का, जहां ऐसा निस्सारण होता है या होने की आशंका है, भारसाधक व्यक्ति, ऐसे निस्सारण के परिणामस्वरूप हुए पर्यावरण प्रदूषण का निवारण करने या उसे कम करने के लिए आबद्ध होगा, और ऐसे प्राधिकरणों को या अभिकरणों को जो विहित किए जाएं, –

(क) ऐसी घटना के तथ्य की या ऐसी घटना होने की आशंका की जानकारी तुरन्त देगा ; और

(ख) यदि अपेक्षा की जाए तो, सभी सहायता देने के लिए आबद्ध होगा ।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट प्रकार की किसी घटना के तथ्य की या उसकी आशंका के संबंध में सूचना की प्राप्ति पर चाहे ऐसी सूचना उस उपधारा के अधीन जानकारी द्वारा मिले या अन्यथा, उपधारा (1) में निर्दिष्ट प्राधिकरण या अभिकरण, यावत्साध्य शीघ्र, ऐसे उपचारी उपाय कराएंगे जो पर्यावरण प्रदूषण का निवारण करने या उसे कम करने के लिए आवश्यक हैं ।

(3) उपधारा (2) में निर्दिष्ट उपचारी उपाय करने के संबंध में किसी प्राधिकरण या अभिकरण द्वारा उपगत व्यय, यदि कोई हों, उस तारीख से जब व्ययों के लिए मांग की जाती है उस तारीख तक के लिए जब उनका संदाय कर दिया जाता है, ब्याज सहित (ऐसी उचित दर पर जो सरकार, आदेश द्वारा, नियत करे) ऐसे प्राधिकरण या अभिकरण द्वारा संबंधित व्यक्ति से भू-राजस्व की बकाया या लोक मांग के रूप में वसूल किए जा सकेंगे ।

10. प्रवेश और निरीक्षण की शक्तियां – (1) इस धारा के उपबंधों के अधीन रहते हुए, केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त सशक्त किसी व्यक्ति को यह अधिकार होगा कि वह सभी युक्तियुक्त समयों पर ऐसी सहायता के साथ जो वह आवश्यक समझे किसी स्थान में निम्नलिखित प्रयोजन के लिए प्रवेश करे, अर्थात् :–

(क) उसे सौंपे गए केन्द्रीय सरकार के कृत्यों में से किसी का पालन करना ;

(ख) यह अवधारित करने के प्रयोजन के लिए कि क्या ऐसे किन्हीं कृत्यों का पालन किया जाना है और यदि हां तो किस रीति से किया जाना है या क्या इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियमों के किन्हीं उपबंधों का या इस अधिनियम के अधीन

तामील की गई सूचना, निकाले गए आदेश, दिए गए निर्देश या अनुदत्त प्राधिकार का पालन किया जा रहा है या किया गया है ;

(ग) किसी उपस्कर, औद्योगिक संयंत्र, अभिलेख, रजिस्टर, दस्तावेज या किसी अन्य सारवान् पदार्थ की जांच या परीक्षा करने के प्रयोजन के लिए अथवा किसी ऐसे भवन की तलाशी लेने के लिए, जिसके संबंध में उसके पास यह विश्वास करने का कारण है कि उसके भीतर इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियमों के अधीन कोई अपराध किया गया है या किया जा रहा है या किया जाने वाला है और ऐसे किसी उपस्कर, औद्योगिक संयंत्र, अभिलेख, रजिस्टर, दस्तावेज या अन्य सारवान् पदार्थ का उस दशा में अभिग्रहण करने के लिए, जब उसके पास यह विश्वास करने का कारण है कि उससे इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियमों के अधीन दंडनीय किसी अपराध के किए जाने का साक्ष्य दिया जा सकेगा अथवा ऐसा अभिग्रहण पर्यावरण प्रदूषण का निवारण करने या उसे कम करने के लिए आवश्यक है ।

(2) प्रत्येक व्यक्ति जो कोई उद्योग चलाता है, कोई संक्रिया या प्रक्रिया करता है या कोई परिसंकटमय पदार्थ हथालता है, ऐसे व्यक्ति को सभी सहायता देने के लिए आबद्ध होगा, जिसे उपधारा (1) के अधीन केन्द्रीय सरकार ने उस उपधारा के अधीन कृत्यों को करने के लिए सशक्त किया है और यदि वह किसी युक्तियुक्त कारण या प्रतिहेतु के बिना ऐसा करने में असफल रहेगा तो वह इस अधिनियम के अधीन अपराध का दोषी होगा ।

(3) यदि कोई व्यक्ति उपधारा (1) के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा सशक्त किसी व्यक्ति को, उसके कृत्यों के निर्वहन में जानबूझकर विलम्ब करेगा या बाधा पहुंचाएगा तो वह इस अधिनियम के अधीन अपराध का दोषी होगा ।

(4) दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के उपबन्ध या जम्मू-कश्मीर राज्य या किसी ऐसे क्षेत्र में जिसमें वह संहिता प्रवृत्त नहीं है, उस राज्य या क्षेत्र में प्रवृत्त किसी तत्स्थानी विधि के उपबन्ध, जहां

तक हो सके, इस धारा के अधीन किसी तलाशी या अभिग्रहण को वैसे ही लागू होंगे जैसे वे, यथास्थिति, उक्त संहिता की धारा 94 के अधीन या उक्त विधि के तत्स्थानी उपबन्ध के अधीन जारी किए गए वारण्ट के प्राधिकार के अधीन की गई किसी तलाशी या अभिग्रहण को लागू होते हैं ।

11. नमूने लेने की शक्ति और उसके संबंध में अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया – (1) केन्द्रीय सरकार या उसके द्वारा इस निमित्त सशक्त किसी अधिकारी को विश्लेषण के प्रयोजन के लिए किसी कारखाने, परिसर या अन्य स्थान से वायु, जल, मृदा या अन्य पदार्थ के नमूने ऐसी रीति से लेने की शक्ति होगी, जो विहित की जाए ।

(2) उपधारा (1) के अधीन लिए गए किसी नमूने के किसी विश्लेषण का परिणाम किसी विधिक कार्यवाही में साक्ष्य में तब तक ग्राह्य नहीं होगा जब तक उपधारा (3) और उपधारा (4) के उपबंधों का अनुपालन नहीं किया जाता है ।

(3) उपधारा (4) के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, उपधारा (1) के अधीन नमूना लेने वाला व्यक्ति –

(क) इस प्रकार विश्लेषण कराने के अपने आशय की सूचना की ऐसे प्ररूप में जो विहित किया जाए, अधिष्ठाता या उसके अभिकर्ता या उस स्थान के भारसाधक व्यक्ति पर तुरन्त तामील करेगा ;

(ख) अधिष्ठाता या उसके अभिकर्ता या व्यक्ति की उपस्थिति में विश्लेषण के लिए नमूना लेगा ;

(ग) नमूने को आधान या आधानों में रखवाएगा जिसे चिह्नित और सील बन्द किया जाएगा और उस पर नमूना लेने वाला व्यक्ति और अधिष्ठाता या उसका अभिकर्ता या व्यक्ति दोनों हस्ताक्षर करेंगे ;

(घ) आधान या आधानों को धारा 12 के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थापित या मान्यताप्राप्त प्रयोगशाला को अविलम्ब भेजेगा ।

(4) जब उपधारा (1) के अधीन विश्लेषण के लिए कोई नमूना लिया जाता है और नमूना लेने वाला व्यक्ति अधिष्ठाता या उसके अभिकर्ता या व्यक्ति पर उपधारा (3) के खंड (क) के अधीन सूचना की तामील करता है तब –

(क) ऐसे मामले में जहां अधिष्ठाता, उसका अभिकर्ता या व्यक्ति जानबूझकर अनुपस्थित रहता है वहां नमूना लेने वाला व्यक्ति विश्लेषण के लिए नमूना आधान या आधानों में रखवाने के लिए लेगा, जिसे चिह्नित और सील बन्द किया जाएगा और नमूना लेने वाला व्यक्ति भी उस पर हस्ताक्षर करेगा ; और

(ख) ऐसे मामले में जहां नमूना लिए जाने के समय अधिष्ठाता या उसका अभिकर्ता या व्यक्ति उपस्थित रहता है, किन्तु उपधारा (3) के खंड (ग) के अधीन अपेक्षित रूप में नमूने के चिह्नित और सील बन्द आधान या आधानों पर हस्ताक्षर करने से इनकार करता है वहां चिह्नित और सील बन्द आधान या आधानों पर नमूना लेने वाला व्यक्ति हस्ताक्षर करेगा,

और नमूना लेने वाला व्यक्ति आधान और आधानों को धारा 12 के अधीन स्थापित या मान्यताप्राप्त प्रयोगशाला को विश्लेषण के लिए अविलम्ब भेजेगा और ऐसा व्यक्ति धारा 13 के अधीन नियुक्त या मान्यताप्राप्त सरकारी विश्लेषक को अधिष्ठाता या उसके अभिकर्ता या व्यक्ति के, यथास्थिति, जानबूझकर अनुपस्थित रहने अथवा आधान या आधानों पर हस्ताक्षर करने से उसके इनकार करने के बारे में लिखित जानकारी देगा ।

12. पर्यावरण प्रयोगशालाएं – (1) केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, –

(क) एक या अधिक पर्यावरण प्रयोगशालाएं स्थापित कर सकेगी ;

(ख) इस अधिनियम के अधीन किसी पर्यावरण प्रयोगशाला को सौंपे गए कृत्य करने के लिए एक या अधिक प्रयोगशालाओं या संस्थाओं को पर्यावरण प्रयोगशालाओं के रूप में मान्यता दे सकेगी ।

(2) केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्‌वारा, निम्नलिखित को विनिर्दिष्ट करने के लिए नियम बना सकेगी, अर्थात् :–

(क) पर्यावरण प्रयोगशाला के कृत्य ;

(ख) विश्लेषण या परीक्षण के लिए वायु, जल, मृदा या अन्य पदार्थ के नमूने उक्त प्रयोगशाला को भेजने के लिए प्रक्रिया, उस पर प्रयोगशाला की रिपोर्ट का प्ररूप और ऐसी रिपोर्ट के लिए संदेय फीस ;

(ग) ऐसे अन्य विषय जो उस प्रयोगशाला को अपने कृत्य करने के लिए समर्थ बनाने के लिए आवश्यक या समीचीन हैं ।

13. सरकारी विश्लेषक – केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्‌वारा, ऐसे व्यक्तियों को, जिन्हें वह ठीक समझे और जिनके पास विहित अर्हताएं हैं, धारा 12 की उपधारा (1) के अधीन स्थापित या मान्यताप्राप्त किसी पर्यावरण प्रयोगशाला को विश्लेषण के लिए भेजे गए वायु, जल, मृदा या अन्य पदार्थ के नमूनों के विश्लेषण के प्रयोजन के लिए सरकारी विश्लेषक नियुक्त कर सकेगी या मान्यता दे सकेगी ।

14. सरकारी विश्लेषकों की रिपोर्टें – किसी ऐसी दस्तावेज का, जिसका किसी सरकारी विश्लेषक द्‌वारा हस्ताक्षरित रिपोर्ट होना तात्पर्यित है, इस अधिनियम के अधीन किसी कार्यवाही में उसमें कथित तथ्यों के साक्ष्य के रूप में उपयोग किया जा सकेगा ।

15. अधिनियमों तथा नियमों, आदेशों और निदेशों के उपबंधों के उल्लंघन के लिए शास्ति – (1) जो कोई इस अधिनियम के उपबन्धों या इसके अधीन बनाए गए नियमों या निकाले गए आदेशों या दिए गए निदेशों में से किसी का पालन करने में असफल रहेगा या उल्लंघन करेगा, वह ऐसी प्रत्येक असफलता या उल्लंघन के संबंध में कारावास से, जिसकी अवधि पांच वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, जो एक लाख रुपए तक का हो सकेगा, या दोनों से, और यदि ऐसे असफलता या उल्लंघन चालू रहता है तो अतिरिक्त जुर्माने से, जो ऐसी प्रथम असफलता या उल्लंघन के लिए दोषसिद्धि के पश्चात् ऐसे प्रत्येक दिन के

लिए जिसके दौरान असफलता या उल्लंघन चालू रहता है, पांच हजार रुपए तक का हो सकेगा, दण्डनीय होगा ।

(2) यदि उपधारा (1) में निर्दिष्ट असफलता या उल्लंघन दोषसिद्धि की तारीख के पश्चात्, एक वर्ष की अवधि से आगे भी चालू रहता है तो अपराधी, कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष तक की हो सकेगी, दण्डनीय होगा ।

16. कंपनियों द्‌वारा अपराध – (1) जहां इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध किसी कंपनी द्‌वारा किया गया है वहां प्रत्येक व्यक्ति जो उस अपराध के किए जाने के समय उस कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उस कंपनी का सीधे भारसाधक और उसके प्रति उत्तरदायी था और साथ ही वह कंपनी भी, ऐसे अपराध के दोषी समझे जाएंगे और तद्‌नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने के भागी होंगे :

परन्तु इस उपधारा की कोई बात किसी ऐसे व्यक्ति को इस अधिनियम के अधीन उपबंधित किसी दण्ड का भागी नहीं बनाएगी, यदि वह यह साबित कर देता है कि अपराध उसकी जानकारी के बिना किया गया था या उसने ऐसे अपराध के किए जाने का निवारण करने के लिए सब सम्यक् तत्परता बरती थी ।

(2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, जहां इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध किसी कंपनी द्‌वारा किया गया है और यह साबित हो जाता है कि वह अपराध कंपनी के किसी निदेशक, प्रबंधक, सचिव या अन्य अधिकारी की सहमति या मौनानुकूलता से किया गया है या उस अपराध का किया जाना उसकी किसी उपेक्षा के कारण माना जा सकता है वहां ऐसा निदेशक, प्रबंधक, सचिव या अन्य अधिकारी भी उस अपराध का दोषी समझा जाएगा और तद्‌नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने का भागी होगा ।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजनों के लिए, –

(क) "कंपनी" से कोई निगमित निकाय अभिप्रेत है और इसके अन्तर्गत फर्म या व्यष्टियों का अन्य संगम है ; तथा

(ख) फर्म के संबंध में, “निदेशक” से उस फर्म का भागीदार अभिप्रेत है ।

17. सरकारी विभागों द्‌वारा अपराध – (1) जहां इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध सरकार के किसी विभाग द्‌वारा किया गया है वहां विभागाध्यक्ष उस अपराध का दोषी समझा जाएगा और तद्‌नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने का भागी होगा :

परन्तु इस धारा की कोई बात किसी विभागाध्यक्ष को दंड का भागी नहीं बनाएगी, यदि वह यह साबित कर देता है कि अपराध उसकी जानकारी के बिना किया गया था या उसने ऐसे अपराध के किए जाने का निवारण करने के लिए सब सम्यक्‌ तत्परता बरती थी ।

(2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, जहां इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध किसी विभागाध्यक्ष द्‌वारा किया गया है और यह साबित हो जाता है कि वह अपराध विभागाध्यक्ष से भिन्न किसी अधिकारी की सहमति या मौनानुकूलता से किया गया है या उस अपराध का किया जाना उसकी किसी उपेक्षा के कारण माना जा सकता है वहां ऐसा अधिकारी भी उस अपराध का दोषी समझा जाएगा और तद्‌नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने का भागी होगा ।

अध्याय 4

प्रकीर्ण

18. सद्भावपूर्वक की गई कार्रवाई के लिए संरक्षण – इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियमों या निकाले गए आदेशों या दिए गए निदेशों के अनुसरण में सद्भावपूर्वक की गई या की जाने के लिए आशयित किसी बात के लिए कोई वाद, अभियोजन या अन्य विधिक कार्यवाही, सरकार या सरकार के किसी अधिकारी या अन्य कर्मचारी अथवा इस अधिनियम के अधीन गठित किसी प्राधिकरण या ऐसे प्राधिकरण के किसी सदस्य, अधिकारी या अन्य कर्मचारी के विरुद्ध नहीं होगी ।

19. अपराधों का संज्ञान – कोई न्यायालय इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध का संज्ञान निम्नलिखित द्वारा किए गए परिवाद पर ही करेगा, अन्यथा नहीं, अर्थात् :–

(क) केन्द्रीय सरकार या उस सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत कोई प्राधिकरण या अधिकारी ; या

(ख) कोई ऐसा व्यक्ति, जिसने अभिकथित अपराध की और परिवाद करने के अपने आशय की, विहित रीति से, कम से कम साठ दिन की सूचना, केन्द्रीय सरकार या पूर्वोक्त रूप में प्राधिकृत प्राधिकरण या अधिकारी को दे दी है ।

20. जानकारी, रिपोर्टें या विवरणियां – केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों के संबंध में समय-समय पर, किसी व्यक्ति, अधिकारी, राज्य सरकार या अन्य प्राधिकरण से अपने को या किसी विहित प्राधिकरण या अधिकारी से रिपोर्टें, विवरणियां, आंकड़े, लेखे और अन्य जानकारी देने की अपेक्षा कर सकेगी और ऐसा व्यक्ति, अधिकारी, राज्य सरकार या अन्य प्राधिकरण ऐसा करने के लिए आबद्ध होगा ।

21. धारा 3 के अधीन गठित प्राधिकरण के सदस्यों, अधिकारियों और कर्मचारियों का लोक सेवक होना – धारा 3 के अधीन गठित प्राधिकरण के, यदि कोई हो, सभी सदस्य और ऐसे प्राधिकरण के सभी अधिकारी और अन्य कर्मचारी जब वे इस अधिनियम के किसी उपबन्ध या इसके अधीन बनाए गए किसी नियम या निकाले गए किसी आदेश या दिए गए निदेश के अनुसरण में कार्य कर रहे हों या जब उसका ऐसा कार्य करना तात्पर्यित हो, भारतीय दण्ड संहिता (1860 का 45) की धारा 21 के अर्थ में लोक सेवक समझे जाएंगे ।

22. अधिकारिता का वर्जन – किसी सिविल न्यायालय को केन्द्रीय सरकार या किसी अन्य प्राधिकरण या अधिकारी द्वारा, इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त किसी शक्ति के अनुसरण में या इसके अधीन कृत्यों के संबंध में की गई किसी बात, कार्रवाई या निकाले गए आदेश या दिए गए

निदेश के संबंध में कोई वाद या कार्यवाही ग्रहण करने की अधिकारिता नहीं होगी ।

23. प्रत्यायोजन करने की शक्ति – धारा 3 की उपधारा (3) के उपबन्धों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, ऐसी शर्तों और निर्बन्धनों के अधीन रहते हुए, जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किए जाएं, इस अधिनियम के अधीन अपनी ऐसी शक्तियों और कृत्यों को [उस शक्ति को छोड़कर जो धारा 3 की उपधारा (3) के अधीन किसी प्राधिकरण का गठन करने और धारा 25 के अधीन नियम बनाने के लिए है], जो वह आवश्यक या समीचीन समझे, किसी अधिकारी, राज्य सरकार या प्राधिकरण को प्रत्यायोजित कर सकेगी ।

24. अन्य विधियों का प्रभाव – (1) उपधारा (2) के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, इस अधिनियम और इसके अधीन बनाए गए नियमों या निकाले गए आदेशों के उपबन्ध, इस अधिनियम से भिन्न किसी अधिनियमिति में उससे असंगत किसी बात के होते हुए भी, प्रभावी होंगे ।

(2) जहां किसी कार्य या लोप से कोई ऐसा अपराध गठित होता है जो इस अधिनियम के अधीन और किसी अन्य अधिनियम के अधीन भी दण्डनीय है वहां ऐसे अपराध का दोषी पाया गया अपराधी अन्य अधिनियम के अधीन, न कि इस अधिनियम के अधीन, दण्डित किए जाने का भागी होगा ।

25. नियम बनाने की शक्ति – (1) केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए नियम, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियमों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबन्ध किया जा सकेगा, अर्थात् :–

(क) वे मानक जिनसे अधिक पर्यावरण प्रदूषकों का धारा 7 के अधीन निस्सारण या उत्सर्जन नहीं किया जाएगा ;

(ख) वह प्रक्रिया जिसके अनुसार और वे रक्षोपाय जिनके अनुपालन में परिसंकटमय पदार्थों को धारा 8 के अधीन हथाला जाएगा या हथलवाया जाएगा ;

(ग) वे प्राधिकरण या अभिकरण जिनको विहित मानकों से अधिक पर्यावरण प्रदूषकों के निस्सारण होने की या उसके होने की आशंका के तथ्य की सूचना दी जाएगी और जिनको धारा 9 की उपधारा (1) के अधीन सभी सहायता दिया जाना आबद्धकर होगा ।

(घ) वह रीति जिससे विश्लेषण के प्रयोजनों के लिए वायु, जल, मृदा या अन्य पदार्थों के नमूने धारा 11 की उपधारा (1) के अधीन लिए जाएंगे ;

(ङ) वह प्ररूप जिसमें किसी नमूने का विश्लेषण कराने के आशय की सूचना धारा 11 की उपधारा (3) के खण्ड (क) के अधीन दी जाएगी ;

(च) पर्यावरण प्रयोगशालाओं के कृत्य ; विश्लेषण या परीक्षण के लिए वायु, जल, मृदा और अन्य पदार्थों के नमूने ऐसी प्रयोगशालाओं को भेजने के लिए प्रक्रिया ; प्रयोगशाला रिपोर्ट का प्ररूप ; ऐसी रिपोर्ट के लिए संदेय फीस और धारा 12 की उपधारा (2) के अधीन अपने कृत्य करने के लिए प्रयोगशालाओं को समर्थ बनाने के लिए अन्य विषय ;

(छ) धारा 13 के अधीन वायु, जल, मृदा या अन्य पदार्थों के नमूनों के विश्लेषण के प्रयोजन के लिए नियुक्त या मान्यताप्राप्त सरकारी विश्लेषक की अर्हताएं ;

(ज) वह रीति जिससे अपराध की और केन्द्रीय सरकार को परिवाद करने के आशय की सूचना धारा 19 के खण्ड (ख) के अधीन दी जाएगी ;

(झ) वह प्राधिकरण या अधिकारी जिसको रिपोर्टें, विवरणियां, आंकड़े, लेखे और अन्य जानकारी धारा 20 के अधीन दी जाएगी ;

(ञ) कोई अन्य विषय जो विहित किया जाना अपेक्षित है या किया जाए ।

26. इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों का संसद् के समक्ष रखा जाना – इस अधिनियम के अधीन बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा । यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा । किन्तु नियम के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय (द्वितीय संस्करण) – डा. एस. सी. खरे – 1996	273	115	29.00
2.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) – विधि साहित्य प्रकाशन – 2000	209	225	57.00
3.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	145.00
4.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–
5.	भारत का सांविधानिक इतिहास - (103वां संशोधन तक) - श्री चन्द्रशेखर मिश्र	340	325	–
6.	भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व - डा. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी	906	750	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. विधि शब्दावली	सातवां संस्करण, 2015	कीमत रु. 375/-
2. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2019	कीमत रु. 1,900/-
3. भारत का संविधान	2021	कीमत रु. 300/-

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

Website : www.lawmin.nic.in

Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं - **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका** और **उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः सिविल और दांडिक के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को आन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष **:** 011-23385259, 23387589, फैक्स **:** 011-23387589, ई-मेल **:** am.vsp-molj@gov.in